आजादी का अमृत महोत्सव

G20 भारत 2023 INDIA

भाकृअनुप
ICAR

वर्ष-18 अंक (1) जनवरी - जून, 2024

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

ICAR-Indian Institute of Vegetable Research

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

वाराणसी - 221 305 (उत्तर प्रदेश)

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-18 अंक (1) जनवरी - जून, 2024

सर्वाधिकार
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

संरक्षक एवं प्रकाशक

नागेन्द्र राय, निदेशक

सम्पादक मण्डल

- डी. आर. भारद्वाज
- हरे कृष्ण
- इन्दीवर प्रसाद
- रामेश्वर सिंह
- नीरज सिंह
- सुदर्शन मौर्य
- आत्मानंद त्रिपाठी
- जगेश कुमार तिवारी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

उद्घोषणा

© भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शुद्ध उद्धरण : डी.आर. भारद्वाज, नीरज सिंह, हरे कृष्ण, सुदर्शन मौर्य, इन्दीवर प्रसाद, आत्मानंद त्रिपाठी, रामेश्वर सिंह एवं जगेश कुमार तिवारी (2024) सब्जी किरण (राजभाषा पत्रिका) 18 (I), भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, 100 पृष्ठ

अपने लेख एवं सुझाव (यूनीकोड के 14 शब्दाकार में) भेजें

संपादक, सब्जी किरण
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)
ई–मेल : director.iivr@icar.gov.in, वेबसाइटः www.iivr.org.in
मो. : 9415301823, 9935490563

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य (वर्ष 2024)

डॉ. नागेन्द्र राय	अध्यक्ष
डॉ. अनंत बहादुर	सदस्य
डॉ. अरविन्द नाथ सिंह	सदस्य
डॉ. राजेश कुमार	सदस्य
डॉ. डी.आर. भारद्वाज	सदस्य
डॉ. जगेश कुमार तिवारी	सदस्य
डॉ. इन्दीवर प्रसाद	सदस्य
डॉ. स्वाति शर्मा	सदस्य
डॉ. सुजान मजूमदार	सदस्य
डॉ. रामेश्वर सिंह	सदस्य
श्री राजेश कुमार राय	सदस्य सचिव

प्रकाशक

भाकृअनुप ICAR

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
ICAR-Indian Institute of Vegetable Sciences
Post Bag No. - 01, Post Office-Jakhini
(Shahanshahpur), Varanasi-221 305 (U.P.)

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

निदेशक की कलम से ....

सब्जियों का उत्पादन एवं बाजार में उपलब्धता वर्ष के प्रत्येक महीने बदलती रहती है। किसी महीने इनकी इतनी अधिक उपज हो जाती है कि किसानों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता है, जबकि किसी महीने में मौसम अनुकूल न होने से उपलब्धता इतनी कम हो जाती है कि उपभोक्ता को अधिक मूल्य देना पड़ता है। इस समस्या को दूर करने के लिए सब्जियों की ऐसी किस्मों को उगाना आवश्यक हो जाता है जिसकी उपलब्धता अधिक होने पर निर्यात किया जा सके। इसके साथ ही मौसम अनुकूल न होने पर संरक्षित दशा, जैसे-जाड़े के मौसम में उष्मा प्रदान करने वाले पॉलीहाउस एवं गर्मी के मौसम में हरे एग्रोनेट से ढककर उत्पादन किया जाये जिससे सब्जियों की उपलब्धता को बढ़ाया जा सके। ऐसी संरचना के माध्यम से उपभोक्ता को पूरे वर्ष एक समान मूल्य पर सब्जियाँ उपलब्ध होती रहेंगी। इसके अलावा तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन जैसे- सब्जियों पर शैलेक की परत चढ़ाना एवं सब्जियों की निर्जलीकरण (आस्मोटिक ड्राइंग) द्वारा माँग बढ़ने पर आपूर्ति कर उचित मूल्य प्राप्त किया जा सकता है। किसानों की आय बढ़ाने एवं उपभोक्ताओं को रसायन अवशेष रहित सब्जियों की आपूर्ति के लिए प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने से लागत घटती है एवं उत्पादन स्तर रासायनिक खेती के बराबर होने से आय में वृद्धि होती है। संस्थान द्वारा संरक्षित खेती, ग्राफ्टिंग तकनीकी, प्राकृतिक कृषि एवं जैविक व अजैविक तनावों की सहनशील किस्मों के विकास पर शोध कार्य किया जा रहा है। शोध उपरान्त ग्राफ्टिंग के लिए मूलवृंत की पहचान, जैविक कृषि के लिए सूक्ष्म तत्वों का घोल एवं 130 से अधिक संकरों एवं मुक्त परागित किस्मों का विकास किया गया है। देश में सिंचाई के लिए सबसे अधिक उपयोग भू-गर्भ जल का होता है और भू-गर्भ जल का स्रोत दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा है। जल उपयोग दक्षता वृद्धि के लिए कम जल से अधिक उत्पादन लेने के लिए टपक सिंचाई, पलवार का प्रयोग एवं फसल अवशेषों को मृदा में मिलाना, खेत की मेढ़बंदी आदि करके तकनीकियों द्वारा जल संरक्षित करके अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। तकनीकी हस्तान्तरण हेतु संस्थान द्वारा समय-समय पर प्रशिक्षण, किसान मेला, किसान गोष्ठी एवं वाह्य परियोजनाओं के सहायता से किसानों के प्रक्षेत्र पर उपयोग कर प्रदर्शित किया जाता है। उन्नत किस्मों के बीज प्रदर्शन के लिये किसानों को दिये जाते हैं। संस्थान के आस-पास के जिलों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति परियोजना के अन्तर्गत लाभान्वित किसानों के जीवन स्तर के उन्नयन हेतु उन्नतशील बीज, उपकरण, पौध संरक्षण घटक जैसे- *टाइकोड्र्मा, स्यूडोमोनास* आदि निःशुल्क दिये जाते हैं जिससे उनकी कृषि एवं सब्जी उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि देखने को मिल रही है।

संस्थान से प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'सब्जी किरण' के इस अंक में विकसित उन्नतशील किस्मों एवं तकनीकों के बारे में विस्तृत जानकारी दी जा रही है जो किसानों, छात्रों, अध्यापकों एवं वैज्ञानिकों के लिए उपयोगी साबित होगी।

नागेन्द्र राय
निदेशक

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-18 अंक (1) जनवरी - जून, 2024

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	सब्जियों की प्राकृतिक खेती	रामेश्वर सिंह एवं सिद्धार्थ कुमार सिंह	1
2.	उत्तम स्वास्थ्य के लिये वानस्पतिक प्रोटीन का महत्व	ज्योति देवी, विद्या सागर, अजय कुमार शर्मा, नकुल गुप्ता एवं ज्योति सिंह	3
3.	भिण्डी निर्यात को प्रोत्साहन	बृजेश कुमार मौर्या, प्रदीप कर्मकार, विद्या सागर, हिमाशु सिंह, डी. पी. सिंह, सौरभ सिंह एवं राजीव कुमार	6
4.	प्रसंस्कृत चेरी टमाटर किशमिश	स्वाति शर्मा, श्रेया पँवार, हरे कृष्ण, एस. के. सिंह, अनंत बहादुर, आत्मानन्द त्रिपाठी एवं नागेन्द्र राय	8
5.	लहसुन में मूलग्रन्थि रोगः समस्या एवं प्रबन्धन	आर.सी. गुप्ता एवं पी.के. गुप्ता	11
6.	पूर्वांचल में मिर्च की खेती से आर्थिक समृद्धिः सफलता की गाथा	इन्दीवर प्रसाद, राजेश कुमार, गोविन्द पाल, नीरज सिंह, शुभदीप रॉय एवं इन्द्रेश कुमार तिवारी	13
7.	औषधीय गुणों का स्रोतः कुम्हड़ा	शुभम तिवारी, सुधाकर पाण्डेय, त्रिभुवन चौबे, विद्या सागर, ज्योति देवी एवं विकास सिंह	15
8.	औषधीय एवं सुंगधित पौधों की व्यावसायिक खेती के अवसर एवं लाभ	राजन सिंह, सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार एवं यू.एस. गौतम	18
9.	बीज प्रौद्योगिकी : नये आयाम	राघवेन्द्र प्रताप सिंह, राजन सिंह, सौरभ सिंह, अनूप प्रताप सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं अनीष कुमार सिंह	23
10.	जलवायु परिवर्तन के युग में टिकाऊ कृषि	अनूप प्रताप सिंह, राजन सिंह, राघवेन्द्र प्रताप सिंह, शिवम् कुमार सिंह एवं अनीष कुमार सिंह	26
11.	रंग-बिरंगी फूलगोभी की खेती : पोषण की खान	अभिषेक प्रताप सिंह, कुमारी अमृता सिंहा, धीरू कुमार तिवारी, रीता देवी यादव, चेलपूरी रामूलू, जगपाल, सौरभ दूबे एवं अभिषेक रंजन	29
12.	तोरई का संकर बीज उत्पादन	प्रियंका राजभर एवं रमेश राजभर	31
13.	ड्रैगन फ्रूटः स्वास्थ्य एवं समृद्धि	राजन सिंह, डी.पी. सिंह एवं यू.एस. गौतम	34
14.	कीटनाशकों का प्रयोगः आवश्यक सावधानियाँ	सतीश शर्मा, एस.के. अर्सिया एवं एम.के.तिवारी	39

15.	सब्जियों की अगेती उपज हेतु लो-टनल तकनीक अपनायें	जसवंत प्रजापति, अभिनव यादव, अर्चना उपाध्याय, अनीष कुमार सिंह, अनंत बहादुर एवं राहुल कुमार	41
16.	हाईटेक नर्सरीः आज की आवश्यकता	हरे कृष्ण, शुभम कुमार तिवारी एवं अनीष कुमार सिंह	45
17.	शुष्क क्षेत्रों के लिए खेजड़ी एक पोषकीय सब्जी	सुमन पूनियाँ, आस्तिक झा, निहारिका सिंह एवं अखिल कुमार चौधरी	48
18.	उच्च तकनीक से सब्जियों की पौध तैयार करना	राजेश लाठर, सुरेश, श्री देवी एवं गुरनाम सिंह	52
19.	स्पिरुलिना सायनोबैक्टीरियम का पोषकीय एवं औषधीय महत्व	प्रवीण सिंह, सौरभ सिंह, राजन सिंह, भानु प्रकाश सिंह, शुभम तिवारी एवं सुनील कुमार सिंह	54
20.	सब्जी फसलों में संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग	ओम प्रकाश, ब्रह्म प्रकाश, पल्लवी यादव, कामिनी सिंह एवं मुकुन्द कुमार	57
21.	खरबूजा में विषाणु जनित रोगों का प्रबंधन	हिमांशु सिंह, प्रदीप कर्मकार, अजित सिंह, बृजेश कुमार मौर्या, परगट सिंह, सौरभ सिंह एवं राजीव कुमार	61
22.	सब्जियों के रोग एवं उनका प्रबंधन	नितिका कुमारी एवं ऋतु मावर	64
23.	कद्दूवर्गीय सब्जियों में फल मक्खी कीट का प्रबंधन	विनीता राजपूत, सुनील कुमार एवं केतन	68
24.	मशरूम के अचार एवं व्यंजन	सतीश शर्मा, एम.के. तिवारी एवं एस.के. अर्सिया	70
25.	सब्जी ग्वार के मुख्य रोग एवं उनका प्रबंधन	विनय कुमार कर्दम, नितिका कुमारी एवं ऋतु मावर	73
26.	जैव प्रौद्योगिकी में ऊतक संवर्धन तकनीकी का महत्व	राघवेन्द्र प्रताप सिंह. राजन सिंह एवं अनूप प्रताप सिंह	76
27.	मृदा सौर्यीकरण	अभिनय, नीरज सिंह, शरद शर्मा, सुजन मजूमदर, सुरेन्द्र नारायण सिंह एवं डी.आर. भारद्वाज	78
28.	सब्जियों में जलवायु परिवर्तन व पोषक तत्वों से उत्पन्न दैहिक विकृतियाँ एवं उनका प्रबंधन	डी.आर. भारद्वाज, केशव कान्त गौतम, राजीव कुमार, अनुराग चौरसिया एवं संदीप कुमार	82
29.	कृत्रिम मेधा के युग में भारतीय प्राचीन परम्परागत मौसम पूर्वानुमान	आत्मानन्द त्रिपाठी	87
30.	उपयोगी शब्दकोष	संकलनकर्ता- रामेश्वर सिंह	89
31.	संस्थान की गतिविधियाँ		91
32.	समाचार पत्रों से-------		93

सब्जियों की प्राकृतिक खेती

रामेश्वर सिंह एवं सिद्धार्थ कुमार सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

प्राकृतिक खेती का अभिप्राय शून्य लागत से है जिसे किसान गाँव में उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग उर्वरता बढ़ाने एवं फसल सुरक्षा के लिए करता है। प्राकृतिक खेती की स्वीकार्यता व धारणा नई अवस्था शैशवकाल में है तथा धीरे-धीरे किसानों में इसकी स्वीकार्यता बढ़ेगी। उपलब्ध संसाधनों में गाय के उत्पाद एवं वनस्पतियाँ प्रमुख हैं। देश में अनेक राज्य प्राकृतिक खेती अपना रहे हैं एवं अनकों सफल माडल विकसित किये हैं। इस प्रकार की खेती करने में महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं केरल प्रमुख हैं।

प्राकृतिक खेती की कर्षण क्रियायें

प्राकृतिक खेती का उद्देश्य मृदा स्वास्थ को बढ़ाना, जैव-विविधता का संरक्षण, पशुधन की बेहतरी, प्राकृतिक संसाधनों का दक्ष प्रयोग एवं पारिस्थितिकी को समृध्द करना है। मृदा की जैविक क्रियाशीलता को बढ़ाना, गुणवत्तायुक्त उत्पादन के साथ-साथ पौधों एवं पशुओं के स्वास्थ्य को भी लाभ पहुँचाना प्रमुख उद्देश्य होता है।

पशु एवं बिना पशु आधारित प्राकृतिक खेती

पशु आधारित खेती मतलब गाय आधारित खेती जो टिकाऊ कृषि की रीढ़ है। गाय आधारित खेती, प्राकृतिक खेती, प्राकृतिक संसाधनों, मृदा, वायु, जल एवं जीवों का संरक्षण करती है। इससे जल एवं बिजली की 90 प्रतिशत तक की बचत एवं लागत घट जाती है।

प्राकृतिक खेती का मूल्यांकन

आंध्र प्रदेश सरकार के 'रायथु साधिका संस्था' प्राकृतिक एवं रासायनिक विधि द्वारा किये उत्पादन परीक्षण से पता चला है कि मूंगफली में 23 प्रतिशत एवं धान में 6 प्रतिशत अधिक उपज पायी गयी है। इसी तरह विज्ञान एवं पर्यावरण केन्द्र ने 142 किसानों के प्राकृतिक खेती का परीक्षण किया और पाया कि 57 प्रतिशत किसानों के उपज में वृद्धि, 35 प्रतिशत समान उपज एवं 8 प्रतिशत किसानों की खेती की उपज रासायनिक विधि की तुलना में कम रही।

प्राकृतिक खेती के प्रमुख घटक

1. **जीवामृतः** देशी गाय का मूत्र एवं अन्य वनस्पति उत्पाद जैसे- गुड़, दाल, आटा एवं मिट्टी के मिश्रण से बनाया जाता है इसके प्रयोग से मृदा में लाभदायक सूक्ष्म जीवों की संख्या बढ़ती है। यह परम्परागत खेती से इसलिए अलग है क्योंकि इसमें गोबर या गोबर की खाद की जगह गो-मूत्र एवं अन्य वानस्पतिक उत्पाद का घोल प्रयोग किया जाता है जो मृदा में केचुओं एवं लाभदायक सूक्ष्म जीवों में वृद्धि करता है जिससे मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता स्थायी रूप से बढ़ जाती है। इसके अलावा खेत में जैविक कार्बन की मात्रा भी बढ़ती है।
2. **बीजामृतः** देशी गाय का गोबर, गो-मूत्र एवं बूझा चूना मिलाकर तैयार किया जाता है एवं इससे पौधों की जड़ों या बीज पर लेप किया जाता है जो भूमि जनित रोगों से सुरक्षा करता है। इसके प्रयोग से बीज की अंकुरण प्रतिशत भी बढ़ जाता है।
3. **पलवारः** भूमि की नमी को सुरक्षित रखने के लिए फसल अवशेष से दो पंक्तियों के बीच खाली स्थान को ढक दिया जाता है। इससे मृदा में ह्यूमस की मात्रा में वृद्धि, जल संग्रहण क्षमता में वृद्धि एवं लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं में वृद्धि पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि के साथ-साथ खरपतवार की संख्या में कमी आती है।
4. **भूमि में वायु प्रवाह (वापसा)ः** यह जीवामृत तथा पलवार के प्रयोग का परिणाम है। जीवामृत के प्रयोग एवं पलवार से मृदा संरचना में सुधार होने से तेज गति से ह्यूमस का निर्माण होता है तथा जल अधिक दिनों तक संरक्षित रहता है जिससे फसल अधिक वर्षा एवं सूखा से कम प्रभावित होती है।

प्राकृतिक खेती के सिद्धांत

प्राकृतिक खेती का मूल सिद्धांत है कि वायु, पानी तथा मृदा में सभी आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है इसलिए फसलों को किसी भी प्रकार के रासायनिक खाद की आवश्यकता नही होती है। प्राकृतिक खेती द्वारा मित्र कीटों की संख्या में वृद्धि एवं अनुकूल वातावरण का निर्माण कर फसलों

को कीटों एवं रोगों से सुरक्षित करती है जिससे कीटनाशकों एवं रोगनाशकों के प्रयोग की आवश्यकता नही होती है।

1. **अन्तर्वर्ती फसल उगाना:** मुख्य फसल की दो पंक्तियों के बीच दलहन वर्गीय फसल लेने से मृदा में नत्रजन की मात्रा की आपूर्ति होती है साथ ही साथ अतिरिक्त उत्पादन भी प्राप्त होती है।

2. **फसलों को मेढ़ पर लगाना:** नालियों में वर्षा का पानी संग्रहित होने से उपलब्धता अधिक दिनों तक बनी रहती है। अधिक वर्षा होने की स्थिति में नालियाँ जल निकास के लिए भी उपयोगी रहती है और भूगर्भ जल स्तर में सुधार में मदद मिलती है।

3. **केचुओं की सक्रियता में वृद्धि:** प्राकृतिक खेती से मृदा में केचुओं की सक्रियता में वृद्धि होती है जिससे मिट्टी की उत्पादकता एक समान बनी रहती है।

4. **गोबर:** प्राकृतिक खेती में देशी गाय का गोबर एवं मूत्र का प्रयोग उत्तम माना गया है क्योंकि इसमें लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या दूसरे किसी पशु या अन्य गायों की तुलना में अधिक होता है।

प्राकृतिक खेती हेतु उपयुक्त रोगनाशी

1. **छांछ का घोल:** देशी गाय के दूध से तैयार छांछ को खट्टा करने के लिए धूप में रखें। गर्मियों में 4-6 दिनों एवं ठण्डी में 10 दिनों के लिये घूप में रखते हैं। जब छांछ में झाग आना शुरू हो जाये तब छिड़कने के लिए प्रयोग करें। घोल बनाने के लिये 100 लीटर पानी से भरे ड्रम में 3 लीटर छांछ डालकर पानी से भर दें और अच्छे से मिला दें। तैयार घोल कवक, जीवाणु एवं विषाणु नाशक होता है एवं पौधों में प्रतिरोधी शक्ति में वृद्धि करता है।

2. **जीवामृत:** सामान्यत: प्रयोग हेतु 100 लीटर के ड्रम में 10 लीटर जीवामृत को पानी में डालकर भर दें एवं इसके बाद घोल को पूरी तरह मिलायें। यह घोल सर्वोत्तम कवक, जीवाणु व विषाणु नाशी एवं वृद्धि नियामक है।

3. **सूखी कंडी:** सामान्यत: 5-7 दिन पुराने सूखे गोबर की 3 किग्रा. मात्रा को कूटकर बारीक कर लें एवं सूती कपड़े में बाँधकर 100 लीटर के ड्रम में ऐसे लटकायें जिससे वह पानी में डूब जाये एवं 48 घंटे बाद निचोड़कर ड्रम में मिला दें। यह प्रक्रिया तीन बार इसी तरह करें इसके बाद अच्छे से मिलाकर 48 घंटे के अन्दर फसल पर छिड़काव करें। यह मिश्रण बहुत अच्छा रोगनाशी होता है।

4. **सौठास्त्र:** सामान्यत: 1 लीटर पानी में 100 ग्राम सोंठ पाउडर मिलायें और उबालकर पानी की मात्रा आधी कर लें। इसके बाद गाय का दूध दूसरे बर्तन में उबाले एवं ठण्डा कर लें। एक ड्रम में 100 लीटर पानी ले इसमें 500 मिलीलीटर सोंठ अर्क एवं 10 मिलीलीटर दूध डालकर मिलायें तथा ढक कर रखें एवं 2 घण्टे बाद कपड़े से छानकर प्रयोग करें।

5. **जीवामृत + छांछ:** इसे तैयार करने के लिये 100 लीटर के ड्रम में 8 लीटर जीवामृत एवं 3 लीटर छांछ मिला दें तथा शेष भाग में पानी मिलायें। प्रयोग हेतु घोल को छान लें एवं 48 घण्टे के अन्दर प्रयोग करें। यह सभी तरह की पौध रोगों को नियंत्रित करने की अचूक दवा है।

रोगनाशक दवाओं के प्रयोग का समय: खेत में निरीक्षण के दौरान पत्तों पर काला-पीला, लाल धब्बा, छोटा घेरा, पत्तों का जलना, मुर्झाना आदि दिखाई दें तो समझ लें रोग का संक्रमण शुरू हो गया है। इसलिये तुरन्त रोगनाशी दवा का छिड़काव करें। खेत में उगायी जाने वाली सब्जियों में रोग प्रबंधन हेतु जैविक दवाओं का छिड़काव 7-10 दिनों के अंतराल पर 2 महीने तक करें।

छिड़काव का समय: प्रत्येक अमावस्या एवं पूर्णिमा को कीटनाशी दवा का छिड़काव एवं शुक्ल पक्ष की अष्टमी को फफूंदनाशक दवा का फसलों पर छिड़काव अधिक लाभदायक होता है।

फफूंदनाशक पेस्ट तैयार करने की विधि: पानी 50 लीटर, गो-मूत्र 20 लीटर, ताजा गोबर 20 किग्रा., वृक्षों के पौधों की चटनी 10 किग्रा., हल्दी 200 ग्राम, हींग पाउडर 10 ग्राम, चिकनी मिट्टी 2.5 किग्रा. या अलसी का तेल 750 मिली.। इन सभी सामग्रियों को एक टब में घोल ले एवं जूट की बोरी से 48 घण्टे ढक दें। अब पेस्ट प्रयोग करने के लिए तैयार है। इस पेस्ट का प्रयोग पौधों की सुषुप्ता अवस्था में ही करना चाहिये। इसका प्रयोग वर्ष में चार बार करना चाहिये, प्रथम मई के तीसरे सप्ताह, दूसरा सितम्बर के अन्तिम सप्ताह, तीसरा दिसम्बर की अंतिम सप्ताह एवं चौथा अप्रैल के दूसरे सप्ताह में।

पाला से बचाव: जाड़े के मौसम में जिस दिन शाम को बारिश हो उसके दूसरे दिन सुबह खेत पर जाये जिस तरफ से हवा आ रही हो उस तरफ की मेढ़ के किनारे पेड़ पौधों की पत्तियाँ एवं गोबर के उपले जलायें जिससे लगातार धुआं निकलता है जो पत्तियों पर पतली परत बना देता है इससे फसल पाले के प्रभाव से बच जाती है। जब पौधों के पत्तों में नमी बढ़ती है तो कवक का प्रकोप अधिक होता है इसको रोकने के लिये दो कतारों के बीच फसल अवशेषों का पलवार से नमी कम हो जाती है जिससे फसल कवक संक्रमण से बच जाती है।

उत्तम स्वास्थ्य के लिये वानस्पतिक प्रोटीन का महत्व

ज्योति देवी, विद्या सागर, अजय कुमार शर्मा, नकुल गुप्ता एवं ज्योति सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

बढ़ता प्रदूषण, भाग-दौड़, मानसिक तनाव, मिलावटी खाद्य पदार्थ आदि कारणों से उत्तम स्वस्थ को बनाये रखना एक बड़ी चुनौती है। प्रतिदिन विभिन्न पोषक तत्वों से भरपूर संतुलित आहार लेना अत्यंत आवश्यक है जिसमें प्रोटीन और भी जरूरी है। यह घटक शरीर में ऊर्जा के साथ-साथ यह मांसपेशियों, हड्डियों, त्वचा, नाखून और बालों जैसे अन्य ऊतकों के विकास एवं निर्माण में भी मदद करता है। स्वस्थ वयस्क के लिए सामान्य दशा में 0.8 ग्राम प्रोटीन प्रति किग्रा. शरीर वजन का अनुशंसित दैनिक भोजन (आर.डी.ए.) निर्धारित किया गया है। विशेषज्ञों के अनुसार, वानस्पतिक आधारित प्रोटीन (फलों-सब्जियों से प्राप्त प्रोटीन) इसके उत्तम विकल्प है। वानस्पतिक प्रोटीन शरीर को अनेकों बीमारियों जैसे-हृदय रोग, मधुमेह एवं उच्च रक्तचाप आदि से बचाव में सहायक हैं। वर्तमान समय में शाकाहार के प्रति बढ़ते रूझान के कारण वानस्पतिक प्रोटीन की माँग तेजी से बढ़ रही है। वैश्विक सर्वेक्षण की एक रिपोर्ट के अनुसार, संयुक्त राज्य अमेरिका में शाकाहारी लोगों की संख्या वर्ष 2022-2023 में 5-6 प्रतिशत तक बढ़ी है। कोरोना वायरस के संक्रमण उपरान्त लोग पोषक तत्वों से भरपूर फल एवं सब्जियों का उपभोग करने लगे हैं। वानस्पतिक प्रोटीन की बढ़ती हुई माँग से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण पहलू नीचे दिये जा रहे हैं:

1. बीन्स, नट्स और दलहनी फसलें प्रोटीन एवं रेशे से भरपूर होती हैं जो स्वास्थ्य के लिए उत्तम हैं। अमेरिकी हृदय संघ की जर्नल में प्रकाशित एक शोध में बताया गया कि पौधों से बनी डाइट से हृदय रोग का खतरा कम होता है।

2. विभिन्न शोधों के आधार पर यह पाया गया कि दलहनी पौधे, अनाज, स्यूडोसिरियल्स (चौलाई, बकवेट और क्विनोआ), बीज (सूरजमुखी, कद्दू के बीज, तिल, अलसी तथा नट्स) प्रोटीन के बहुत अच्छे स्रोत होते हैं। पौधों में उपलब्ध प्रोटीन की मात्रा एवं स्वास्थ्य लाभ का विवरण का विवरण नीचे की सारिणी में दिया गया है:

सारिणी-1: पौधों में पाये जाने वाले प्रोटीन की मात्रा एवं स्वास्थ्य लाभ का विवरण

क्र.सं.	वानस्पतिक स्रोत	प्रोटीन (प्रतिशत)	स्वास्थ्य लाभ
1.	सोयाबीन (सूखी)	35.0-44.0	हृदय को स्वस्थ रखने में मदद, कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण, ट्यूमर निवारण, वजन घटाने में मदद एवं रक्त शर्करा स्तर को कम करने में मदद
2.	ल्यूपिन बीज	39.0-55.0	हृदय को स्वस्थ रखें, वजन घटाने में मदद, एंटीऑक्सीडेंट एवं एंटी-इन्फ्लेमेटरी गुण
3.	कपास के बीज	38.0-45.0	स्वस्थ हृदय, मधुमेह रोग के प्रबंधन एवं शरीर में सूजन को कम करने में सहायक
4.	मूंगदाल	24.0	वजन घटाने में मदद, मधुमेह रोग के प्रबंधन एवं पाचन शक्ति बढ़ाने में मदद
5.	बादाम	21.20	मधुमेह रोग के प्रबंधन, स्वस्थ वजन बनाये रखने में मददगार एवं मनोवैज्ञानिक समस्यायों से लड़ने में मदद
6.	मेथी दाना	23.0	मधुमेह प्रबंधन, वजन घटाने एवं रक्त शर्करा स्तर को कम करने में मदद
7.	अलसी	20.30	कोलेस्ट्रॉल प्रबंधन, रक्त शर्करा स्तर को कम करने में मदद एवं हृदय को मजबूती प्रदान करना
8.	राजमा दाल	22.6-32.62	मधुमेह एवं हृदय रोग प्रबंधन में सहायक
9.	मूंगफली	25.0-29.0	हृदय एवं दिमागी स्वस्थ्य के सुधार में सहायक
10.	तुअर दाल	22.86	मधुमेह रोग के प्रबंधन एवं खूनी जलन को कम करने में मददगार
11.	मसूर दाल	10.5-36.4	मधुमेह एवं हृदय रोग के प्रबंधन में सहायक
12.	चना	19.3	वजन घटाने में मदद, मधुमेह प्रबंधन एवं एंटीऑक्सिडेंट गुण
13.	चिया बीज	16.0-18.0	हार्मोनल विनियमन, प्रतिरक्षा बढ़ाना एवं हृदय रोग से संरक्षण।

14.	अखरोट	15.0	प्रतिरक्षा बढ़ाने, दिल को स्वस्थ रखने एवं दिमाग तेज करने में सहायक
15.	क्योंनवा	14.0	कब्ज रोकने एवं वजन घटाने में सहायक तथा एंटी -ऑक्सिडेंट प्रॉपर्टीज़
16.	गेहूँ	9.0-12.0	ऊर्जा, पाचन शक्ति बढ़ाने में मदद, स्वास्थ्य हृदय, वजन नियंत्रण में मदद
17.	हरी मटर	5.42	हृदय, मांसपेशियों की मजबूती बढ़ाना, कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण एवं वजन घटाने में मदद
18.	हरी सोयाबीन	11.0	ऑस्टियोपोरोसिस तथा कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण, ट्यूमर निवारण एवं रक्त शर्करा स्तर को कम करने में मदद
19.	चावल	5.0-11.0	मांसपेशियों के विकास एवं मरम्मत, वजन घटाने में मदद
20.	आलू	7.9-8.0	उच्च रक्त चाप को कम करने में मदद, मांस पेशियों को विकसित करने और बॉडी बिल्डिंग में मददगार
21.	मशरूम (ताजा)	3.1	वजन कम करने, इम्यूनिटी बढ़ाने, दिल को स्वस्थ रखने, अच्छे पाचन, हड्डियों की मजबूती एवं एनीमिया को दूर करने में सहायक
22.	स्पिनाच	3.0	रेड ब्लड सेल्स बनाने, हृदय स्वस्थ एवं उच्च रक्तचाप के खतरों का प्रबंधन
23.	ब्रोकोली, बंदगोभी	2.82	हृदय को स्वस्थ रखने में मदद, एंटीऑक्सिडेंट गुण एवं कैंसर के इलाज में असरकारी

चित्र-1: वनस्पतिक प्रोटीन के प्रमुख स्रोत

वानस्पतिक प्रोटीन के संयोजन और विशेषतायें

अण्डे, मांस, पक्षी, दूध और मछली से प्राप्त होने वाले प्रोटीन पूर्ण और उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं क्योंकि वे सभी आवश्यक अमीनो एसिड प्रदान करते हैं। हालांकि, वे मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा बनते हैं क्योंकि उनमें वसा और कोलेस्ट्रॉल भी शामिल होता है। पौधों से प्राप्त प्रोटीन, विभिन्न अमीनो एसिड प्रोफाइल के साथ होती है जो इसकी विभिन्न विशेषतायें एवं स्वास्थ्य लाभ को दर्शाती हैं। उदाहरण के तौर पर राजमा और मसूर दाल की तुलना में गेहूँ के ग्लूटीन, मूंगफली, गेहूँ के आटे/ब्रेड और सोया प्रोटीन आइसोलेट्स के प्रोटीन अंशों की पाचन शक्ति (94-99 प्रतिशत) अधिक होती है। हालांकि अनाज, बीज, दालें, नट्स और सब्जियों से प्राप्त वानस्पतिक प्रोटीन, अधिकतर विशिष्ट आवश्यक अमीनो एसिड, जैसे- लाइसीन, सल्फर-युक्त अमीनो एसिड (सिस्टीन और मेथिओनिन) और थ्रिओनीन में अभावपूर्ण होती हैं। इसीलिए पोषण विशेषज्ञ शरीर की अमीनो एसिड की आवश्यक माँग को पूरा करने के लिए आहार में दाल या सोया (जिनमें सल्फर-युक्त अमीनो एसिड की कमी होती है) और अनाज (जिनमें लाइसीन की कमी होती है) को संयोजित रूप से खाने का सुझाव देते हैं। सारिणी-2 में जानवरों और पौधों से प्राप्त प्रोटीन की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया गया है।

सारिणी-2: जानवरों और पौधों से प्राप्त प्रोटीन का मूल्यांकन

प्रोटीन (प्रकार)	प्रोटीन डाइजेस्टिबिलिटी करेक्टेड अमीनो एसिड स्कोर (पीडीसीएएएस प्रतिशत)	शुद्ध प्रोटीन उपयोग (एनपीयू प्रतिशत)	जैविक मूल्य (बी.वी प्रतिशत)	प्रोटीन विघटन (प्रतिशत)
जन्तु-प्रोटीन				
व्हे-प्रोटीन	100	92	104	100
दूध	100	82	91	96
अंडा	100	94	100	98
चिकन	91	80	79	95
बीफ	92	73	81	92

पौध-प्रोटीन				
गेहूँ (ग्लूटीन)	25	67	64	85-95
गेहूँ	51	53-65	56-68	91
छोले	74	-	-	89
मटर प्रोटीन कंसेंट्रेट	89	-	65	99
सोया आटा	93	-	-	80

शाकाहार, पर्यावरण से संबंधित समस्यायें और पौधों से बनी डाइट से जुड़े स्वास्थ्य लाभ वानस्पतिक प्रोटीन स्रोतों की बढ़ती माँग के प्रमुख कारण हैं। वानस्पतिक प्रोटीन की पाचन शक्ति पर भी ध्यान देने की जरूरत है इसमें एंटीन्यूट्रीशनल तत्व एवं एलर्जी जैसे प्रभावी कारकों को कम किया जाना चाहिए। शाकाहारी व्यक्तियों जो प्रोटीन की मात्रा को केवल पौधों से प्राप्त करते हैं, आहार में विविधता रखनी चाहिए अर्थात् वे प्रोटीन की माँग को पूरा करने के लिए दाल, अनाज, बीज, मेवे, विभिन्न फल और सब्जियों आदि के सभी प्रकार के पौधों एवं उनके उत्पाद को भोजन में अवश्य शामिल करना चाहिए।

यदि आप सफलता चाहते हैं तो इसे अपना लक्ष्य ना बनाइये, सिर्फ वो करिए जो करना आपको अच्छा लगता है और जिसमे आपको विश्वास है, और खुद-बखुद आपको सफलता मिलेगी।

-डेविड फ्रोस्ट

भिण्डी निर्यात को प्रोत्साहन

बृजेश कुमार मौर्या, *प्रदीप कर्मकार, *विद्या सागर, **हिमाशु सिंह, डी. पी. सिंह, *सौरभ सिंह एवं *राजीव कुमार

चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)
*भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
**बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उत्तर प्रदेश)

विभिन्न प्रकार के फलों, सब्जियों और अन्य खाद्य उत्पादों के उत्पादन में भारत विश्व का अग्रणी देश है। भारतीय भोजन में भिण्डी बहुतायत रूप में उपभोग की जाती है जैसे- सब्जी, सलाद, अचार और सूप इत्यादि। यह उच्च पोषक मूल्य वाली सब्जियों में से एक है। वर्ष 2020 के दौरान भिण्डी का वैश्विक उत्पादन 10.54 मिलियन मीट्रिक टन हुआ जिसमें भारत अकेले 6.46 मिलियन मीट्रिक टन उत्पादन करके विश्व में प्रथम स्थान पर रहा जो वैश्विक भिण्डी उत्पादन का 64.41 प्रतिशत है। भारत में भिण्डी उत्पादक प्रमुख राज्य महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा हैं। भारत से भिंडी निर्यात की क्षमता काफी अच्छा है। विभिन्न देशों में भारतीय भिंडी की माँग है, खासतौर पर उन देशों में जहाँ यह सब्जी के रूप में भोजन का प्रमुख हिस्सा है। वर्तमान में मुख्य रूप से भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान- बैंगलोर, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान-नई दिल्ली तथा देश के अन्य विभिन्न क्षेत्रों में स्थित राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के निरंन्तर प्रयासों से भिण्डी की निर्यात योग्य कई किस्में विकसित की गयी हैं। वर्तमान में भारत वैश्विक भिंडी निर्यात में कुल उत्पादन का केवल 1.7 प्रतिशत हिस्सेदारी है। इस परिदृश्य में निर्यात प्रोत्साहन के लिए कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) भिण्डी सहित अन्य बागवानी उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए कई कदम उठाये हैं।

भारतीय भिण्डी निर्यात के लिए मानकः विभिन्न देशों में निर्यात मानक अलग-अलग होते हैं, इसलिए भारतीय भिण्डी के निर्यातकों को उत्पाद की मानक मात्रा को जानना और उसके अनुसार किस्मों का उत्पादन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय भिण्डी के निर्यात मानक का निर्धारण करने के लिए उत्पाद की गुणवत्ता, आवश्यकतानुसार पैकेजिंग, आकार, प्रस्तुति के तरीके, सांख्यिकीय और वित्तीय मापदण्ड जैसी कई बातों को ध्यान में रख कर किया जाता है। इसके साथ ही विदेशी बाजारों की माँग और अन्य निर्यात आवश्यकताओं का भी विश्लेषण किया जाता है।

निर्यात योग्य उपलब्ध किस्में

भारत में किसानों द्वारा भिण्डी की खेती को बड़े पैमाने पर किया जा रहा है ताकि आवश्यकतानुसार बे-मौसम (ऑफ-सीजन) के दौरान अन्य देशों को इसकी आपूर्ति की जा सकें। निर्यात के लिए उत्पादित भिण्डी में कई प्रकार के कीटों एवं फलों पर रोगों का प्रकोप होना एवं बचाव हेतु रोगनाशकों का

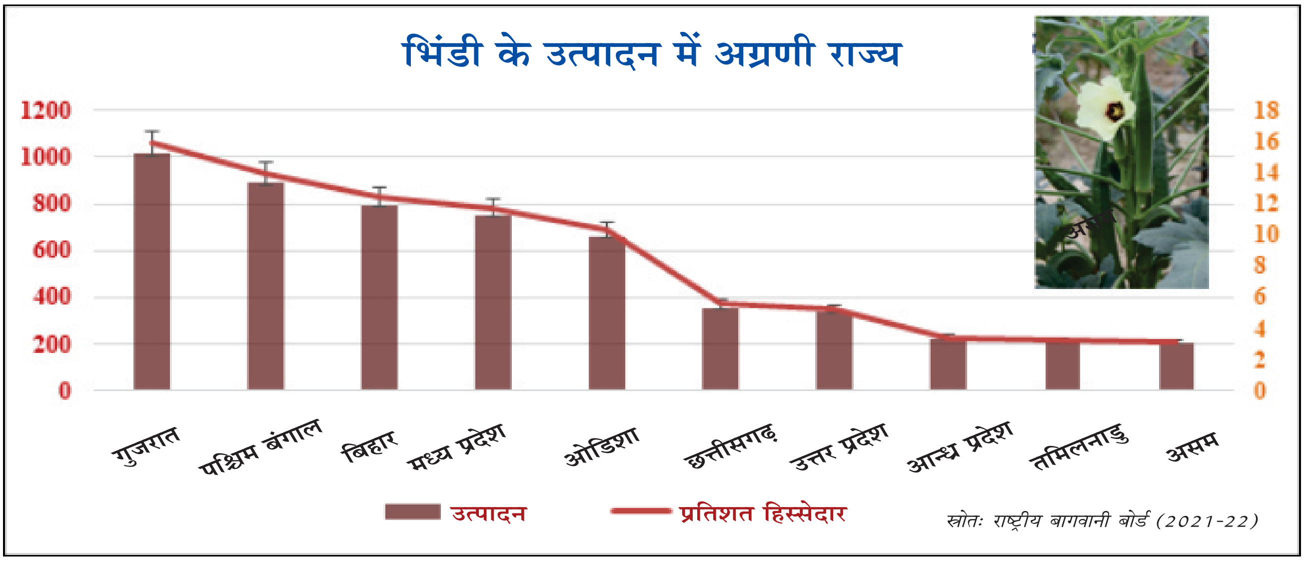

सारिणी-1: अंतर्राष्ट्रीय बाजार में विभिन्न देशों के उपभोक्ता द्वारा भिण्डी ग्राह्यता

विवरण	मानक
भारतीय परिपेक्ष में उपभोक्ता द्वारा ग्राह्यता	भिंडी का भारतीय बाजार में अच्छा मुनाफा प्राप्त करने के लिए फलों की लम्बाई 10-14 सेमी. के साथ-साथ गहरा हरा, पाँच धारीयुक्त एवं फली की सतह पर बीज के उभार से मुक्त होना आवश्यक है। फल के आधार पर पीले छल्ले के गठन से मुक्त और कोमलता ताजा बाजार के लिए सबसे महत्वपूर्ण मानदंड हैं।
दक्षिण एशिया	यहाँ के बाजार में 5-8 सेमी. लम्बा गहरा हरा तथा कई धारियों वाले फल जिसमें बीज का उचित भराव और बीज के उभार से मुक्त होने के साथ क्षति से बचाने के लिए रोयें की उपस्थिति का होना अच्छा माना जाता है।
दक्षिण एशिया, खाड़ी देश, यू.के., कनाडा, जापान और थाईलैंड के बाजार में निर्यात के लिए भिंडी का महत्वपूर्ण गुण	खाड़ी देशः यहाँ के बाजार में उपभोक्ता द्वारा 10-12 सेमी. लम्बे तथा गहरे हरे फल का अत्यधिक माँग है। भिण्डी की किस्म जिसके फलों के ऊपर पाँच धारियाँ जिसमें बीज का उचित भराव और बीज उभार से मुक्त हो तथा क्षति से बचाने के लिए ऊपरी सतह पर रोयें की उपस्थिति हो अच्छी मानी जाती है।
यू.के. और कनाडा	यहाँ के बाजार में 8-10 सेमी. लम्बे, गहरे हरे तथा पाँच धारियों युक्त कोमल फली का अधिक माँग है।

प्रयोग तथा विभिन्न कीटनाशकों के अधिक मात्रा के संचयन एक प्रमुख समस्या है। वर्तमान में उपयुक्त समस्या से निजात पाने के लिए रोगरोधी किस्मों जैसे-पूसा सावनी, परभनी क्रांति, वर्षा उपहार और पूसा ए-4 का भारत से निर्यात किया जाता हैं। इसके अलावा भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) द्वारा विकसित काशी उत्कर्ष, काशी सहिष्णु तथा काशी पराक्रम जैसी किस्मों के फलों का उपयुक्त समय पर तुड़ाई करने से निर्यात योग्य भिण्डी प्राप्त होती है।

काशी सहिष्णु

काशी उत्कर्ष

काशी पराक्रम

भारतीय भिण्डी निर्यात से होने वाले लाभ

भिण्डी को देश के विभिन्न हिस्सों में निर्यात के लिए उगाया जाता है, लेकिन मुख्य रूप से निर्यात योग्य गुणवत्ता वाली भिण्डी आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल से उत्पादित होती है। भारतीय भिण्डी के निर्यात क्षेत्र को बढ़ाना किसानों के लिए नया और लाभकारी अंतर्राष्ट्रीय बाजार का विकल्प प्रदान करता है। भिण्डी की उच्च माँग के कारण, इसकी कीमत भी अधिक होती है जिससे किसानों को उनके उत्पाद का अधिक मूल्य मिल जाता है।

भारतीय भिण्डी का अग्रणी निर्यात बाजार

ताजी सब्जी के रूप में भारतीय भिण्डी की जबरदस्त निर्यात क्षमता है। इसका निर्यात मुख्य रूप से पूर्वी एशिया, उत्तर अमेरिका और मध्य पूर्व के देशों में है। इन क्षेत्रों में भारतीय भिण्डी की माँग काफी अधिक है और वहाँ के लोग इसे पसंद करते हैं। विभिन्न देशों में भारतीय भिण्डी की माँग को ध्यान में रखते हुए, भारतीय निर्यातकों को उत्कृष्ट गुणवत्ता और स्वाद की भिण्डी प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए।

भारत में भिण्डी का निर्यात लाभकारी विकल्प है। भारतीय भिण्डी की वैश्विक माँग के कारण, इसे अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिष्ठा प्राप्त है। भारतीय निर्यातकों को उत्पादन की गुणवत्ता और स्वाद को बनायें रखने के लिए ध्यान देना चाहिए ताकि भारतीय भिण्डी विश्वस्तरीय पसंद बन सके। इससे न केवल किसानों को अधिक आय मिलेगी, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को भी एक नई ऊँचाई तक पहुँचाने में मदद मिलेगी।

भारत द्वारा भिण्डी का अन्य देशों में निर्यात प्रतिशत

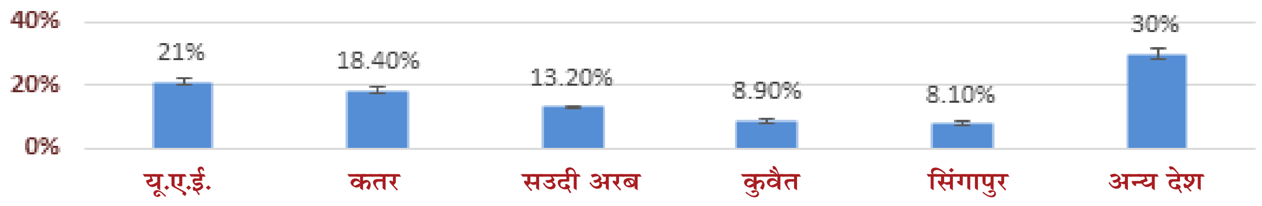

स्रोतः आई.आई.आई.ई.एम., 2019

प्रसंस्कृत चेरी टमाटर किशमिश

स्वाति शर्मा, श्रेया पँवार, हरे कृष्ण, एस. के. सिंह, अनंत बहादुर, आत्मानन्द त्रिपाठी एवं नागेन्द्र राय
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ डिब्बाबन्द खाने व पकाने को तैयार खाद्य सामग्री या व्यंजन होते हैं जो प्रसंस्करण द्वारा फलों या सब्जियों का मूल्यवर्धन कर उत्पादित किये जाते हैं। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त खाद्य उत्पादों को खाद्य प्रसंस्करण की विधियों जैसे- उबालना, सुखाना, निर्जलीकरण, किण्वन कैनिंग, फ्रीजिंग, बाटलिंग के बाद रंजक या परिरक्षक (नमक, चीनी, तेल) मिलाकर पैकेजिंग कर प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ तैयार किया जाता है। इन खाद्य पदार्थों की माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है क्योंकि यह पोषण से भरपूर होते हैं एवं आसानी से कम समय में तैयार हो जाते हैं। इनका प्रयोग यातायात सेवाओं में भोजन के रुप में अधिक होता है क्योंकि इनको ले जाने में कम जगह लगती है और यह खाने एवं पकाने के लिये तैयार व्यंजन होते हैं। इन प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के उत्पादन के समय इन्हे मूल्यवर्धित करने के लिये विटामिन 'बी', लौह तत्व, विटामिन 'डी', फोलिक एसिड, अमिनो एसिड, ट्रिप्टोफैन, लायसीन ल्यूसीन, मेथियोनीन आदि से जैव सवंर्धित किया जाता है। इससे एनीमिया, रिकेट्स, ग्वायटर और कुपोषण से निजात मिलती है। फसलों में तुड़ाई उपरान्त 30 प्रतिशत तक क्षति होती है। यदि प्रसंस्करण उद्योगों के माध्यम से इन फसलों के प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो के उत्पादन में तेजी आ जाये तो फसल क्षति, बेरोजगारी, किसानों को कम आय एवं कुपोषण की समस्या का समाधान हो सकेगा। अभी देश द्वितीयक कृषि अर्थात् खाद्य प्रसंस्करण के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से गुणवत्ता युक्त पौष्टिक भोज्य पदार्थों का उत्पादन संभव है जो बे-मौसम में भी वर्षभर उपभोक्ताओं के लिये उपलब्ध हो सकते हैं। सब्जियों में भी विटामिन, खनिज लवणों एवं भोज्य तंतुओं की प्रचुरता होती है। अतः इन फसलों के प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों को कार्यात्मक एवं पोषणीय (न्यूट्रास्यूटिकल) भोजन के रुप में स्वीकार किया गया है। शास्त्रों में कहा गया है कि 'भोजन हमारी औषधि एवं औषधि हमारा भोजन' होना चाहिये। 'शरीर खलुमद्यधर्मसाधनमं' अर्थात् निरोगी काया मनुष्य की सबसे बड़ी संपत्ति है। स्वास्थ्य खराब हो जाने के बाद सब कुछ नष्ट व नीरस हो जाता है। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ शीघ्र बनाने योग्य होने के कारण हवाई व रेल यात्राओं के अलावा सामान्य जीवन में हर रसोईघर में अपना स्थान बना चुके हैं। आज ये उत्पाद आहार क्रांति के स्तम्भ बन गये हैं। इन प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता व पोषण मूल्य, पैकेजिंग, अधिक समय तक भण्डारित करने हेतु मिलाये जाने वाले रंजक एवं परिरक्षक मापदण्ड के अनुसार न हो तो इनके उपभोग से उपभोक्ताओं के जीवन शैली से संबधित कई रोगों जैसे-मधुमेह, मोटापा, रक्त चाप, हृदयघात से ग्रसित हो सकते हैं। अतः प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो के विविध आयामों को जानना अति आवश्यक है जिससे मनुष्य के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ न होने पाये। सब्जियों के प्रसंस्कृत, खाद्य उत्पादों जैसे- जैम, जेली, चटनी, सॉस, केचप, मुरब्बा, पेठा, मार्मलेड, कैण्डी, अचार आदि में कुछ यौगिकों की जैव उपलब्धता बढ़ जाती है। परन्तु अन्य पोषक तत्व, विटामिन व भोज्य तंतु कम हो जाते हैं। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ खाने व पकाने को शीघ्र तैयार होने के कारण उपभोक्ताओं द्वारा स्वीकार्य किये जा रहे हैं। प्रसंस्कृत उत्पाद कच्ची सामग्रियों की तुलना में कम जगह लेने के कारण परिवहन व भण्डारण हेतु अधिक उपयुक्त होते हैं। प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद बे-मौसम में भी उपलब्ध कराये जा सकते हैं।

प्रसंस्कृत चेरी टमाटर किशमिश

चेरी टमाटर दुनिया भर में व्यापक रूप से उगाई जाती है। फलों के छोटे और आकर्षक आकार, मनोहारी लाल रंग और उत्कृष्ट स्वाद के कारण सलाद तथा सीधे खाने के लिए यह अत्यधिक पसंद किये जाते हैं। साथ ही यह पौष्टिक गुणों से भरपूर होते हैं। इस बागवानी फसल को उपभोक्ताओं के दैनिक आहार में समाहित करने के लिए माँग में लगातार वृद्धि हो रही है। चेरी टमाटर कैरोटीनोइड, शर्करा और अम्लता से भरपूर होते हैं। पके चेरी टमाटर में कुल घुलनशील तत्व साधारण बड़े टमाटर की तुलना में अधिक पाये जाते हैं। चेरी टमाटर में अधिक कैरोटीनोइड, विशेष रूप से लाल चेरी टमाटर में

चित्रः चेरी टमाटर किशमिश

लाइकोपिन की प्रचुरता के कारण, इसमें प्राकृतिक रूप से ऑक्सीकारक रोधी क्षमता अधिक पाई जाती है। अन्य घटकों जैसे-फिनोलिक्स, फ्लेवोनोइड, विटामिन 'सी' और कई अन्य आवश्यक पोषक तत्वों के कारण इसका उपयोग मानव स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है। कैंसर और हृदय रोग की दर को कम करने में भी लाइकोपिन को अत्यधिक सक्षम आँका गया है। यह टमाटर के स्वास्थ्य वर्धक गुणों में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। फ्री-रेडिकल को कम करने में यह स्वच्छकर्ता' के रूप में कार्य करते हैं। बीज, सिंचाई, उर्वरक, कीटनाशक के उपयोग, निराई-गुड़ाई और अन्य सस्य क्रियायें, प्रक्षेत्र या संरक्षित खेती में इसके उत्पादन में लागत का बड़ा हिस्सा होते हैं। चेरी टमाटर की उचित परिपक्वता होने पर ही तुड़ाई की जाती है। लाल रंग और मुलायम गठन परिपक्वता के अच्छे संकेतक हैं। हालांकि तुड़ाई उपरांत यह फसल क्लाइमेकट्रिक व्यवहार के कारण शीघ्रता से क्षय होने लगती है। उपयुक्त पैकेजिंग, भंडारण के समय उचित तापमान और आर्द्रता का संधारण इसकी गुणवत्ता और खाने के लिए उपयोगिता बनाये रखने के लिए आवश्यक है। परिपक्वता के आधार पर चेरी टमाटर को नियमित तुड़ाई करने की आवश्यकता होती है। तुड़ाई उपरांत तेज़ी से खराब होने की प्रकृति के कारण भंडारण अवधि बढ़ाने, क्षय दर को कम करने और परिवहन प्रक्रियाओं के दौरान संसाधनों को बेहतर ढंग से प्रबंधित करने में प्रसंस्करण की प्रमुख भूमिका है। प्रसंस्करण इसकी भंडारण क्षमता को बढ़ाने में प्रभावी और व्यावहारिक समाधान प्रदान करता है। यह चेरी टमाटर के फल की विपणन क्षमता को बढ़ाने का एक प्रभावशाली उपाय है। प्रसंस्करण तकनीक के उपयोग से भंडारण क्षमता कई गुना बढ़ाई जा सकती है और कृषकों को इससे अधिक आर्थिक लाभ मिलता है। यह तुड़ाई उपरांत फसल की मूल्य एवं लागत दर से कम प्राप्त होने के कारण नुकसान को रोकने में उपयोगी हो सकता है। प्रसंस्कृत उत्पादों में केचप, सॉस, पेस्ट और रस, निर्जलीकरण इत्यादि टमाटर को संसाधित करने के लोकप्रिय तरीके हैं। उत्पादकों के अतिरिक्त व्यवसायीकरण के लिए यह सहायक विकल्प है। चेरी टमाटर की किशमिश एक नया उत्पाद है जिसकी विपणन क्षमता ताज़े फलों की अपेक्षा अधिक है। उत्पाद की गुणवत्ता किस्म, परिपक्वता, कुल घुलनशील तत्व और लाइकोपिन की मात्रा से प्रभावित होती है।

चेरी टमाटर में टमाटर के मुक़ाबले अधिक शुष्क पदार्थ और कुल घुलनशील तत्व पाये जाते हैं। पके फलों की तुलना में, टमाटर उत्पादों के लाइकोपिन, स्वास्थ्य वर्धन के लिए अधिक लाभकारी होते हैं क्योंकि प्रसंस्करण की दौरान यह सिस रूप में परिवर्तित हो जाता है जिसकी जैव उपलब्धता ट्रांस आइसोमर से अधिक होती है। चेरी टमाटर के उत्पाद बनाने की विधि में तापमान, पूर्व उपचार और निर्जलीकरण के समय का उत्पाद के मुख्य भौतिक, रासायनिक और आर्गेनोलेप्टिक विशेषताओं पर प्रभाव पड़ता है। रंग, निर्जलीकरण गतिविधि, शुष्क पदार्थ, एस्कार्बिक एसिड, लाइकोपिन, बीटा कैरोटीन और भूरापन सभी प्रभावित होते हैं। कृषि व्यवसायों में प्रसंस्करण की भूमिका में बढ़त देखी जा रही है। खासकर मध्यवर्ती आर्द्रता वाले उत्पादों में रूचि में वृद्धि हो रही है। इंटरमिडियट नमी वाले खाने में 20-50 प्रतिशत तक नमी और नमी गतिविधि 0.70-0.85 के बीच होती है। इसमें प्रारम्भिक रंग, बनावट और स्वाद बना रहता है। यह सूक्ष्म जीवों से सुरक्षा, उच्च पोषण मूल्य और तुरंत खाने के लिए तैयार होते हैं। उपभोक्ता की माँग को पूरा करने के लिए प्रसंस्करण और स्व-जीवन बढ़ाना अत्यधिक आवश्यक है। यह ध्यान में रखकर चेरी टमाटर को चीनी के साथ प्रसंस्कृत कर ट्रे ड्राइंग विधि से निर्जलीकरण कर कम लागत पर चेरी टमाटर किशमिश बनाने की विधि विकसित की गई है। चेरी टमाटर किशमिश के कुल घुलनशील ठोस तत्वों का मान 53° ब्रिक्स तक किया गया। इसे 18-25 प्रतिशत तक निर्जलीकृत किया गया। इसमें परिरक्षण के लिए रसायन का उपयोग नहीं किया गया है। इसे प्रशीतित वातावरण (4-7 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान) में भंडारित किया जा सकता है। यह ऑक्सीकारक रोधियों से भरपूर, एक नया खाद्य उत्पाद है, जिसे उपभोक्ताओं विशेषकर बच्चों के बीच मीठे के रूप में नये स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद के रूप में पसंद किया जा सकता है। कम लागत और सरल संचालन विधि के कारण इसे बनाना आसान है। नमी की कम मात्रा, उच्च पोषण, ओर्गनोलेप्टिक विशेषताओं और भंडारण स्थिरता के कारण चेरी टमाटर किशमिश उपयोगी हो सकता है। चीनी से ओस्मोटिक निर्जलीकरण प्रक्रिया की सहायता से तेज़ निर्जलीकरण दर, अच्छी पुनर्जलीकरण गुण, प्रारम्भिक रंग और बनावट को बनाये रखने मे मदद मिलती है। इसका उपयोग आइसक्रीम, हलवा और अन्य मिष्ठान्न व्यंजनों में सजावट, स्वाद और पोषण के लिए किया जा सकता है। चेरी टमाटर की किशमिश में पोषण और रासायनिक गुण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। उच्च तापमान या लंबी अवधि तक निर्जलीकरण करने से उत्पाद के स्वाद, रंग और पोषण तत्वों की मात्रा में कमी आ जाती है। साथ ही यह पुनर्जलीकरण क्षमता को भी कम करता है। रंग को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों में फल का पी.एच, अम्लता, प्रसंस्करण तापमान, अवधि तथा किस्म हैं।

नवीन प्रौद्योगिकियों जैसे-माइक्रोवेव डीहाईड्रेशन, वैक्यूम इम्प्रेगनेशन, अल्ट्रासाउंड ओस्मोटिक डीहाईड्रेशन और ओस्मो डीहाईड्रेशन-फ्रीजिंग तकनीक का उपयोग भी किया जा सकता है। इसके संरक्षण के लिए उपयुक्त पैकिंग तरीकों का उपयोग करना चाहिए।

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो में खाद्य जनित रोग जनक व विषः प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की पैकेजिंग ठीक न होने के कारण उनमें *म्यूकर, एस्परजिलस, फ्यूजेरियम* जैसे कवकीय रोगजनक उत्पन्न हो जाते हैं जो कवकीय विष (माइकोटॉक्सिन) बनाने के कारण विषाक्तता पैदा कर देते हैं। *एस्परजिलस फ्लेवस एवं एस्परजिलस फ्यूमीगैटस* से अफ्लाटॉक्सिन बनता है जो कार्सिनोजेनिक होता है। इसी प्रकार इन पदार्थों में म्यूकर के संक्रमण होने से मानव मे म्यूकर माइकोसिस के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं जिससे श्वसन तंत्र, स्नायु तंत्र एवं आँखों को क्षति पहुँचती है। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो में *इश्चरीचिया कोलाई*, साल्मोनेला के संक्रमण से मानव में भोजन विषाक्तता के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं। भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) ने सब्जियों के पोषणीय मूल्य संवर्धन हेतु कई प्रकार की तकनीकियों को विकसित किया है जिनके व्यवसायीकरण से वर्षभर मौसम एवं बे-मौसम में सब्जियाँ उपलब्ध करायी जा सकती हैं।

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो में उपयोगी रंजक व परिरक्षकः प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ शीघ्र बनाने वाले भोजन के रुप में उपभोक्ताओं द्वारा प्रयोग में लाये जाते हैं। अतः इन्हे हानिकारक व विषैले रासायनों से मुक्त होना चाहिये। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो की भण्डारण अवधि बढ़ाने हेतु कई प्रकार के प्राकृतिक, जैविक व संश्लेषित रंजकों एवं परिरक्षकों का प्रयोग किया जाता है। परिरक्षक के रुप में सोडियम बेन्जोएट, एस्कार्बिक एसिड (500 पीपीएम), पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट, एसीटिक एसिड का प्रयोग किया जाता है। स्वीटनर के रुप में शहद, कार्न शर्करा, जौ सिरप, मोनोसोडियम ग्लूटामेट, डाइसोडियम फास्फेट एवं थिकनर के रुप में ग्वार गोंद एवं जैन्थान गोंद व रंजक के रुप में बीटा-कैरोटीन का उपयोग सुरक्षित होता है। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो में विषाक्त रासायनों की मिलावट के प्रमाण भी मिले हैं जो मानव स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ है। उदाहरण के रुप में फार्मेल्डिहाइड को परिरक्षक के रुप में मछलियों, फलों व सब्जियों, दूध एवं कदन्न अनाजों के प्रसंस्कृत उत्पादों मे स्व-जीवन (भण्डारण अवधि) को बढ़ाने मे प्रयोग किया जाता है। परन्तु यह समूह-1 श्रेणी का कैंसर उत्पन्न करने वाला घातक रसायन है। इससे आदमी के स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव पड़ता है जैसे-सिरदर्द, यकृत में विकार व स्नायुतंत्र में विकार। अतः इस प्रकार के वर्जनीय विषाक्त रासायनों का प्रयोग नही करना चाहिये।

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो की स्मार्ट पैकेजिंगः स्मार्ट पैकेजिंग के लिये ऐसे सूचक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है जिससे उत्पाद को खोलने से पहले ही पता चल जाये कि उत्पाद ठीक है या नही क्योंकि सूचक रसायन सूक्ष्मजीवीय संक्रमण या विषाक्तता को रंग परिवर्तन के माध्यम से इंगित कर देते हैं। पैकेजिंग के लिये पालीइथाइलीन या पाली प्रोपाइलीन (150-200 गेज) वाली प्लास्टिक थैलियों का प्रयोग करना चाहिये। भण्डारण के लिये प्रसंस्कृत उत्पादों को उचित तापक्रम पर भण्डारित करना चाहिये। डिब्बों में पोषक तत्व सूची, प्रयुक्त रंजक एवं परिरक्षक, कुल वजन, उत्पादक कम्पनी का नाम व मूल्य आादि का वर्णन दिशा-निर्देश के रुप में स्पष्ट रुप से करना चाहिये।

यदि आपका कोई सपना है तो बस बैठे मत रहिये। ये यकीन करने का साहस जुटाइये कि आप सफल हो सकते हैं और इसे हकीकत बनाने में कोई कसर मत छोड़िये।

-रोप्लीन

लहसुन में मूलग्रन्थि रोगः समस्या एवं प्रबंधन

आर.सी. गुप्ता एवं पी.के. गुप्ता
राष्ट्रीय बागवानी एवं विकास प्रतिष्ठान, नासिक (महाराष्ट्र)

भारत में लहसुन का उत्पादन दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है लेकिन इसके साथ-साथ लहसुन में रोगों की समस्यायें भी बढ़ती जा रही हैं। सघन खेती से लहसुन उत्पादन में अनेकों नयी समस्यायें सामने आ रही हैं इसमें सबसे घातक लहसुन में मूलग्रंन्थि रोग (रुट नॉट निमाटोड) हैं। मूलग्रंन्थि रोग अपने देश में कर्नाटक में सन् 2015 नयी समस्या के रुप में पहली बार लहसुन की फसल में देखा गया। इसके बाद हरियाणा में मूलग्रंन्थि रोग सन् 2016 में लहसुन की फसल में देखा गया। भारत में लहसुन की औसत उत्पादकता लगभग 8.16 टन /हेक्टेयर है। इसकी कम उत्पादकता के सबसे बड़ा कारण लहसुन में लगने वाले रोग हैं।

सारिणी -1: भारत में लहसुन का उत्पादन एवं उत्पादकता

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (टन/हेक्टेयर)
2015 -2016	16.17	5.76
2016 -2017	16.97	5.26
2017 -2018	17.16	5.33
2018 -2019	29.09	7.47
2019 -2020	29.23	8.36
2020 -2021	31.89	8.10
2021 -2022	32.08	8.16

मूलग्रंन्थि रोग के नियंत्रण हेतु किसान मुख्य रुप से जहरीले रसायन जैसे-सूत्रकृमिनाशी का ही प्रयोग कर रहे हैं जिससे रोग नियंत्रण में सफलता तो मिलती है परंतु रसायनों के अधिक एवं लगातार प्रयोग से रोगकारकों में प्रतिरोधकता, मृदा में उपस्थित लाभदायक सूक्ष्मजीवों पर विपरीत प्रभाव, पर्यावरण असंतुलन एवं उत्पाद में रसायन अवशेष के संचयन की समस्यायें उत्पन्न हो रही हैं। लहसुन की फसल में नयी समस्या को ध्यान में रखते हुए वर्तमान समय की आवश्यकता है कि लहसुन में मूलग्रंन्थि रोग (रुट नॉट निमाटोड) के प्रबन्धन में रसायनों का कम से कम तथा अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करने की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण प्रदूषण एवं रसायन अवशेष की समस्या से निजात मिल सके। इन सभी उपरोक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन तकनीकी लहसुन में मूलग्रन्थि रोग के प्रबन्धन में सहायक सिद्ध होगी।

मूलग्रंन्थि रोग (रुट नॉट निमाटोड)

लक्षणः इस रोग के प्रमुख लक्षण, पौधों का छोटा रह जाना, पत्तियों का पीला होना एवं छोटे आकार के कन्द रूप में दिखाई देते हैं। लेकिन मुख्य लक्षण जड़ों का फूल जाना एवं जड़ों पर गोल अथवा अण्डाकार गाँठे बनना है (चित्र-1, 2, 3 एवं 4) जिसके कारण पानी व पोषक तत्वों का शोषण पौधे बहुत कम कर पाते हैं और प्रायः ऐसे पौधों के कन्द छोटे आकार के बनते हैं जिससे उत्पादन बहुत कम हो जाता है एवं गुणवत्ता और उपज में कमी आ जाती है।

रोगकारकः लहसुन में यह रोग मुख्यतः *मेलोइडोगाईन ग्रामिनिकोला* सूत्रकृमि द्वारा होता है। लेकिन मूलग्रंन्थि रोग का संक्रमण प्रायः सभी सब्जियों में मुख्यतः *मेलोइडोगार्डन इन्कोग्निटा* या *मेलोइडोगाईन जावानिका* सूत्रकृमि द्वारा होता है।

मूलग्रन्थि रोग का एकीकृत प्रबन्धन

1. सस्य क्रियायें

- गर्मी के दिनों (मई-जून) में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए जिससे मिट्टी में सूत्रकृमि के अण्डे सूर्य की गर्मी से नष्ट हो जायें।
- उर्वरकों की संतुलित एवं अनुमोदित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की अधिकता से रोग ग्राह्यता फसल में बढ़ जाती है।

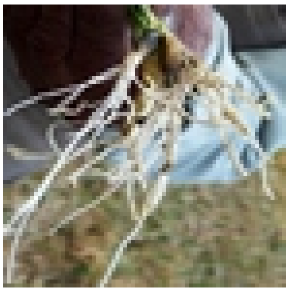

चित्र-1: लहसुन में मूलग्रंन्थि रोग के लक्षण

चित्र - 2, 3 एवं 4: लहसुन में मूलग्रंन्थि रोग के लक्षण (जड़ों पर गोल एवं अण्डाकार गाँठें)

- प्रमाणित स्वस्थ लहसुन बीज का चुनाव करना चाहिए।
- रोपाई अनुशंसित समय पर करना चाहिए। फसल को समय के पहले या देरी से लगाने पर रोग का संक्रमण /प्रकोप ज्यादा होता है।
- पौध से पौध की अनुशंसित दूरी होनी चाहिए, कम दूरी पर सघन लगाने से रोग का प्रादुर्भाव बढ़ जाता है।
- जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- फसल-चक्र अपनाना चाहिए जैसे- मक्का के बाद लहसुन लगायें।

2. यांत्रिक क्रियायें

- शल्क कन्द के खुदाई उपरान्त खेत में रोग ग्रस्त फसल अवशेषों को एकत्र करके जला देना चाहिए।
- खेत के अन्दर एवं चारों तरफ की मेढ़ों, सिंचाई की नालियों एवं रास्तों से खरपतवारों को नष्ट करने से रोग नियंत्रण में सहायता मिलती है।
- गेंदा की फसल को सूत्रकृमि के नियंत्रण के लिए ट्रैप क्राप के रुप में प्रयोग किया जा सकता है।

3. जैव नियंत्रक का उपयोग : *ट्राइकोडर्मा विरडी / ट्राइकोडर्मा हारजिएनम* एवं *पैसिलोमाइसिस लिलासिनस* नामक जैविक फफूँद का उपयोग करके मूलगाँठ रोग उत्पन्न करने वाले सूत्रकृमि के नियंत्रण में सहायक हैं। *ट्राइकोडर्मा* को रोपाई से 10-15 दिनों पहले 5 किग्रा./हेक्टेयर की दर से खेत में मिलाना चाहिए।

4. वानस्पतिक रासायनों का उपयोग: रोपाई से 30 दिनों पूर्व खेत में नीम की खली 5 कु./ हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए।

5. सूत्रकृमिनाशकों का उपयोग: कार्बोफ्यूरान की 25 किग्रा./हेक्टेयर की दर से खेत में रोपाई से पूर्व मिलाना चाहिए। फ्लुओपाईराम की 1.25 लीटर/ हेक्टेयर की दर से खेत में रोपाई के समय प्रयोग करने से मूलग्रन्थि रोग नियंत्रण में सहायता मिलती है।

आपके ज़िन्दगी के सबसे अच्छे साल वो होते हैं जिसमे आप डिसाइड करते हैं कि आपकी प्रॉब्लम्स आपकी अपनी हैं। आप उनका दोष अपनी माँ, इकोलॉजी या प्रेसिडेंट को नहीं देते। आप रियलाइज़ करते हैं कि आप अपनी किस्मत को खुद कंट्रोल करते हैं।

अल्बर्ट एलिस

पूर्वांचल में मिर्च की खेती से आर्थिक समृद्धिः सफलता की गाथा

इन्दीवर प्रसाद, राजेश कुमार, गोविन्द पाल, नीरज सिंह, शुभदीप रॉय एवं इन्द्रेश कुमार तिवारी
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

भारत वैश्विक स्तर पर मिर्च का सबसे बड़ा उत्पादक, निर्यातक एवं उपभोक्ता है। भारतीय मिर्च विश्व भर में अपने तीखेपन एवं रंग के लिए मशहूर है। भारत के 10 राज्यों में 90 फीसदी तक हरी मिर्च का उत्पादन होता है जिनमें से उत्तर प्रदेश भी एक है। हरी मिर्च की खेती पूर्वांचल के किसानों के लिए इसलिए भी फायदे का सौदा है, क्योंकि लंबे समय तक इसका उत्पादन होता रहता है और दाम भी अच्छा मिलता है। मिर्च की माँग उत्तर प्रदेश के प्रमुख मंडियों सहित दक्षिण भारत में भी रहती है। कई देशों की उड़ान भर रही पूर्वांचल की तीखी मिर्च अब किसानों के जीवन में आर्थिक दृष्टि से मिठास घोल रही है। मिर्च की खेती कर रहे किसानों की आय तो बढ़ ही रही है, साथ ही साथ इस क्षेत्र को भी विशेष पहचान मिलने लगी है। मिर्च की खेती युवाओं का भविष्य संवारने का उम्दा माध्यम बनने लगा है। स्वयं के प्रयास से युवा किसान लाभ का अनुभव करने लगे हैं। इसी का परिणाम है कि पूर्वांचल में कुछ वर्षों में मिर्च की खेती में 60-65 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। साथ ही इसके निर्यात में भी शानदार उछाल आया है। मिर्च की खेती में एफ.पी.ओ. की भूमिका महत्वपूर्ण है। भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश में एक प्रमुख संस्थान है। यह संस्थान सब्जी उत्पादकों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान हेतु नई-नई तकनीकों के प्रचार-प्रसार हेतु सतत् प्रयासरत रहता है। इसके अलावा किसानों को सही किस्म का चुनाव, उन्नत उत्पादन तकनीकी, रोग-व्याधि प्रबंधन, प्रसंस्करण हेतु व्यापक स्तर पर प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है। क्षमता संवर्धन हेतु अनेकों कार्यक्रमों के द्वारा अद्यतन तकनीकें प्रदान की जा रही हैं। इन प्रयासों के परिणाम स्वरुप विगत पाँच वर्षों में पूर्वांचल में मिर्च की क्षेत्रफल में 60 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वर्ष 2023-24 में वाराणसी से रिकॉर्ड 1200 मीट्रिक टन सब्जियों का निर्यात हुआ जिसमें मिर्च सबसे प्रमुख उत्पाद रहा। वर्ष 2018 में शून्य निर्यात स्तर से इस उपलब्धि को प्राप्त करने में मिर्च मूल्य श्रृंखला से जुड़े किसानों, वैज्ञानिकों एवं निर्यातकों का अहम् योगदान है। यह संस्थान अपने अधिदेश के अनुसार मिर्च के आनुवंशिक जननद्रव्यों का संवर्धन एवं उन्नयन पर निरंतर कार्य कर रहा है। मिर्च में विषाणु, कीट एवं रोग सहनशील किस्मों के विकास, अधिक उत्पादन, गुणवत्ता तथा मूल्य संवर्धन हेतु नवीन शोध

किये जा रहे हैं। शोध के उपरांत मिर्च की चार मुक्त परागित किस्में (काशी अनमोल, काशी गौरव, काशी सिंदूरी एवं काशी आभा) एवं चार संकर किस्में (काशी तेज, काशी सुर्ख, काशी रत्ना एवं काशी गरिमा) विकसित की गयी हैं जो किसानों द्वारा व्यापक स्तर पर अपनायी जा रही हैं। इन किस्मों में अधिक उपज, रोग सहनशीलता, तीखापन, आकर्षक फल संरचना, अगेतीपन जैसे अनेकों गुण विद्यमान हैं जिससे उत्पादकों को अधिक लाभ हो रहा है। विकसित मिर्च की किस्मों का व्यापक आर्थिक समृद्धि का प्रभाव उत्पादकों के जीवन स्तर पर स्पष्ट दिखाई पड़ता है। किस्म 'काशी अनमोल' का आर्थिक प्रभाव विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि वर्ष 2005-06 से 2021-22 के दौरान इसका प्रसार लगभग 163695.95 हेक्टेयर था जो 26 राज्यों के कुल 165 जिले अपनी उपस्थिति दर्ज की है। इसकी कुल लागत रु. 88612 प्रति एकड़ है जो स्थानीय किस्म की तुलना में रूपया 90456 प्रति एकड़ होती है। इस किस्म को अपनाकर कृषक स्थानीय किस्म की रु. 85304 प्रति एकड़ की तुलना में रु. 111188 प्रति एकड़ का शुद्ध लाभ अर्जित कर रहे हैं। काशी अनमोल का लाभःलागत (बीसी) अनुपात 2.26 है जो स्थानीय किस्म की 1.94 अनुपात से अधिक है। आर्थिक अधिशेष मॉडल के परिणामों से पता चला कि उत्पादक अधिशेष रू. 11.94 करोड़, उपभोक्ता अधिशेष रू. 18.94 करोड़ और कुल आर्थिक अधिशेष से रू. 30.88 करोड़ रुपये की सकल आय प्राप्त हुई।

संस्थान द्वारा विकसित मिर्च की संकर किस्म 'काशी रत्ना' किसानों एवं उपभोक्ता द्वारा काफी पसंद की जा रही है। विगत

3 वर्षों में 200 से ज्यादा स्थानों पर इसका प्रक्षेत्र प्रदर्शन किया गया किया गया है। तीखे व आकर्षक गुणवत्ता वाले फलों के साथ इसकी उपज 22- 25 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हुई। वाराणसी के बंगालीपुर गाँव की प्रगतिशील महिला किसान श्रीमती वैजन्ती देवी ने इसकी खेती ज्यादा आमदनी प्राप्त कर रही है। इसके अलावा प्रगतिशील किसान श्री वंशनारायण पटेल बुलेट किस्म 'काशी आभा' के उत्पादन क्षमता, तीखेपन एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता के कारण स्वयं खेती करते हैं और दूसरे को प्रेरित कर रहे हैं। पूर्वांचल से हरी मिर्च के निर्यात को देखते हुए निर्यात योग्य संकर 'काशी गरिमा' विकसित की गयी है। संस्थान द्वारा बड़े पैमाने पर इसका बीज उत्पादन सुनिश्चित किया जा रहा है। बीज उत्पादन, तकनीकी हस्तानांतरण, किसान मेला एवं अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन के माध्यम से देश के कई क्षेत्रों में इन किस्मों का प्रचार- प्रसार किया जा रहा है। पिछले 12 वर्षों के दौरान संस्थान से काशी अनमोल, काशी रत्ना एवं काशी तेज के 100 किग्रा. से ज्यादा बीजों का उत्पादन किया गया जिसका मूल्य लगभग 20 लाख रुपये होता है।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.) के वैज्ञानिकों द्वारा हरी मिर्च का पाउडर बनाने की तकनीक विकसित की गयी है जिसका पेटेंट भी हो चुका है। हरी मिर्च के पाउडर में 30 प्रतिशत से अधिक विटामिन 'सी', 94-95 प्रतिशत क्लोरोफिल और 65-70 प्रतिशत कैप्सिसीन उपलब्ध होता है। तैयार हरी मिर्च के पाउडर को सामान्य तापमान पर कई महीनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इस तकनीक का लाइसेंस कई संस्थाओं को दिया जा चुका है। हिमाचल प्रदेश की मेसर्स होल्टन किंग कंपनी द्वारा कृषि उद्यमियों को प्रशिक्षण देकर हरी मिर्च का पाउडर तैयार किया जा रहा है। कंपनी पूर्वांचल के कृषि उद्यमियों से सीधे हरी मिर्च क्रय करेगी। इस तकनीकी से तैयार मिर्च आधारित उत्पादों की माँग में बढ़ोत्तरी होगी और किसानों को ताजे फलों के बाजार के अतिरिक्त अन्य व्यापार का विकल्प भी होगा। वाराणसी के जिला उद्यान अधिकारी के अनुसार हरी मिर्च का निर्यात होने से किसानों में इसकी खेती के प्रति रुझान बढ़ा है। हरी मिर्च को सामान्यतः 2500 रुपये प्रति कुंतल की दर से विक्रय किया जाता है जिससे किसान को प्रतिवर्ष लगभग 7-8 लाख रूपये प्रति हेक्टेयर मिल जाता है। गाजीपुर के प्रगतिशील किसान एवं मिर्च निर्यातक श्री रामकुमार राय ने बताया कि संस्थान द्वारा विकसित किस्मों की खेती से प्रति एकड़ में 40-50 हज़ार रूपये की लागत आती है और 4-5 लाख रुपये की मिर्च का उत्पादन हो जाता है। अगेती किस्म 'काशी अनमोल' की खेती के साथ दूसरी फसलें भी समय से उगायी जा सकती हैं। व्यापारियों एवं निर्यातकों के अनुसार इस क्षेत्र से उत्पादित मिर्च 2-4 दिनों तक खराब नहीं होती हैं जिसके कारण दुबई और कतर जैसे देशों को सुगमता से निर्यात किया जाता है। इसी प्रकार वाराणसी के आराजी लाइन फार्मर प्रोडूसर कंपनी लिमिटेड ने यहाँ से तैयार अचार बनाने के लिए उपयुक्त भरवा मिर्च जिसका भौगोलिक संकेतक (जी.आई.) पंजीकरण प्राप्त है जिसमें भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान में मिर्च के शोध को प्रमुखता से उल्लेखित किया गया है। 'वन डिस्ट्रिक्ट एंड वन प्रोडक्ट' में सम्मिलित करने के कारण वाराणसी में उद्यमि अब मिर्च आधारित 'फूड प्रॉसेसिंग यूनिट' लगा सकेंगे। खाड़ी के देशों में धूम मचा चुकी पूर्वांचल की मिर्च आधारित चिली पाउडर, चिली फ्लैक्स, चिली सॉस, अचार आदि तैयार कर अन्य शहरों में विक्रय हेतु ब्रांडिंग करेगी। उद्यमियों द्वारा कृषि उत्पादन क्षेत्र के पास ही 300 फूड प्रॉसेसिंग यूनिट लगने की योजना बना रहे हैं जहाँ पर मिर्च आधारित खान-पान की 35 से ज्यादा चीजें बनेंगी। संगठित क्षेत्र में मिर्च का उत्पादन कर रहे हजारों लोगों को बाजार से जोड़ने की तैयारी प्रदेश सरकार द्वारा की जा रही है।

औषधीय गुणों का स्त्रोतः कुम्हड़ा

*शुभम तिवारी, सुधाकर पाण्डेय, त्रिभुवन चौबे, विद्या सागर, ज्योति देवी एवं विकास सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
*सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उत्तर प्रदेश)

कुम्हड़ा की खेती उत्तरी मैक्सिको से लेकर अर्जेंटीना, चिली तक के पहाड़ी इलाकों और समुद्री तटों पर भी की जाती है। इसकी खेती यूरोप (फ्रांस और पुर्तगाल), एशिया (भारत और चीन) और पश्चिमी अमेरिका में भी फैल हुआ है। यह एक वार्षिक बेल फसल है जिसके कच्चे फल को सब्जी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है जबकि पके हुए फल का इस्तेमाल विभिन्न पेय पदार्थ और मिठाई बनाने में होता है। कुम्हड़ा में बीटा-कैरोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन और खनिज जैसे घटक होते हैं। इस लेख के माध्यम से कुम्हड़ा के औषधीय गुणों पर प्रकाश डाला जायेगा।

- **वजन घटाने में है लाभदायक**

बढ़ते वजन के कारण मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग एवं कैंसर रोग के साथ-साथ कई समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। कुम्हड़ा में पानी की मात्रा 91.6 प्रतिशत होती है। इसके सेवन से एक तरफ भूख शांत हो जाती है वही दूसरी तरफ शरीर का वजन भी नियंत्रित रहता है। कुम्हड़ा में कैलोरी (ऊर्जा) 26 ग्राम होती है जिससे दैनिक खाद्य आपूर्ति में कटौती होती है और वजन बढ़ता नही है। कुम्हड़ा में कार्बोहाइड्रेट की कम मात्रा 6.5 ग्राम होती है जिससे शरीर भंडारित वसा को उपयोग करने में मदद करता है और शरीर में अतिरिक्त वसा को एकत्रित नही होने देता है जिसके कारण शरीर में मोटापा नही होता है।

- **कैंसर रोग कोशिकाओं को रोकने में सहायक**

कुम्हड़ा में 3100 माइक्रोग्राम बीटा-कैरोटीन (विटामिन 'ए') पायी जाती है जो कैंसर रोग कोशिकाओं को रोकने में मदद कर सकते हैं और प्रभावी एंटीऑक्सीडेंट के रूप में काम करता है। इसके उपयोग से कैंसर रोग कोशिकाओं के विकास को रोका जा सकता है।

- **रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में है कारगर**

बढ़ते प्रदूषण के कारण बीमारियों से लड़ने के लिए रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढाने के लिए कुम्हड़ा का सेवन करना लाभदायक हो सकता है। इसमें उपलब्ध कुछ पोषक तत्व रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ा सकते है जो इस प्रकार हैः

1. **विटामिन 'ए':** कुम्हड़ा में विटामिन 'ए' की मात्रा (426 माइक्रोग्राम/100 ग्रा.) होती है जो शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में मदद कर सकता है।
2. **विटामिन 'सी':** कुम्हड़ा में विटामिन 'सी' 9 मिग्रा. पायी जाती है जो प्रतिरोधी क्षमता को मजबूत रखने में महत्वपूर्ण होता है।
3. **पोटैशियमः** कुम्हड़ा में 340 मिग्रा. पोटैशियम की मात्रा होती है जो शरीरिक ऊर्जा को बढ़ाने में मदद करता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। इसके अलावा कद्दू में खाद्य रेशा, राइबोफ्लेविन व मैग्नीज प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इन पोषक तत्वों से मोटापा, मधुमेह एवं हृदय रोग के जोखिम को कम करने में मदद मिलती है।

- **आँखों को स्वस्थ रखने में कारगर**

वर्तमान समय में छोटे-छोटे बच्चों को भी आँखों की समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। कुम्हड़ा का सेवन आँखों के लिए फायदेमंद होता है। इसमें विटामिन 'ए' की मात्रा 426 माइक्रोग्राम होती है जो आँखों की सेहत के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है। यह रेटिना के विकास में मदद करता है और रॉडोप्सिन नामक तत्व की उत्पादन को बढ़ाता है जो रंगों को पहचानने और ठीक से देखने के लिए आवश्यक होता है। कुम्हड़ा में विटामिन 'सी' और 'ई' की क्रमशः 9 मिग्रा. और 1.06 मिग्रा. होती है जो आँखों की रोगों से लड़ने की क्षमता में वृद्धि करते हैं। बढ़ती उम्र में होने वाली आँखों की समस्या से बचने के लिए कुम्हड़ा का सेवन लाभप्रद है।

- **एंटीऑक्सिडेंट्स**

कुम्हड़ा में मौजूद एंटीऑक्सिडेंट्स आँखों को स्वस्थ रखने और रोगों से लड़ने की क्षमता में मदद करते हैं। बढ़ती उम्र में होने वाली आँखों की समस्या से बचने के लिए कुम्हड़ा का सेवन लाभप्रद माना जाता है।

- **उच्च रक्त चाप (हाई ब्लड प्रेशर) में लाभप्रद**

आज के भागदौड़ पूर्ण जीवन में उच्च रक्तचाप की समस्या आम जनमानस में देखने को मिल रही है। यदि पोटैशियम की मात्रा सही रूप से प्राप्त नहीं होती है, तो यह रक्तचाप में असंतुलन पैदा करती है जो उच्च रक्तचाप की स्थितियों को बढ़ावा देता है। इसमें पोटैशियम की प्रचुर मात्रा होती है। पोटैशियम का महत्वपूर्ण कार्य यह है कि यह रक्त नलिकाओं के मांसपेशियों को विस्तारित करके वासोडिलेशन प्रोसेस को प्रोत्साहित करता है। इससे रक्तनालियों में रक्त संचारण प्राकृतिक रूप से होता है जिससे रक्त चाप (ब्लड प्रेशर) नियंत्रित रहता है। इस प्रकार कुम्हडा युक्त आहार का सेवन करना उच्च रक्तचाप के खिलाफ प्राकृतिक और प्रभावी उपाय होता है।

- **अस्थमा रोग से बचाव के लिए है लाभप्रद**

अस्थमा रोग में एंटीऑक्सिडेंट्स जैसे-विटामिन 'सी' और बीटा- कैरोटीन और अन्य पोषक तत्व लाभप्रद होते हैं जो कुम्हड़े में प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो शरीर के आंतरिक प्रदूषण को कम करने में मदद करता है और श्वास नली को स्वस्थ रखने में सहायक हो सकते हैं। मैग्नीशियम श्वास नली संकुचन को कम करने में मदद कर सकता है जिससे अस्थमा रोगी की श्वास नली की समस्या में राहत मिल सकती है। इस तरह से कुम्हड़ा अस्थमा के लक्षणों को कम करने में मदद कर सकता है।

- **चमकदार त्वचा के लिए लाभदायक**

कुम्हड़ा में विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, यह एक प्रमुख एंटीऑक्सीडेंट है जो त्वचा की रक्षा करने और सुरक्षित रखने में मदद करता है। विटामिन 'ए' त्वचा के उतकों को फ्री-रेडिकल्स से बचाता है जो त्वचा को किसी भी प्रकार के क्षतिग्रस्त होने से रक्षा करते हैं। यह त्वचा को उच्च अल्ट्रा-वाइलेट रेडिएशन और सूखापन से भी बचाता है। विटामिन 'ए' त्वचा के कोलेजन की उत्पत्ति में मदद करता है जो त्वचा की लचीलता और युवापन को बनाये रखने में महत्वपूर्ण होता है। यह त्वचा को मुलायम, चमकदार और स्वस्थ बनाने में मदद करता है। इस प्रकार कुम्हड़ा को आहार में शामिल करके अपनी त्वचा को स्वस्थ रख सकते हैं।

- **स्वस्थ और घने बालों के लिए है लाभप्रद**

वर्तमान समय में खास करके युवाओं में बालों का सफेद होना और झड़ना बहुत तेजी से देखा जा सकता है जिसका मुख्य कारण है बालों को मिलने वाले पोषक तत्वों की कमी। कुम्हड़े में बालों के स्वास्थ्य के लिए प्रमुख पोषक तत्वों में विटामिन 'ए' और जिंक के स्रोत के रूप में लाभप्रद होता है। कुम्हड़े में पाया जाने वाला विटामिन 'ए' बालों को मजबूती प्रदान करता है और स्कैल्प के स्वास्थ्य को बनाये रखने में मदद करता है। कुम्हड़े में 0.32 मिग्रा. जिंक पाया जाता है जो बालों के झड़ने (पैटर्न बाल्डनेस) को कम करता है।

- **यकृत के लिए है लाभप्रद**

कुम्हड़ा में बायोएक्टिव यौगिक जैसे-फेनोलिक यौगिक और बीटा-कैरोटीन पाये जाते हैं जो लीवर को सुरक्षा प्रदान करता है। इसमें पाये जाने वाला असंतृप्त फैटी एसिड रक्त में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम कर सकते हैं और लीवर में कोलेस्ट्रॉल के अवरोध को बढ़ा सकते हैं तथा यकृत को वसायुक्त होने से बचाता है। इसके अलावा यह मनुष्यों के पाचन को भी बढाता है जिससे यकृत यानी मनुष्य का लीवर स्वस्थ रहता है।

- **मधुमेह नियंत्रण में है कारगार**

कुम्हड़ा मधुमेह नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है क्योंकि इसमें कई पोषक तत्व होते हैं जो मधुमेह के प्रबंधन में सहायक हो सकते हैं। कुम्हड़ा में पानी की मात्रा अधिक (91.6 प्रतिशत) होती है जिससे शरीर में वसा नियंत्रित रहती है। कुम्हड़ा में कम कैलोरी होती है जिससे दैनिक खाद्य आपूर्तित कैलोरी में कटौती होती है और वजन बढ़ता नही है। कुम्हड़ा में कार्बोहाइड्रेट की कम मात्रा होती है जिससे इंसुलिन स्तर कम रहता है एवं शरीर भंडारित वसा को उपयोग करने में मदद करता है और शरीर में अतिरिक्त वसा को एकत्रित नही होने देता है। कुम्हड़ा का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है जिसका मतलब है कि यह शर्करा के स्तर को धीरे-धीरे बढ़ाता है जिससे उच्च रक्त शर्करा के स्तर की संभावना कम होती है। इससे मधुमेह के रोगियों के लिए शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद मिल सकती है। कुम्हड़ा में खाद्य रेशा (फाइबर) 0.5 ग्राम होता है जो कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है और आवश्यक न्यूनतम कोलेस्ट्रॉल स्तर को बनाये रखने में सहायक हो सकता है। खाद्य रेशा का सेवन करने से खाने की चीजों को पचाने में मदद मिलती है और रक्त शर्करा स्तर को सामान्य रहने में मदद कर सकती है। इस तरह से मधुमेह के नियंत्रण में कुम्हड़ा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त संदर्भों के आधार पर कह सकते हैं कि कुम्हड़ा पूर्ण रूप से औषधीय गुणों से युक्त है इसलिए प्राचीन काल से ही कुम्हड़ा का उपयोग आम जनमानस करता चला आ रहा है। आयुर्वेद के अनुसार कुम्हड़ा त्रिदोष यानी वात, पित्त और कफ को शरीर के आवश्यकतानुसार रखते हुए

मनुष्यों को उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करता है। वही दूसरी तरफ आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार कुम्हड़ा हृदय, आँखों और त्वचा के स्वास्थ्य, पाचन, मधुमेह रोग, प्रतिरक्षा क्रिया, वजन प्रबंधन के साथ-साथ असाध्य रोगों जैसे-कैंसर रोग से शरीर को बचाते हैं। इसमें पोटैशियम, विटामिन 'ए', 'बी', 'सी', खाद्य रेशा (फाइबर) और मैग्नीशियम प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो शरीर को सुन्दरता और उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने में सहायक हो सकता है।

'छोटे स्वार्थ निश्चय ही मनुष्य को भिन्न-भिन्न दलों में टुकड़े-टुकड़े कर रहे हैं, परंतु यदि मनुष्य चाहे तो ऐसा महासेतु निर्माण कर सकता है जिससे समस्त विच्छिन्नता का अंतराल भर जाए।'

-हजारी प्रसाद द्विवेदी

औषधीय एवं सुगंधित पौधों की व्यावसायिक खेती के अवसर एवं लाभ

राजन सिंह, सौरभ सिंह, प्रदीप कर्मकार एवं *यू.एस. गौतम
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
*भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली

औषधीय एवं सगंध पौधों का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में हजारों वर्षों से किया जाता रहा है। औषधीय वे पौधे हैं जिनके विभिन्न भागों में चिकित्सात्मक गुण होते हैं जो विभिन्न रोगों के उपचार में उपयोग किये जाते हैं। प्राचीन काल से पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में खोजे और उपयोग किये जाते रहे हैं। पौधे विभिन्न कार्यों के लिए सैकड़ों रासायनिक यौगिकों का संश्लेषण करते हैं, जिनमें कीड़ों, कवक, बीमारियों और शाकाहारी स्तनधारियों से बचाव और सुरक्षा शामिल है। नई फसलों में किसानों के बीच सबसे ज्यादा लोकप्रिय औषधीय पौधों की खेती हुई है। इनका दवा बनाने के साथ-साथ अन्य कई जरूरी कार्यों में उपयोग किया जाता है। इसके अलावा कम लागत में इन औषधीय फसलों की अच्छी कीमत मिल जाती है। औषधि प्रदान करने वाले पौधे अधिकतर जंगली होते हैं जिनकी खेती नही की जाती है। पौधों की जड़े, तने, पत्तियाँ, फूल, फल, बीज और यहाँ तक कि छाल का उपयोग भी उपचार के लिये किया जाता है। जलवायु परिवर्तन के कारण आजकल किसानों के लिए पारंपरिक फसलों की खेती घाटे का सौदा साबित हो रहा है, लेकिन परम्परागत खेती से हटकर अगर खेती की जाये तो न केवल यह खेती लाभकारी हो सकती है, बल्कि नौकरी के पीछे भाग रहे युवाओं को भी नई राह दिखा सकती है। धीरे-धीरे ही सही पर मधेपुरा जिले के विभिन्न प्रखंडों के दो दर्जन से अधिक किसान औषधीय पौधे की खेती कर पारंपरिक तरीके से सिर्फ धान, गेहूँ, सब्जी की खेती करने वाले किसानों के लिए उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। कोई किसान अंजीर की खेती कर रहे हैं, तो कोई संतरा की, कोई सतावर, सफेद मूसली, काली हल्दी, तो कोई काली धान की खेती कर रहे हैं। ऐसे ही किसानों की बदौलत आने वाले समय किसानों में आर्थिक समृद्धि आयेगी। सतावर की खेती अगर पाँच कट्ठे में की जाए, तो दो साल में 3 लाख रूपये तक की आय हो सकती है। मधेपुरा में जो लोग औषधीय और महंगे फलों की खेती शुरू किये हैं, उनके अनुभव अच्छे ही हैं। सतावर का बाजार भाव 15-35 हजार प्रति कुन्तल, सर्पगंधा की 25-40 हजार, सफेद मूसली की 40-80 हजार, अंजीर की 0.5-1.5 लाख, अश्वगंधा की 5-15 हजार और काली हल्दी की 5-15 हजार रुपए कुन्तल तक मूल्य मिल रहा है।

औषधीय पौधों का महत्व

औषधीय पौधों को भोजन, औषधि, खुशबू, स्वाद, रंजक और भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में अन्य मदों के रूप में उपयोग किया जाता है। औषधीय पौधों का महत्व उसमें पाये जाने वाले रसायन के कारण होता है। औषधीय पौधों का उपयोग मानसिक रोगों, मिर्गी, पागलपन तथा मंद-बुद्घि के उपचार में किया जाता है। औषधीय पौधे कफ एवं वात का शमन करने, पीलिया, आँव, हैजा, फेफड़ा, अण्डकोष, तंत्रिका विकार, पाचन, उन्माद, रक्त शोधक, ज्वर नाशक, स्मृति एवं बुद्घि का विकास करने, मधुमेह, मलेरिया एवं बलवर्धक, त्वचा रोगों एवं ज्वर आदि में लाभकारी हैं।

सगंध पौधों का महत्व

सगंध पौधों से प्राप्त होने वाले तेल का उपयोग आधुनिक सुगंध एवं सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में व्यापक रूप में हो रहा है। सगंध पौधों का तेल मुख्यतः इत्र, साबुन, धुलाई का साबुन, तकनीकी उत्पादों तथा कीटनाशक के रूप में होता है। साथ ही सगंध तेल का उपयोग चबाने वाले तंबाकू, मादक द्रवों, पेय पदार्थों, सिगरेट तथा अन्य विभिन्न खाद्य उत्पादों के बनाने में भी किया जाता है। सगंध पौधे, जैसे-पुदीना के तेल का उपयोग च्यूइंगम, दंत मंजन, कन्फेक्शनरी और भोजन पदार्थों में होता है। खस जैसी सुगंध फसल से सुगंधित द्रव तथा सगंध स्थिरक व फिक्सेटीव के रूप में प्रयोग होता है। भारत में इन पौधों की खेती के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं। आज इन पौधों को खेती के बड़े पैमाने पर वैकल्पिक औषधि एवं सगंध के रूप में उपयोग किया जाता है। औषधीय एवं सगंध पौधों के लिए वैश्विक/राष्ट्रीय बाज़ार की उपलब्धता का होना भी इन पौधों की खेती के लिए उत्तम है। भारत में इन पौधों की खेती के लिए कृषि-प्रौद्योगिकियों, प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों की उपलब्धता का होना भी खेती करने के लिए कृषकों को आसान बनाता है। औषधीय एवं सगंध पौधों की खेती से टिकाऊ आधार पर लाभप्रद रिटर्न प्राप्त किया जा सकता है। भारत में उत्पादन होने वाला सगंध पौधों का तेल फ्रांस, इटली, जर्मनी व संयुक्त राज्य अमेरिका को निर्यात किया जाता है। आज देश के हजारों किसान औषधीय एवं सगंध पौधों की खेती करके अधिक मुनाफा कमा सकते हैं जिससे उनकी आय में वृद्धि होगी।

फसल विविधता, औषधीय एवं सगंधीय फसलों को अपनाना

खेत में कई सालों तक एक ही तरह की फसल उगाने से पैदावार क्षमता प्रभावित होती है। ऐसे में खेत में फसल विविधता के लिए औषधीय खेती करने की सलाह कृषि वैज्ञानिकों की तरफ से दी जाती है। कृषि वैज्ञानिकों का कहना है कि खेत में एक ही तरह की फसल लेने से मिट्टी की उर्वरता प्रभावित होती है। ऐसे में किसानों को फसल विविधता के लिए सलाह दी जाती है। फसल विविधता के इस क्रम में अगर गेहूँ और धान के खेतों को खाली होने के बाद किसान उसमें औषधीय पौधों की खेती करेंगे तो यह उनके लिए बहुत लाभकारी होगा। अगली बार जब वह उसमें धान और गेहूँ उगाएंगे तो उसकी पैदावार अधिक होगी।

लाभ अर्जित करने वाली औषधीय पौधों की खेती

देश-दुनिया में हर्बल उत्पादों की बढ़ती माँग के कारण देश के विभिन्न क्षेत्रों में किसान परंपरागत खेती के अलावा औषधीय और जड़ी-बूटियों की तरफ भी रुख कर रहे हैं। इस बात में कोई शक नहीं कि आने वाला समय हर्बल उत्पादों के लिए उज्जवल है। सरकार की तरफ से भी पारंपरिक फसलों की जगह अन्य विकल्पों पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। केंद्र और राज्य सरकारें आयुर्वेद में दवाई बनाने में उपयोग होने वाली औषधीय पौधों की खेती को प्रोत्साहित कर रही है।

प्रमुख औषधीय एवं सगंध फसलें

- **अकरकरा**

अकरकरा की खेती औषधीय पौधे के रूप में की जाती है। इसके पौधों की जड़ों का उपयोग आयुर्वेदिक दवा बनाने में किया जाता है। पिछले 400 साल से इसका उपयोग आयुर्वेद में हो रहा है। यह कई औषधीय गुणों से भरपूर है। इसके बीज और डंठल की माँग हमेशा बनी रहती है। इसका उपयोग दंतमंजन बनाने से लेकर दर्द निवारक दवाओं और तेल के निर्माण में होता है। अकरकरा की खेती कम मेहनत और अधिक लाभ देने वाली पैदावार हैं। अकरकरा की खेती 6-8 महीने की होती है। इसके पौधों को विकास करने के लिए सम-शीतोष्ण जलवायु की जरूरत होती है। भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से मध्य भारत के राज्यों उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, हरियाणा और महाराष्ट्र में होती है। इसके पौधों पर तेज गर्मी या अधिक सर्दी का प्रभाव देखने को नही मिलता है। इसकी खेती के लिए मिट्टी का पी.एच. मान सामान्य होना चाहिए।

- **अश्वगंधा**

यह एक झाड़ीदार छोटा पौधा है जो 60-90 सेमी. का होता है। इसकी जड़ से अश्व जैसी गंध आती है, इसलिए इसे अश्वगंधा कहते हैं। यह अन्य सभी जड़ी-बूटियों में सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसके उपयोग से तनाव और निद्रा को दूर किया जाता है। इसकी जड़, पत्ती, फल और बीज को औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है। किसानों के लिए अश्वगंधा की खेती बहुत लाभकारी है। किसान इसकी खेती से कई गुना अधिक कमाई कर सकते हैं, इसलिए इसे नकदी फसल भी कहा जाता है। अश्वगंधा को बलवर्धक, स्फूर्तिदायक, स्मरणशक्ति वर्धक, तनाव रोधी एवं कैंसररोधी माना जाता है। अश्वगंधा कम लागत में अधिक उत्पादन देने वाली औषधीय फसल है। अश्वगंधा की खेती कर किसान लागत का तीन गुना लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अन्य फसलों की अपेक्षा प्राकृतिक आपदा का खतरा भी इस पर कम होता है। अश्वगंधा की बुआई के लिए जुलाई से सितंबर का महीना उपयुक्त माना जाता है। वर्तमान समय में पारंपरिक खेती में हो रहे नुकसान को देखते हुए अश्वगंधा की खेती किसानों के लिए काफी महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

- **सहजन**

सहजन में 90 तरह के विटामिन्स, 45 तरह के एंटी ऑक्सीजडेंट गुण और 17 प्रकार के अमीनो एसिड पाये जाते हैं। इसलिए इसे पोषक तत्वों का खजाना कहा जाता है। कम लागत में तैयार होने वाली इस फसल की विशेषता यह है कि इसकी एक बार रोपड़ बुवाई के बाद 4 साल तक बुवाई नहीं करनी पड़ती है। सहजन लगाने के 10 महीने बाद एक एकड़ भूमि में किसान एक लाख रूपये तक कमा सकते हैं। इसका उपयोग सब्जी और स्वास्थवर्धक दवा बनाने में होता है। देश के अधिकतर हिस्सों में इसकी खेती की जा सकती है। आयुर्वेद में इसके पत्ते, छाल और जड़ तक का उपयोग किया जाता है। करीब पाँच हजार साल पहले आयुर्वेद ने सहजन की जिन खूबियों को पहचाना था, आधुनिक विज्ञान में वे साबित हो चुकी हैं। देश के अपेक्षाकृत प्रगतिशील दक्षिणी भारत के राज्यों आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु और कर्नाटक में इसकी खेती व्यापक पैमाने पर होती है।

- **लेमनग्रास**

लेमनग्रास को आम भाषा में नींबू घास कहा जाता है, क्योंकि इसमें नींबू जैसी महक होती है। भारतीय लेमनग्रास के तेल में विटामिन 'ए' और सिंट्राल की अधिकता होती है। लेमनग्रास से निकलने वाले तेल की बाजार में बहुत माँग है। लेमन ग्रास

से निकले तेल को कॉस्मेटिक्स, साबुन, तेल और दवा बनाने वाली कंपनियाँ खरीद लेती हैं। यही वजह है कि किसानों का इस फसल की ओर रूझान भी बढ़ा है। किसान इसकी खेती करके अच्छा लाभ कमा सकते हैं। खास बात यह है कि इस पर आपदा का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसकी फसल को पशु नहीं खाते हैं, इसलिए यह रिस्क फ्री फसल है। इसकी रोपाई के बाद सिर्फ एक बार निराई करने की जरूरत पड़ती है, तो वहीं सिंचाई भी साल में 4- 5 बार ही करनी पड़ती है। इसलिए इसकी काफी माँग बनी रहती है। वर्ष 2022 तक किसानों की आमदनी दोगुनी करने के वादे को पूरा करने की कवायद में जुटी भारत सरकार ने एरोमा मिशन के तहत् जिन औषधीय और सगंधीय पौधों की खेती का रकबा बढ़ा रही है उसमें एक लेमनग्रास भी है। लेमन ग्रास का पौधा लगाने के बाद यह लगभग छः महीने में तैयार हो जाता है। उसके बाद हर 70-80 दिनों पर किसान इसकी कटाई कर सकते हैं। साल भर में इस पौधे की 5-6 कटाई की जा सकती है।

- **सतावर**

सतावर एक औषधीय फसल है। इसका प्रयोग कई प्रकार की दवाइयों को बनाने के लिए होता है। बीते कुछ वर्षों में इस पौधे की माँग बढ़ी है और इसकी कीमत में भी वृद्धि हुई है। किसान इसकी खेती से काफी अच्छी कमाई कर सकते हैं। सतावर की फसल जुलाई से सितंबर तक लगायी जाती है। सतावर की खेती से एक एकड़ में लगभग 5 लाख रूपये की कमाई कर सकते हैं। इसके पौधे को तैयार होने में करीब एक साल से अधिक का समय लग जाता है। सतावर की खेती इसलिए भी फायदे की खेती है कि इसमें कीट पतंग नहीं लगते हैं। वहीं, पौधे कांटेदार होने की वजह से जानवर भी इसे नहीं खाते हैं। सतावर की खेती उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, उत्तराखंड एवं राजस्थान में बड़े पैमाने पर होती है।

- **स्टीविया**

इसकी खेती अब भारत में व्यवसायिक रूप में होने लगी है। कई कंपनियाँ पहले ही कॉन्ट्रैक्ट कर स्टीविया की खेती करा रही हैं। इससे किसानों को यह लाभ हो रहा कि उन्हें उपज को बेचने की चिंता नहीं करनी पड़ रही है। इसकी खेती कर रहे उत्तर प्रदेश के सहारनपुर के एक किसान बताते हैं कि इससे एक एकड़ में 6 लाख रुपए तक कमाई हो जाती है जबकि खर्च सिर्फ एक लाख रुपए आता है। मेडिसिनल पौध स्टीविया की खेती करने के लिए प्रति वर्ष 20-25 टन गोबर की सड़ी खाद या केचुआ खाद 7-8 टन प्रति एकड़ दी जानी चाहिए। इस फसल की सबसे अच्छी बात है कि इसमें कोई रोग नहीं लगता है। स्टीविया का रोपण कलमों से किया जाता है। इसके लिए 15 सेमी. लंबी कलमों को काटकर पॉलीथीन की थैलियों में तैयार कर लिया जाता है। इसकी खेती से एक और फायदा यह है कि इसमें सिर्फ देशी खाद से ही काम चल जाता है। यह मधुमेह रोगियों में शर्करा की आवश्यकता बिना किसी जोखिम के पूरा करने में सक्षम है।

- **हल्दी**

हल्दी 90-100 सेमी. तक बढ़ने वाला पौधा है जिसमें जड़ की गाठों में हल्दी मिलती है। हल्दी को आयुर्वेद में प्राचीन काल से ही चमत्कारी पौध के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसे हल्दी के अतिरिक्त हरिद्रा, कुरकुमा, लौंगा, गौरी वट्ट विलासनी, कुमकुम टर्मरिक नाम दिये गये हैं। आयुर्वेद में हल्दी महत्वपूर्ण औषधि मानी गयी है। भारतीय रसोई में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक रूप से इसको बहुत शुभ समझा जाता है। विवाह में तो हल्दी की रस्म का विशेष महत्व है। हल्दी का उपयोग धार्मिक कार्यो के अलावा मशाला, रंग सामग्री, औषधि तथा उपटन के रूप में किया जाता है। भोजन के प्रमुख तत्व के रूप में इसका उपयोग भोजन का स्वाद बढाने में किया जाता है। हल्दी में कैंसर रोधी गुण पाये जाते हैं। सौंदर्य में हल्दी का उपयोग त्वचा में निखार लाने के लिये किया जाता है। आन्तरिक रक्त स्त्राव की स्थिति में हल्दी का उपयोग दर्दनाशक के रूप में किया जाता है। हल्दी की अनुमानित उपज 25-30 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है

- **पुदीना (मेन्था)**

पुदीना (मेन्था) की उत्पत्ति स्थान चीन माना जाता है। चीन से यह जापान ले जाया गया, वहाँ से यह विश्व के विभिन्न देशों में पहुँचा। इसके पौध को भारत में जापान से लाया गया है, इसलिए इसे जापानी पुदीना भी कहते हैं। यह फैलने वाला, बहुवर्षीय शाकीय पौध है, पत्तियों के किनारे कटे-फटे होते हैं, जिन पर सफेद रोंये पाये जाते हैं। इसमें पुष्प सफेद या हल्के बैंगनी रंग के गुच्छों में आते हैं। इसकी जड़े गूदेदार सफेद रंग की होती है जिन्हें भूस्तारी (स्टोलन) कहते हैं। मेन्था का प्रसारण इन्हीं भूस्तारी से होता है। इसके ताजा शाक से तेल निकाला जाता है। ताजा शाक में तेल की मात्रा लगभग 0.8-1.0 प्रतिशत तक पायी जाती है। इसके तेल में मेंथॉल, मेन्थोन और मिथाइल एसीटेट आदि अवयव पाये जाते हैं, लेकिन मेन्थाल तेल का मुख्य घटक है। तेल में मेन्थाल की मात्रा लगभग 75-80 प्रतिशत होती है। इसके तेल का उपयोग कमरदर्द, सिरदर्द, श्वसन विकार के लिए औषधियों के निर्माण में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसके तेल का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, टूथपेस्ट, शेविंग क्रीम लोशन, टॉफी,

च्यूंगम, कैन्डी आदि बनाने में भी किया जाता है। इस प्रकार से कई प्रकार के उद्योगों में काम आने के कारण इसकी माँग बढ़ रही है। मेन्था के उत्पादन पर मृदा, जलवायु, उन्नत किस्म और वातावरण का विशेष प्रभाव पड़ता है। इसके उत्पादन की उन्नत कृषि तकनीक अपनाने पर एक हेक्टेयर में लगभग 250-300 कुन्तल ताजा शाक तथा लगभग 200-250 लीटर तेल प्राप्त होता है। मेन्था आयल की कीमत में काफी उतार-चढ़ाव है। विगत वर्ष में तेल की दर 600-1700 प्रति लीटर तक रही है।

- **मेथी**

मेथी तिपतिया घास के समान एक जड़ी-बूटी है। बीजों का स्वाद मेपल सिरप के समान होता है और इनका उपयोग खाद्य पदार्थों और दवा में किया जाता है मेथी एक छोटा सा पौधा है जिसमें हरे पत्ते, छोटे सफेद फूल और फली होती है जिसमें छोटे, सुनहरे-भूरे रंग के बीज होते हैं। यह पौधा 2-3 फीट तक बढ़ सकता है। भारतीय आमतौर पर मेथी के पौधे का उपयोग सब्जियों या पराठों में करते हैं। बीज का उपयोग खास़ कर खाना पकाने और दवा में किया जाता है। भारत में मेथी के बीज और पाउडर का उपयोग काफी सदियों से किया जा रहा है। खाद्य और दवाई के अलावा यह साबुन और शैम्पू जैसे उत्पादों में भी उपयोगी किया जाता है। मेथी दाना के अनेक औषधिय गुण हैं। मेथी को मधुमेह और कई अन्य रोगों में उपयोगी किया जाता है। इसके लिए मिट्टी का पी.एच. मान 6-7 के बीच होना चाहिए। मेथी की बुवाई के लिए सितंबर माह सबसे उपयुक्त होता है। मैदानी इलाकों में इसकी बुवाई के लिये सितंबर से लेकर मार्च का समय, जबकि पहाड़ी इलाकों में जुलाई से लेकर अगस्त तक का समय सबसे बढ़िया माना जाता है।

- **सौंफ**

मसालों की भूमि भारत, सौंफ का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता क्रमशः 0.66 लाख हेक्टेयर, 1.04 लाख टन व 15.75 कुन्तल/हेक्टेयर है। देश के 'बीजीय मसालों का कटोरा' व सबसे बड़े सौंफ उत्पादक राज्यों राजस्थान व गुजरात में क्रमशः 30,720 टन व 96,770 टन सौंफ का उत्पादन होता है। भारत से सौंफ के बीजों (दानों) का निर्यात लगभग 17,300 टन होता है जिसका मूल्य 16,001 लाख रुपये है। इनका देश के बीजीय मसालों के निर्यात में मात्रात्मक व मूल्य आधार पर क्रमशः 6.82 प्रतिशत व 6.51 प्रतिशत हिस्सा है। सौंफ के बीज में लगभग 9.5 प्रतिशत प्रोटीन, 13.4 प्रतिशत खनिज लवण व विभिन्न विटामिन की भी संतोषजनक मात्रा पायी जाती है। इसे शर्बत, ठंडाई, अचार, सौंफ पानी और शिशुओं की दवा बनाने में इस्तेमाल करते हैं। खेत की तैयारी से पहले 10-15 टन/ हेक्टेयर अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट मृदा में मिलाते हैं। मृदा की जाँच के आधार पर नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश की मात्रा क्रमशः 90, 60 व 60 किग्रा./हेक्टेयर की दर से देते हैं। सामान्यतः 30 किग्रा. नत्रजन व सम्पूर्ण फॉस्फोरस व पोटाश मशीन द्वारा अंतिम जुताई के साथ देते हैं। शेष 30 किग्रा. नत्रजन बुआई के 45 दिनों बाद व 30 किग्रा. नत्रजन फूल आने के समय सिंचाई के साथ देते हैं। आवश्यकता होने पर सूक्ष्म पोषक तत्व जिंक सल्फेट, फेरस सल्फेट व कैल्शियम सल्फेट के प्रत्येक तत्व का 0.5 प्रतिशत की दर से छिड़काव करते हैं। सौंफ की फसल के दानों के गुच्छे एक साथ नहीं पकते हैं। जब पूर्ण आकार के दानों का रंग हरे से पीला होने लगे तो गुच्छों को तोड़ लेना चाहिए, क्योंकि इस समय दानों में वाष्पशील तेल की मात्रा अधिक होती है। काटने के बाद सूखते समय फसल को बार-बार पलटते रहना चाहिए जिससे फफूँद न लगे। जब दानों का आकार पूर्ण विकसित दानों की तुलना में आधा होता है, तभी गुच्छों की कटाई कर साफ जगह पर छाया में फैलाकर सुखाना चाहिए। इसके लिए 10-15 दिनों के अंतराल पर 3-4 बार कटाई कर सकते हैं। सामान्यतः इसकी कटाई अप्रैल में शुरू हो जाती है। बुआई हेतु बीज प्राप्त करने के लिए मुख्य छत्रकों (गुच्छों) के दाने जब पूर्णतः पककर पीले पड़ने लगे तभी कटाई करनी चाहिए।

- **अदरक**

अदरक प्रमुख मसालों में एक है इसकी खेती नगदी फसल के रूप में की जाती हैं। अदरक का वानस्पतिक नाम *जीन्जीबर ओफीसीनेली* है। अदरक के भूमिगत रूपांतरित तना अर्थात् प्रकंद का उपयोग किया जाता हैं। इन प्रकंदों को फसल के खोदाई के बाद हरा तथा सुखाकर दानों ही रूपों में उपयोग करते हैं। ताजा अदरक व्यंजनों को खूशबूदार तथा चटपटा बनाने एवं मुरब्बा बनाने के काम आते हैं। चाय का स्वाद बढ़ाने के लिये विशेष तौर पर सर्दियों में अदरक का उपयोग किया जाता है। अदरक का उपयोग मसालों के रूप में सलाद, अचार, मुरब्बा, चटनी आदि के रूप में किया जाता हैं। पकी गांठों को सुखाकर उनसे सोंठ तैयार किया जाता है जिसका काफी मात्रा देशों में निर्यात किया जाता है। सबसे अधिक उत्पादन भारत वर्ष में होता है। सभी देशों को मिलाकर जितना अदरक का उत्पादन होता है उसमें भारत वर्ष अकेले 33 प्रतिशत अदरक का उत्पादन करता है। अदरक का प्रयोग

सब्जियों को चटपटा बनाने के साथ गुणकारी बनाने में किया जाता हैं। यह घबराहट, थकान, प्यास आदि को शांत करके शरीर में ताजगी और ठंडक भरती है। कफ से ग्रस्ति लोगों के लिये अदरक काफी कारगर औषधि के रूप में उपयोग होता है। अदरक के उपयोग से छाती पर जमा सारा बलगम निकालकर बाहर करती है। अतः खांसी नहीं बनने पाती है। सिरदर्द, कमर के दर्द, पेट दर्द, बेचैनी, घबराहट आदि छोटे-मोटे रोगों के लिये यह रामबाण औषधि है। अदरक को चूसते ही मुँह में लार ग्रन्थि अपना काम शुरू कर देती है। इसमें कंठ की खशखशाहट दूर होती है। स्त्रियों के मासिक धर्म, गर्भाधान एवं प्रसव के बाद स्तन में दूध न उतरने की शिकायत रहती है, उनके लिये अदरक कीमती दवा से भी बड़ा काम करती है। अदरक की फसल सामान्यतः 8-9 महीनों में तैयार होती हैं जब पौधे की पत्तियाँ पीले पड़नी शुरू हो जाये तब खुदाई करनी चाहिए। जिन इलाकों में पाला नहीं पड़ता है वहाँ इसे कुछ दिन बाद भी खुदाई की जा सकती है। खुदाई के बाद इसे 2-3 दिनों तक छाया में सुखायें। एक हेक्टर क्षेत्र में औसत 100-150 कुन्तल पैदावार होती है।

- **लहसुन**

लहसुन नगदी फसल है। इसकी खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। लहसुन का उपयोग मसालों के अतिरिक्त औषधि के रूप में जैसे-अपच, फफड़ों की बीमारियों, रक्तचाप, दमा आदि में होता है। इसके कन्द में अनेक छोटे-छोटे कन्द होते हैं जो जवा कहलाते हैं और एक सफेद या गुलाबी पतली झीली से आवेष्टित होती है। लहसुन की खेती मुख्यतः रबी मौसम में होती है क्योंकि अत्यन्त गर्म और लम्बे दिन मान वाला समय कन्दों की बढ़वार के लिए उपयुक्त नहीं होता है। ऐसी जगह जहाँ न तो बहुत गर्मी हो और न बहुत ठण्डा हो, लहसुन की खेती के लिए उपयुक्त है। लहसुन की खेती सभी प्रकार के जीवांशयुक्त भूमि में किया जा सकता है लेकिन अधिक उपज के लिये जीवांशयुक्त दोमट भूमि जिसमें जल निकास की व्यवस्था हो सबसे उपयुक्त होता है। भूमि की 4-5 बार गहरी जुताई (10-15 सेमी.) कर एवं पाटा लगाकर मिट्टी को भूरभूरी बना लेना चाहिए। आखिरी जुताई से तीन सप्ताह पूर्व कम्पोस्ट या सड़ी गोबर की खाद मिला लें। कम्पोस्ट या गोबर खाद का प्रयोग रोपाई/बोआई से15-20 दिनों पहले डालकर जुताई करना चाहिए। नत्रजन की मात्रा को तीन बराबर भागों में बाँट कर एक भाग नत्रजन एवं फास्फोरस, पोटाश तथा ज़िंक की पूरी मात्रा मिट्टी में अंतिम जुताई या रोपाई/बोआई के दो दिन पहले मिला दें। नत्रजन की शेष मात्रा उपरिवेशन (टॉप ड्रेसिंग) की जाती है। पहला उपरिवेशन 25-30 दिनों के बाद खेतों से घास निकालकर सिंचाई करने के बाद एवं दूसरा उपरिवेशन पहले उपरिवेशन से 30-50 दिनों के बाद करें। लहसुन की फसल 130-180 दिनों में खोदाई के लिये तैयार हो जाती है। पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाये और सुखने लग जाये सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। इसके कुछ दिनों बाद लहसुन की खुदाई कर लेनी चाहिए। इसके बाद गाँठों को 3-4 दिनों तक छाया में सुखा लेते हैं। फिर 2-3 सेमी. छोड़कर पत्तियाँ को शल्ककंदों से अलग कर लेते हैं। अच्छी तरह सुख जाने के बाद गांठों को 70 प्रतिशत आर्द्रता पर 6-8 महीनों तक भण्डारित किया जा सकता है। सामान्यतः 6-8 महीनों के भण्डारण में 15-20 प्रतिशत तक नुकसान सुखने से होता है। पत्तियों सहित बण्डल बनाकर रखने से कम हानि होती है। लहसुन की ऊपज प्रयुक्त किस्मों एवं फसल की देख-रेख पर निर्भर करता है। इसकी औसत उपज 100-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

- **करी पत्ता**

करी पत्ता उष्णकटिबंधीय तथा उप-उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में पाया जाने वाला एक पेड़ है। अक्सर रसेदार व्यंजनों में इस्तेमाल होने वाले इसके पत्तों को 'करी पत्ता' कहते हैं। असल में करी पत्ता, तेज पत्ता या तुलसी के पत्तों, जो भूमध्यसागर में मिलने वाली खुशबूदार पत्तियाँ हैं, से बहुत अलग है पेड़ छोटा होता है जिसकी ऊँचाई 2-4 मीटर होती है और जिसके तने का व्यास 40 सेमी. तक होता है। इसकी पत्तियाँ नुकीली होती हैं, हर टहनी में 11-21 पत्तीदार कमानियाँ होती हैं और हर कमानी 2-4 सेमी. लम्बी व 1-2 सेमी. चौड़ी होती है। ये पत्तियाँ बहुत ही खुशबूदार होती हैं। इसके फूल छोटे-छोटे, सफ़ेद रंग के और खुशबूदार होते हैं। इसके छोटे-छोटे, चमकीले एवं काले रंग के फल तो खाये जा सकते हैं, लेकिन इनके बीज ज़हरीले होते हैं। *मुराया कोएनिजी* की पत्तियों का आयुर्वेदिक चिकित्सा में जड़ी-बूटी के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। इनके औषधीय गुणों में (एंटी-डायबिटीक एंटीमाइक्रोबियल, एंटी-इन्फ्लेमेटरी, हिपैटोप्रोटेक्टिव एंटी-हाइपरकोलेस्ट्रौलेमिक) इत्यादि शामिल हैं। करी पत्ता लम्बे और स्वस्थ बालों के लिए भी बहुत लाभकारी माना जाता है।

बीज प्रौद्योगिकीः नये आयाम

राघवेन्द्र प्रताप सिंह, राजन सिंह, सौरभ सिंह, अनूप प्रताप सिंह, सुनील कुमार सिंह एवं अनीष कुमार सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

भारत में बीज प्रौद्योगिकी का समृद्ध इतिहास और परंपरा रही है। वर्ष 1960 के दशक से भारत ने विभिन्न बीज प्रौद्योगिकियों जैसे- संकरण, ऊतक संवर्द्धन, मॉलीक्यूलर मार्कर, ट्रांसजेनिक आदि को विकसित करने और अपनाने में महत्वपूर्ण प्रगति की है। बीज प्रौद्योगिकी विभिन्न शस्य दशाओं में अनुवांशिक एवं भौतिक गुणवत्ता में सुधार करने के विज्ञान और कला को संदर्भित करती है। बीज प्रौद्योगिकी कम लागत पर सतत् कृषि के लिये महत्वपूर्ण लाभ प्रदान करती है। जी 20 देशों के लिये बीज केंद्र बन सकने की अप्रयुक्त क्षमता के साथ भारतीय बीज बाज़ार का आकार लगभग 4-6 विलियन डॉलर तक पहुँच गया है। बीज उत्पादन ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कई चरण होते हैं जिसमें शोध, प्रजनन, उत्पादन एवं प्रमाणीकरण व विपणन व्यावसायिक रूप से किया जाता है।

अनुवांशिक संसाधनों के संरक्षण का महत्व

विशेष रूप से घरेलू उद्यान पारंपरिक किस्मों के खेत पर संरक्षण का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। घरेलू उद्यान प्रबंधक पौधों की प्रजातियों के बीजों को संरक्षित करने में और भी बड़ी भूमिका निभा सकते हैं। जब बाज़ार के आउटलेट उपलब्ध होते हैं, तो यह फायदेमंद होता है, क्योंकि फसलों के बीजों के उत्पादन और बिक्री से काफी आय प्राप्त की जा सकती है।

बीज का चयन

बीज उत्पादन करते समय निम्नलिखित बातों पर विचार करना चाहिएः

- बीजों को केवल स्वस्थ फसल से ही उत्पादित किया जाना चाहिए।
- रोगग्रस्त या कीट के प्रकोप वाली फसल से बीज प्राप्त नहीं करना चाहिए।
- यदि बड़ी मात्रा में बीज की आवश्यकता हो तो एक भूखंड को केवल बीज उत्पादन के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए, अन्य समान फसलों से अलग।
- अच्छे बीजों के आदान-प्रदान के साथ मानकों के आधार पर बीज भंडारण करना चाहिए।

बीज और प्रसंस्करण

बीजों का प्रसंस्करण निम्न प्रकार से किया जाता हैः

- गूदेदार फलों को तब तक किण्वित करें जब तक बीज गूदे से अलग न हो जायें। फलों के बीजों को ठीक से सूखने के बाद बीज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।
- बीज निष्कषर्ण के बाद बीजों को छाया में सुखायें। एक बार सूख जाने के बाद, भंडारण से पहले बीजों को सभी बाहरी पदार्थों से साफ़ कर देना चाहिए।
- फली में बने बीजों को पौधे पर सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए। जब बीज ठीक से सूख जाते हैं तो फलियों को पौधे से तोड़ लिया जाता है। बीज के ठीक से सूखने से पहले फलियों को पौधे से तोड़ दिया जाता है। भंडारण में रखने से पहले फलियों को और अधिक सुखाया जाना चाहिए।

बीज भंडारण

बीजों को ठंडी, सूखी जगह पर भण्डारणः एयरटाइट कंटेनर (जैसे- प्लास्टिक बैग या सीलबंद मिट्टी के बर्तन) में संग्रहित किया जाना चाहिए। आमतौर पर, बीजों में नमी की मात्रा 8-9 प्रतिशत से कम रखी जानी चाहिए।

बीज उत्पादन हेतु बीज गुणन प्रणाली

प्रजनक, आधार एवं प्रमाणित बीज, बीज गुणन श्रृंखला में गुणवत्ता के लिए पर्याप्त है ताकि प्रजनक से किसान तक पहुँचने के दौरान किस्म की शुद्धता बनी रहे।

ब्रीडर बीज

प्रजनक बीज किसी किस्म के नाभिकीय बीज से उत्पादित किया जाता है और इसका उत्पादन मूल प्रजनक या प्रायोजित प्रजनक द्वारा किया जाता है। प्रजनक बीज उत्पादन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषदद्ध नई दिल्ली का अधिदेश है और इसे निम्नलिखित की सहायता से किया जा रहा है।

(i) भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र और विभिन्न फसलों की अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना।

(ii) विभिन्न राज्यों में स्थापित राज्य कृषि विश्वविद्यालय।

(iii) चयनित राज्य बीज निगमों द्वारा मान्यता प्राप्त प्रायोजित प्रजनक संस्थान।

(iv) गैर-सरकारी संगठन।

आधार (फाउंडेशन) बीज

आधार बीज, प्रजनक बीज से उत्पादित किया जाता है जिसे स्पष्ट रूप से पहचाना जा सके। आधार बीज के उत्पादन की जिम्मेदारी राष्ट्रीय बीज निगम लिमिटेड (एन.एस.सी), एस.एफ.सी.आई., राज्य बीज निगम, राज्य कृषि विभाग और निजी बीज उत्पादकों को सौंपी गई है।

प्रमाणित बीज

प्रमाणित बीज आधार बीज से उत्पादित किया जाता है। स्व-परागण वाली फसलों में प्रमाणित बीजों से भी प्रमाणित बीज उत्पादित किये जा सकते हैं। प्रमाणित बीज उत्पादन राज्य बीज निगम, विभागीय कृषि फार्म, सहकारी समितियों आदि के माध्यम से आयोजित किया जाता है। बीजों का वितरण कई चैनलों के माध्यम से किया जाता है, जैसे- ब्लॉक और गाँव स्तर पर विभागीय आउटलेट, सहकारी समितियाँ, बीज निगमों के आउटलेट, निजी डीलर आदि। राज्य सरकारों के प्रयासों को एनएससी और एसएफसीआई द्वारा पूरक बनाया जा रहा है, जो राष्ट्रीय महत्व की किस्मों का उत्पादन करते हैं। एनएससी अपने स्वयं के विपणन नेटवर्क और डीलर नेटवर्क के माध्यम से बीजों का विपणन करता है। एसएफसीआई बीजों का विपणन मुख्य रूप से राज्य कृषि विभागों और राज्य बीज निगमों के माध्यम से करता है। एनएससी और राज्य बीज निगमों द्वारा प्रमाणित बीज का उत्पादन मुख्य रूप से प्रगतिशील किसानों के साथ अनुबंध खेती व्यवस्था के माध्यम से आयोजित किया जाता है। एसएफसीआई खेतों पर बीज उत्पादन का कार्य करता है। निजी क्षेत्र ने भी सब्जियों और संकर मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास, अरंडी, सूरजमुखी, धान आदि जैसी फसलों के गुणवत्ता वाले बीजों की आपूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी शुरू कर दी है। प्रमाणित/गुणवत्तापूर्ण बीजों की आवश्यकता का आंकलन राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न फसल किस्मों के अंतर्गत बोए गए क्षेत्र, संकर और स्व-परागण किस्मों द्वारा कवर किये गये क्षेत्र के साथ-साथ प्राप्त बीज प्रतिस्थापन दर के आधार पर किया जाता है। भारत सरकार समय-समय पर द्वि-वार्षिक क्षेत्रीय बीज समीक्षा बैठकों में राष्ट्रीय खरीफ और रबी सम्मेलनों में राज्य सरकारों एवं बीज उत्पादक एजेंसियों के साथ विस्तृत बातचीत के माध्यम से बीजों की आवश्यकता और उपलब्धता का आंकलन करती है। कृषि और सहकारिता विभाग बीज उत्पादक एजेंसियों के साथ गठजोड़ की व्यवस्था की सुविधा प्रदान करता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बीजों की आवश्यकता को यथासंभव अधिकतम सीमा तक पूरा किया जा सके।

किस्म पंजीकरण प्रक्रिया

प्रत्येक किस्म को मूल्यांकन के 3 चरणों से गुज़रना पड़ता है। प्रजनक अपने स्थानीय कार्यक्रमों में किये गये मूल्यांकन के आधार पर सर्वोत्तम प्रविष्टियाँ प्रारंभिक उपज मूल्यांकन परीक्षण (आई.ई.टी.) या प्रारंभिक उपज परीक्षण (पी.वाई.टी.) में परीक्षण के लिए योगदान करते हैं। ये परीक्षण प्रत्येक क्षेत्र में चयनित स्थानों पर आयोजित किये जाते हैं। आई.ई.टी./पी.वाई.टी. में उपज, रोग और गुणवत्ता के दृष्टिकोण से योग्य प्रविष्टियों का एक समान क्षेत्रीय परीक्षणों (यू.आर.टी.) में परीक्षण किया जाता है। इन परीक्षणों को उन्नत वैरिएटल परीक्षण (ए.वी.टी.) या समन्वित वैरायटल परीक्षण (सी.वी.टी.) भी कहा जाता है।

भारतीय कृषि के लिये बीज प्रौद्योगिकी क्यों महत्वपूर्ण है?

1. उच्चतर उत्पादकता

- बीज प्रौद्योगिकी ऐसे उन्नत किस्मों को विकसित करके फसलों की उपज क्षमता को बढ़ा सकती है जिनमें अधिक उपज, कीटों एवं रोगों के प्रति प्रतिरोध, सूखे या लवणता के प्रति सहनशीलता जैसे वांछनीय गुण होते हैं।
- बीज प्रौद्योगिकी प्राइमिंग या फिजियोलोजिकल एडवांसमेंट प्रोटोकॉल का उपयोग कर अंकुरण दर, अंकुरण शक्ति और बीज के पादप स्थापन में सुधार कर सकती है।

2. उच्च निवेश (इनपुट) उपयोग दक्षता

- उन्नत बीज प्रौद्योगिकी जैसे फिल्म कोटिंग, पेलेटिंग या बीज उपचार का उपयोग कर उर्वरकों, कीटनाशकों और जल जैसे-निवेशों (इनपुट) की मात्रा एवं लागत को कम कर इष्टतम मात्रा में सीधे बीज तक पहुँचा सकते हैं।

बीज प्रौद्योगिकियों के कुछ उदाहरण

सब्जी के बीज

- भारत में पारंपरिक प्रजनन और जैव प्रौद्योगिकी की विधियों का उपयोग करके सब्जियों की उन्नत और संकर किस्में विकसित की जा रही हैं।
- भारत ने सब्जी बीजों की गुणवत्ता और अंकुरण में सुधार के लिये विभिन्न बीज संवर्द्धन तकनीकों जैस-फिल्म कोटिंग, पेलेटिंग, प्राइमिंग, बायो-स्टिमूलस, न्यूट्रीएंट्स, बायोलॉजिकल्स आदि की भी शुरुआत की है।

बीज नियम, 1968

- ये अधिनियम और नियम भारत में बीजों के गुणवत्ता नियंत्रण और प्रमाणीकरण को नियंत्रित करते हैं। ये बीज परीक्षण, लेबलिंग और विपणन के लिये मानक एवं प्रक्रियाएँ भी निर्धारित करते हैं।

भारत में बीज क्षेत्र की प्रमुख चुनौतियाँ एवं अवसर

प्रमुख चुनौतियाँ

बीज का लघु जीवनकालः प्रमाणित बीज केवल एक मौसम के लिए अच्छे होते हैं और अगले मौसम में उपयोग करने से पहले उनका पुनः सत्यापन किया जाना चाहिए।

माँग की अप्रत्याशितताः प्रकृति की अप्रत्याशितता, वस्तु की कीमतों में बदलाव और अन्य कारकों के कारण, डीलरों (निजी या सहकारी) के लिए प्रमाणित बीजों की माँग का सटीक अनुमान लगाना बेहद मुश्किल है।

प्रभावी निगरानी तंत्र का अभावः बिक्री के स्थान पर, बीज की गुणवत्ता को नियंत्रित करने के लिए कोई प्रभावी निगरानी प्रणाली नहीं है। एक बार जब उत्पाद बेच दिया जाता है, तो बीज उत्पादक और विपणन एजेंसियों का उनके उत्पादन पर कोई नियंत्रण नहीं होता है।

बुनियादी ढांचे की कमीः किसानों तक सही समय पर बीज की पहुँच चुनौती बनी हुई है। दूरदराज के गाँवों में खराब बुनियादी ढांचा, बुवाई के समय क्रय शक्ति की कमी और वर्षा की अनिश्चितता, जिस पर बुवाई बहुत अधिक निर्भर है, समस्या को बढ़ा देती है।

विस्तार सेवायेंः कृषि विभाग के विस्तार कार्यकर्ताओं को आमतौर पर प्रभावी प्रभाव के लिए परिणाम-उन्मुख दृष्टिकोण पर जोर देने के बजाय केवल मिनीकिट वितरित करने और क्षेत्र-प्रदर्शन आयोजित करने के उद्देश्य से सक्रिय रूप में देखा जाता है।

सही मानसिक दृष्टिकोण से काम कर रहे व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्त करने से कोई रोक नहीं सकता; गलत मानसिक दृष्टिकोण से काम कर रहे व्यती की इस दुनिया में कोई मदद नहीं कर सकता।

-थोमस जेफ्फेर्सन

जलवायु परिवर्तन के युग में टिकाऊ कृषि

अनूप प्रताप सिंह, राजन सिंह एवं राघवेन्द्र प्रताप सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

टिकाऊ कृषि एक दर्शन और खेती की पद्धतियों का एक तरीका है। टिकाऊ कृषि को अपनाने का मतलब है कि बिना पर्यावरण (मिट्टी, हवा व पानी) को नुकसान या प्रदूषित किये बिना किसी विशिष्ट फसल में पर्याप्त उत्पादन करना हैं।

- सतत् कृषि, पारंपरिक संसाधन-गहन कृषि का अत्यंत जरूरी विकल्प उपलब्ध कराती है। पारंपरिक कृषि के दीर्घकालिक प्रभावों में मिट्टी की ऊपरी परत का खराब होना, भू-जल स्तर में गिरावट और जैव विविधता में कमी शामिल है। जलवायु से जुड़ी चुनौतियों का सामना कर रहे विश्व में भारत की पोषण सुरक्षा को सुनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- सतत् कृषि व्यापक रूप से कम संसाधन-गहन कृषि, फसलों और पशुधन में अतिरिक्त विविधता के साथ किसानों की स्थानीय परिस्थिति सह क्षमता को दर्शाता है।
- भारत में सतत कृषि मुख्यधारा से बहुत दूर है। सिर्फ पांच एस.ए.पी.एस. (फसल चक्र, कृषि वानिकी, वर्षा जल संचयन, पलवार और लक्षित) का विस्तार शुद्ध बुवाई क्षेत्र के 5 प्रतिशत से अधिक है।
- अधिकतर एसएपीएस को कुल भारतीय किसानों में 50 लाख (या चार प्रतिशत) से भी कम किसान ही इस्तेमाल करते हैं।
- फसल चक्र भारत में सबसे लोकप्रिय एस.ए.पी.एस. है, जिससे लगभग 30 मिलियन हेक्टेयर भूमि और लगभग 15 मिलियन किसान जुड़े हैं।
- वर्तमान में जैविक खेती का विस्तार केवल 2.8 मिलियन हेक्टेयर या भारत के 140 मिलियन हेक्टेयर के शुद्ध बुवाई क्षेत्र का दो प्रतिशत है। प्राकृतिक खेती भारत में सबसे तेजी से बढ़ने वाली सतत कृषि पद्धति है और इसे लगभग 8,00,000 किसानों ने अपनाया है।
- कृषि वानिकी और धान गहनता प्रणाली (एस.आर. आई.), एसएपीएस के आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक परिणामों पर प्रभावों का अध्ययन करने वाले शोधकर्ताओं के बीच सबसे लोकप्रिय हैं।
- राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (एन.एम.एस.ए.) के लिए बजट आवंटन कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के कुल बजट का केवल 0.8 प्रतिशत है।
- अध्ययन द्वारा चिन्हित 16 प्रथाओं में से आठ को विभिन्न केंद्रीय सरकारी योजनाओं के तहत कुछ बजटीय सहायता मिलती है। इनमें से जैविक खेती पर नीतियों में सबसे ज्यादा ध्यान केंद्रित किया गया है,क्योंकि भारतीय राज्यों ने भी जैविक खेती के लिए विशेष नीतियां बनाई हैं।

टिकाऊ कृषि

किसानों को टिकाऊ कृषि को न अपनाने के परिणामों का पता नहीं है, इसलिए वे पुराने पारंपरिक तरीकों का उपयोग करते रहते हैं जो प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करते हैं और पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। टिकाऊ कृषि पद्धतियों को स्थापित करने के लिए छोटे-छोटे कई कदमों को अमल में लेने की आवश्यकता होती है जो सभी मिलकर एक किसान को 3-4 वर्षों में अगले स्तर पर ले जाते हैं। हालाँकि, कुछ किसान इतने लंबे समय तक इंतजार नहीं कर सकते हैं। टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाने वाले किसानों को प्रशिक्षण देने, प्रोत्साहित करने और उत्पादन को सब्सिडी देने में निवेश करने के लिए एक यथार्थवादी योजना बनायी जा रही है।

राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन क्या है?

जलवायु परिवर्तन के इस युग में कृषि उत्पादकता को सतत् बनाए रखना बहुत ही आवश्यक है। कृषि विकास को समुचित स्थिति विशिष्ट उपायों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और सतत् प्रयोग को बढ़ावा देकर संधारणीय बनाया जा सकता है। भारत सरकार ने बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के तहत उपयुक्त अनुकूलन और शमन उपायों के माध्यम से भारतीय कृषि को जलवायु अनुकूल उत्पादन प्रणाली में बदलने के लिए राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन की शुरुआत की थी।

भारत की सतत कृषि में उभरते हुए प्रमुख विषय

- **ज्ञान की भूमिका**

अधिकांश एस.ए.पी.एस. ज्ञान आधारित हैं और उन्हें सफलतापूर्वक अपनाने के लिए किसानों के बीच ज्ञान के आदान-प्रदान और क्षमता निर्माण की आवश्यकता है।

- **कृषि-श्रम पर निर्भरता**

कृषि पद्धतियों में विभिन्न प्रकार के कृषि कार्यों की तैयारियाँ,

खरपतवार के प्रबन्धन एवं मिश्रित फसल वाले खेत में कटाई जैसे कार्यों का मशीनीकरण अभी तक मुख्यधारा में नहीं आया है, जिससे खेत के स्तर पर विभिन्न गतिविधियों में श्रम पर निर्भरता बढ़ रही है।

- **एस.ए.पी.एस. को अपनाने की प्रेरणा**

पारंपरिक कृषि के दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव किसानों को विकल्प तलाशने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। जहां पर किसान के सामने संसाधनों की कमी होने की परिस्थितियाँ हैं, जैसे-वर्षा आधारित क्षेत्र और जो बहुत ज्यादा बाहरी संसाधनों का उपयोग नहीं कर रहे हैं, वे क्रमिक रूप से एस.ए.पी.एस. को अपनाने के लिए तैयार हैं।

- **खाद्य और पोषण सुरक्षा में एसएपीएस की भूमिका**

अधिकांश एस.ए.पी.एस. अंतर-फसली, मिश्रित फसल, फसल चक्र, कृषि वानिकी या आई.एफ.एस. के माध्यम से फसल और खाद्य विविधता को बढ़ावा देते हैं। पहला, यह भोजन और आय स्रोतों में विविधता लाकर किसानों की खाद्य सुरक्षा को सुधारते हैं। दूसरा, उपलब्ध पोषण की विविधता में सुधार करके कृषक परिवारों के लिए पोषण सुरक्षा को बढ़ाते हैं।

राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन का उद्देश्य

1. समुचित मृदा और नमी संरक्षण उपायों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना।
2. मृदा उर्वरता मानचित्रों, बृहत एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों के मृदा परीक्षण आधारित समुचित उर्वरकों के प्रयोग इत्यादि के आधार पर व्यापक मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन की पद्धतियों को अपनाना।
3. 'प्रति बूंद अधिक फसल' हासिल करने हेतु कुशल जल प्रबंधन के माध्यम से जल संसाधनों का समुचित उपयोग।
4. जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और अल्पीकरण के क्षेत्र में अन्य चालू मिशनों अर्थात् राष्ट्रीय कृषि विस्तार एवं प्रौद्योगिकी मिशन, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय कृषि जलवायु प्रत्यास्थता पहल (एन.आई.सी.आर.ए.) इत्यादि के सहयोग से किसानों एवं अन्य खेतीहर की क्षमता बढ़ाना।
5. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम (मनरेगा), एकीकृत पनधारा कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.एम.पी.), राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आर.के.वी.वाई.) इत्यादि जैसी अन्य स्कीमों/मिशनों से संसाधनों और नेशनल इनोवेशन आन क्लाइमेट रिसाईलेन्ट एग्रीकल्चर (एन.आई.सी.आर.ए.) के माध्यम से वर्षा सिंचित प्रौद्योगिकियों को मुख्य धारा में लाते हुए वर्षा सिंचित कृषि की उत्पादकता सुधारने हेतु चयनित ब्लाकों में प्रायोगिक मॉडल और नेशनल एक्शन प्लान फार क्लाइमेट चेन्ज (एन.ए.पी.सी.सी.) के तत्वाधान में राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन के मुख्य उद्देश्यों को पूरा करने हेतु प्रभावी अंतर और आंतरिक विभागीय/मंत्रालय समन्वय स्थापित करना।

सतत कृषि में पशुपालन का महत्व

पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण किसी भी दीर्घकालिक कृषि प्रणाली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। तत्वों का पुनर्चक्रण, पशुओं व कृषि की परस्पर सम्पूरकता से ही संभव है। फसल के अवशेष, जैसे कि अनाज के तिनके, मक्का और मूंगफली के छिलके, जानवरों को खिलाए जाते हैं। उत्पादित खाद को तुरंत खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। हालांकि, खाद की रासायनिक सामग्री पशु की नस्ल और पशु के आहार के आधार पर भिन्न होती है। खाद मिट्टी को महत्वपूर्ण कार्बनिक पदार्थ प्रदान करता है, जो सीधे पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के अलावा, इसकी संरचना, जल प्रतिधारण और जल निकासी क्षमता को बनाए रखने में मदद करता है। खाद के महत्त्व को हम इस तथ्य से बेहतर समझ सकते हैं की कुछ किसान केवल खाद के उत्पादन हेतु सक्रीय पशुपालन कार्य करते हैं।

ग्रामीण भारत में आज भी गाय के गोबर को खाना पकाने और गर्म करने वाले ईंधन के रूप में अत्यधिक महत्व दिया जाता है, जिससे लकड़ी या जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम हो जाती है। यह लाखों किसानों के घरों के लिए ईंधन का प्राथमिक स्रोत है। अकेले भारत में हर साल 300 मिलियन टन गोबर का इस्तेमाल ईंधन के रूप में किया जाता है। ग्रामीण इलाकों में आज भी गोबर को इकट्ठा कर पहले सूखाकर उपले बनाये जाते हैं तदोपरांत इन उपलों का उपयोग खाना बनाने के लिए उष्मा उत्पादन जैसे घरेलू उपयोग में किया जाता है। इन उपलों को बाजार में बेचकर धनोपार्जन भी किया जाता है। इनका उपयोग प्लास्टर और अन्य निर्माण सामग्री में प्रत्यक्ष घटक के रूप में भी किया जा सकता है और इसकी राख को कीटनाशक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

- उष्ण-कटिबंधीय जलवायु में किसानों के लिए खाद से बायोगैस उत्पादन, जीवाश्म ईंधन या ईंधन की लकड़ी का एक आदर्श विकल्प है। ऑन-फार्म बायोगैस उत्पादन के माध्यम से महिलाओं का श्रम कम हो जाता है, जिससे लकड़ी एकत्र करने और ईंधन की खरीद की आवश्यकता

समाप्त हो जाती है। यह अपनी सुविधा और बेहतर स्वच्छता के कारण उपयोगकर्ता के अनुकूल है। यह प्रकाश, गर्म पानी और ऊष्मा-उत्पादन सहित कई तरह की सेवाएं भी प्रदान करता है। बायोगैस का उपयोग पानी के पंप जैसे बिजली के उपकरणों में भी किया जा सकता है। बायोडाइजेस्टर्स के बहिःस्राव को उर्वरक, एवं मछली के चारे के रूप में पुनर्चक्रित किया जा सकता है या मूल खाद की तुलना में अधिक परिणाम के साथ एजोला और डकवीड उगाने के लिए उपयोग किया जा सकता है।

प्रमुख सुझाव

- वर्षा आधारित क्षेत्रों से इसे विस्तार देने की शुरुआत की जा सकती है, क्योंकि वे पहले से ही कम संसाधनों वाली कृषि कर रहे हैं, उनकी उत्पादकता भी कम है, और मुख्य रूप उन्हें इस बदलाव से लाभ मिलने की संभावना है।
- पारंपरिक, संसाधन-गहन कृषि को एक तरफ और सतत कृषि को दूसरी तरफ रखकर दीर्घकालिक तुलनात्मक आंकलन के माध्यम से साक्ष्यों को जुटाने में सहायता करें।
- कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में हितधारकों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाने और उन्हें वैकल्पिक दृष्टिकोणों को अपनाने के लिए उनमें अधिक स्वीकार्यता के लिए कदम उठाएं।
- राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर प्रभावी कृषि आंकड़ों की प्रणालियों में एस.ए.पी.ए. के आंकड़ों को जोड़ने के साथ सूचनाएं जुटाते हुए सतत कृषि को व्यवहारिक एवं अनुकरणीय बनाना चाहिए।

एक विचार लो । उस विचार को अपना जीवन बना लो- उसके बारे में सोचो उसके सपने देखो, उस विचार को जियो । अपने मस्तिष्क, मांसपेशियों, नसों, शरीर के हर हिस्से को उस विचार में डूब जाने दो और बाकी सभी विचार को किनारे रख दो। यही सफल होने का तरीका है ।

स्वामी विवेकानंद

रंग-बिरंगी फूलगोभी की खेती पोषण की खान

अभिषेक प्रताप सिंह, *कुमारी अमृता सिंहा, धीरू कुमार तिवारी, रीता देवी यादव, चेलपूरी रामूलू, जगपाल, सौरभ दूबे एवं अभिषेक रंजन

डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)
कृषि विज्ञान केन्द्र, माधोपुर, पश्चिम चम्पारण (बिहार)
*कृषि विज्ञान केन्द्र, लादा, समस्तीपुर (बिहार)

जीवन में रंगों का कितना महत्वपूर्ण स्थान है जिसका असर जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर दिखायी देता हैं लेकिन बहुत कम लोग ही जानते हैं कि इन रंगों का प्रभाव सेहत पर भी पड़ता है। रंग-बिरंगी फूलगोभी की खेती सामान्य फूलगोभी की भाँति ही होती है इसकी खेती करके किसान आमदनी बढ़ा सकते हैं तथा पोषण की दृष्टिकोण से भी मजबूत होगें। पीला फूलगोभी स्वाद ही नही स्वास्थ के लिए भी गुणकारी माना जाता है। इस प्रकार की फूलगोभी में कैरोटीनॉयड, फ्लेवोनोइड, एस्कार्बिक एसिड, पोटैशियम, एंटीआक्सीडेन्ट, विटामिन्स विशेषकर वायोफ्लेनायड पाया जाता है व जरुरी खनिज तत्व पाये जाते हैं जिसके सेवन से शरीर में कोलेस्ट्राल एवं उच्च रक्त चाप के स्तर को नियंत्रित किया जा सकता है। साथ ही चेहरे की झुर्रियाँ को कम करने में मददगार है जो स्वाद और सेहत के गुणों के कारण दुनिया भर में मशहूर है। इससे सब्जी बनाने से लेकर पराठे, पकौडे के साथ ही साथ आचार भी बनाया जाता है। दैनिक आहार में पीले रंग के फल और सब्जियों को शामिल करना चाहिए ऐसा करने से न सिर्फ स्वास्थ्य बल्कि त्वचा भी चमकदार बनती है जिस व्यक्ति की प्रतिरोधक क्षमता कमजोर है उसके लिए ऐसी फूलगोभी का सेवन करना काफी लाभप्रद साबित होगा। फूलगोभी में बैंगनी रंग फ्लेवोनोइडस और एन्थोसायनिन की उपस्थिति के कारण होती है जो शक्तिशाली एंटीआक्सीडेंट होने के साथ ही साथ शरीर की क्षतिग्रस्त कोशिकाओं की मरम्मत करने एवं क्षति से बचाने का कार्य भी करते हैं इसके अलावा कैंसर के खतरों को भी कम करने में सहायक सिद्ध होती है तथा गर्भवती महिलाओं एवं बुजुर्गो के लिए बहुत ज्यादा फायदेमंद है।

जलवायुः इसकी खेती के लिए ठंडी एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए तापक्रम 20-25 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिए।

भूमि एवं भूमि की तैयारीः इसकी खेती सामान्यतः सभी प्रकार की भूमियों जिसमें जीवाश्म पदार्थ की मात्रा अधिक एवं जल निकास की व्यवस्था हो, मृदा का पी.एच. मान 5.5-6.6 होना उपयुक्त होता है। भूमि की तैयारी के लिए 3-4 जुताईयाँ करने के उपरान्त पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए।

प्रमुख किस्मेंः कैरोटीना (पीला रंग) एवं बैलीटीना (बैंगनी रंग) मुख्य संकर किस्में है।

बीज की मात्रा तथा बुवाई का समयः इसकी खेती का समय सितम्बर-अक्टूबर माह में नर्सरी तैयार करना चाहिए जिसके लिए 200-250 ग्राम बीज एक हेक्टेयर खेत के लिए पर्याप्त है।

पौध रोपणः खेत की तैयारी के उपरांत जब पौधे 4-5 सप्ताह के हो जाये तब मुख्य खेत में पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी 60×45 सेमी. रखते हुये रोपण करते हैं। सामान्यतः 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से कार्बेंडाजिम के घोल से जड़ को उपचार उपरांत ही रोपण करना चाहिए एवं रोपण के पश्चात् हल्की सिंचाई करना आवश्यक होता है। रोपण पूर्व में खेत की तैयारी के उपरांत फ्लूक्लोरेलीन 1.5-2.0 किग्रा. अथवा नाइट्रोफेन 2 किग्रा. को 600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः गोबर की सड़ी हुई खाद 150-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर एवं मृदा जाँच के आधार पर अनुशंसित मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाना चाहिए। अगर मृदा जाँच नही हुआ है तब ऐसी दशा में 120 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फास्फोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करते हैं। गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट की पूरी मात्रा रोपण के 15 दिनों पूर्व खेत में मिला देना चाहिए। फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा एवं नत्रजन की आधी मात्रा पौध रोपण के 3 दिनों पूर्व खेत में डालकर अच्छी तरह से मिला लेते हैं तथा शेष बचे नत्रजन की मात्रा को दो बराबर भागो में बांटकर रोपण के 30-35 दिनों एवं 45-50 दिनों के अंतराल पर टाप ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके अलावा अमोनियम मालीब्डेड 1.5 किग्रा. तथा बोरेक्स की 10 किग्रा. मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में निराई-गुड़ाई एवं मिट्टी चढ़ाने के समय देना चाहिए।

सिंचाईः इसकी सफल खेती के लिए पौध रोपण के बाद आवश्यकतानुसार 10-15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

खरपतवार नियत्रणः रोपण के 3 सप्ताह बाद निराई-गुड़ाई कर मिट्टी चढ़ाने का कार्य करना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार निकाई-गुड़ाई करते रहना चाहिए।

कटाई एंव उपजः पौध रोपण के 100-110 दिनों पश्चात् रंगीन फूलगोभी की फसल कटाई योग्य तैयार हो जाती है जिससे लगभग 200-300 कुन्तल प्रति हेक्टेयर औसत उपज प्राप्त हो जाती है।

कीट एंव उनका प्रबन्धन

- **डायमंड बैक माथ**

इस कीट के शिशु सर्वप्रथम पत्तियों में छेदकर तने में प्रवेश कर जाते हैं जिससे पौधों की पत्तियाँ पीली होकर सुख जाती हैं।

प्रबंधनः इसके प्रबंधन के लिए *बैसिलस थूरिंजिएंसिस* के घोल का छिड़काव करना चाहिए। वयस्क कीट को पकड़ने के लिए फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करें। मेटासिस्टाक्स 2 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से स्टीकर मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

- **सरसों की मक्खी**

इसके प्रौढ़ कीट पत्तियों के उत्तकों के बीच अण्डे देते हैं जो बाद में कैटर पिलर के रूप में पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं।

प्रबंधनः डायमंड बैक माथ की भाँति इस कीट को नियंत्रित कर सकते हैं।

- **एफिड**

यह छोटे-छोटे हल्के हरे रंग या काले रंग के कीट होते हैं जो पत्तियों एवं कोमल भागों का रस चूसते हैं।

प्रबंधनः स्पाइनटोरम का 3 मिली प्रति लीटर पानी का पर्णीय छिड़काव काफी लाभदायक है।

रोग एंव उनका प्रबन्धन

- **आर्द्र गलन**

यह गोभीवर्गीय सब्जियों की प्रमुख बीमारी है जिससे बीजांकुर सड़कर गिर जाते हैं। पत्तियों का मुरझाना एवं सुखना भी दिखाई पड़ता है।

प्रबंधनः बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित तथा भूमि में 20 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से कम्पोस्ट में मिलाकर उपयोग करें।

- **काला विगलन**

यह गोभीवर्गीय सब्जियों का प्रमुख रोग है जो *जेन्थोमोनास कम्पौस्ट्रिस* नामक जीवाणु से होता है। पत्तियों पर अंग्रेजी के वी आकार के भूरे या पीले रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं।

प्रबंधनः रोग ग्रसित पौधो को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए, फसल चक्र अपनाना चाहिए। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

सारिणी 1 : रंग-बिरंगी फूलगोभी की खेती में आय एवं खर्च का विवरण (200 वर्ग मी. क्षेत्रफल में)

क्र. सं.	विवरण	वर्ष 2021-22	वर्ष 2022-23	औसत
1.	उत्पादन लागत (रू.)	3250.00	3325.00	3325.2
2.	पौध से पौध एवं कतार से कतार की दूरी (सेमी.)	60 x 45	60 x 45	60 x 45
3.	एक फूलगोभी के फूल का औसत वजन (ग्रा.)	850	785	817.5
4.	औसत उत्पादन (किग्रा.)	629.00	580.09	604.95
5.	विक्रय मूल्य (रू.) प्रति किग्रा.	22.5	24.5	23.5
6.	कुल आय (रू.)	14152.2	14232.05	14152.27
7.	शुद्ध आय (रू.)	10902.5	10832.05	10867.27
8.	लागतःलाभ अनुपात	**4.35**	**4.18**	**4.26**

तोरई का संकर बीज उत्पादन

प्रियंका राजभर एवं रमेश राजभर

आचार्य नरेंद्र देव कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

तोरई एक बेलवाली कद्दूवर्गीय फसल है जो जायद तथा खरीफ ऋतु में सफलतापूर्वक देश के कई स्थानों में लगायी जाती है। नर व मादा पुष्प एक ही बेल पर अलग-अलग स्थान तथा अलग-अलग समय पर खिलते हैं। नर पुष्प पहले तथा गुच्छों में लगते हैं जबकि मादा पुष्प बेल की पाश्व शाखाओं पर अकेले लगते हैं। पुष्प का रंग चमकीला पीला एवं आकर्षक होता है। मादा पुष्प के निचले भाग में फल की आकृतियुक्त अण्डाशय होता है जो निषेचन के पश्चात् फल का निर्माण करता है। पुष्प सायंकाल 5:00-8:00 बजे के दौरान खिलते हैं। पुष्पन के दौरान नर पुष्पों से जीवित व सक्रिय परागकण प्राप्त होते हैं, साथ ही मादा पुष्पों की वर्तिकाग्र निषेचन के लिए अत्यधिक सक्रिय होती है। तोरई में पर-परागण मुख्यतः मधुमक्खियों द्वारा होता है।

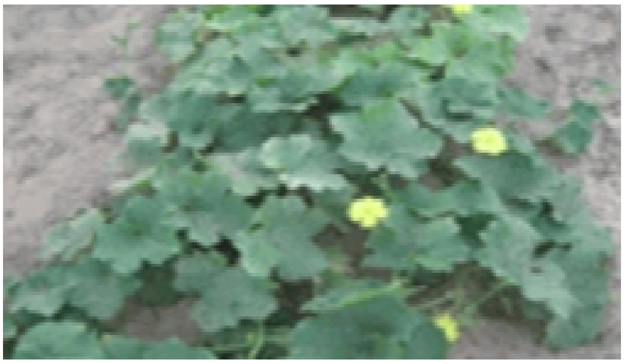

तोरई की बेल

- **खेत का चुनावः** तोरई के संकर बीज उत्पादन के लिए फसल बोने से पूर्व पिछले वर्ष खेत में उगाई गई फसलों की जानकारी पहले से कर लेनी चाहिए। खेत का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि पूर्व में उस खेत में तोरई की फसल नहीं ली गई हो, क्योंकि पिछली फसल का बीज खेत में गिर जाता है तथा यह बीज संकर बीज उत्पादन के लिए प्रयुक्त प्रजनकों के बीज के साथ उगाकर मादा प्रजनक से पर-परागण करके संकर बीज को दूषित कर देते हैं। मृदा उचित जल निकासयुक्त, जीवांशयुक्त, बलुई दोमट या बलुई होनी चाहिए जिसका पी.एच. मान 6.5-7.0 के मध्य का होना चाहिए।
- **मौसम का चुनावः** तोरई के संकर बीज उत्पादन के लिए जायद मौसम की अपेक्षा, खरीफ मौसम अधिक उपयुक्त होता है। खरीफ मौसम में बेलों की वृद्धि, पुष्पन तथा फलन अधिक होता है। खरीफ में बीज की गुणवत्ता व फलत भी अधिक प्राप्त होती है।
- **बीज का स्रोतः** संकर बीज उत्पादन के लिए दो पैतृक प्रजनकों (नर व मादा) के आधारीय बीजों की जरूरत होती है। अतः पैतृक प्रजनकों का बीज हमेशा विश्वसनीय संस्थानों जैसे- कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य एवं केन्द्रीय अनुसंधान संस्थानों से ही प्राप्त करना चाहिए।
- **खाद एवं उर्वरकः** खाद एवं उर्वरक की मात्रा मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है। खेत की अन्तिम जुताई के समय 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80:60:60 किग्रा. प्रति हेक्टेयर मिलानी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो समान भागों में बांटकर बुवाई के 25-30 तथा 45-50 दिनों के बाद खड़ी फसल में देना चाहिए।
- **पृथक्करण दूरीः** बीज की आनुवंशिक शुद्धता बनाये रखने के लिए पृथक्करण दूरी बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक होता है। अतः इसके लिए संकर किस्मों तथा चिकनी तोरई आदि से कम से कम 800-1000 मीटर की पृथक्करण दूरी पर बोना चाहिए।
- **बीज की मात्राः** नर व मादा प्रजनकों के लिए बीज की मात्रा अलग-अलग हाती है। मादा प्रजनक के लिए लगभग 1.75-4.00 किग्रा. एवं नर प्रजनक के लिए लगभग 0.50 किग्रा. बीज की मात्रा प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होती है।
- **बीज उपचार एवं बुवाईः** बुवाई करने से पूर्व बीज को थीरम नामक फफूंदनाशी (2 ग्राम दवा/किग्रा. बीज) से उपचारित करना चाहिए। शीघ्र अंकुरण के लिए बीजों को 20-24 घंटे तक पानी में भिंगोना चाहिए तथा इसके तत्पश्चात् बोरी के टुकड़ें में लपेटकर किसी गर्म जगह पर रखना लाभप्रद होता है। बीज की बुवाई नालियों में करनी चाहिए। नाली से नाली के बीच 3 मीटर तथा थाले से थाले के मध्य 80 सेमी. दूरी रखनी चाहिए। नालियाँ 50

सेमी. चौड़ी व 35-45 सेमी. गहरी बनी होनी चाहिए।

- **नर एवं मादा पौधों का अनुपातः** तोरई में संकर बीज उत्पादन के लिए नर व मादा प्रजनकों को एक निश्चित अनुपात (नरः मादाः 1:3) में खेत में बनी नालियों में बुवाई करनी चाहिए। खेत में प्रथम तथा अन्तिम पंक्ति में नर पैतृक जनकों की बुवाई करें जिससे पर-परागण के दौरान बीज की आनुवंशिक शुद्धता बनी रहती है।

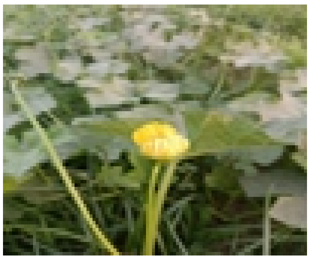
नर पुष्प

मादा पुष्प

संकर बीज उत्पादन की विधिः तोरई में प्राकृतिक रूप से पर-परागण कीट पतंगों के माध्यम से होता है। अतः संकर बीज उत्पादन की मुख्यतः दो विधियाँ अपनायी जाती हैः

1. हाथ द्वारा कृत्रिम निषेचन करके

यह विधि पर्याप्त पृथक्करण दूरी उपलब्ध न होने की दशा में अपनाई जाती है। इस विधि में मादा प्रजनक पर लगे पुष्पों को पुष्पन के एक दिन पहले बटर पेपर से बनी थैली से ढक देते हैं। इस थैली में 4-5 बारीक छिद्र हवा के आगमन के लिए करना आवश्यक है। अगले दिन सायंकाल 4:00-8:00 बजे के मध्य नर पुष्पों से परागकण एकत्रित करके पतले ब्रश की सहायता से बटर पेपर थैलों से ढके मादा पुष्पों की वर्तिकाग्र पर परागकणों को स्थानान्तरित कर पुनः बटर पेपर से ढक देते हैं। सामान्यतः 3-4 दिनों के पश्चात् जब निषेचित मादा पुष्पों में फलन आरम्भ हो जाता है तो फल की पर्याप्त वृद्धि के लिए उन पर लगी थैलियों को सावधानीपूर्वक हटा देना आवश्यक है। अधिक गुणवत्ता बीज प्राप्त करने के लिए प्रत्येक बेल से 4-5 फल ही प्राप्त करना चाहिए। इससे अधिक फल लेने पर बीजों के विकास एवं गुणवत्ता में कमी आती है।

2. मुक्त निषेचन (मादा प्रजनक के नर फूलों को हटाना तथा मधुमक्खियों द्वारा परागण)

इस विधि का उपयोग पर्याप्त पृथक्करण दूरी (800-1000 मीटर) उपलब्ध होने की दशा में चुना जाता है। मादा प्रजनकों पर लगे नर पुष्पों की पुष्प कलिकाओं को खुलने से पहले ही तोड़ दिया जाता है इसके लिये खेत में पुष्प कलियों के खिलने से पहले खेत का लगातार निरीक्षण करना आवश्यक है। पर-परागण के लिए प्रति एकड़ एक मधुमक्खी का मौनगृह पर्याप्त होता है।

अवांछनीय पौधों का निष्कासनः संकर बीज उत्पादन में यह एक महत्वपूर्ण कार्य है। इसमें पैतृक प्रजनकों की आनुवंशिक तथा भौतिक शुद्धता बनी रहती है। खेत में पैतृक प्रजनकों के अलावा तोरई की अन्य किस्मों के पौधों तथा चिकनी तोरई के पौधों को फूल आने से पूर्व अवश्य निकाल देना चाहिए। पैतृक प्रजनकों के आनुवंशिक गुणों का बीज उत्पादक को ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। फसल का निरीक्षण निम्नलिखित तीन अवस्थाओं में करके अवांछनीय पौधों को निकाल देना चाहिएः

- फूल आने से पूर्व पौधे के वाह्य गुणों के आधार पर जैसे-पत्तों का रंग, आकार, बेल की वृद्धि इत्यादि।
- फूल आने के समय फूलों के गुणों के आधार पर जैसे-फूलों का रंग, आकार एवं प्रकार आदि।
- फल की तुडाई से पूर्व फल वृद्धि तथा तुड़ाई के समय फलों की गुणवता के आधार पर।

तुड़ाई एवं बीज निष्कासन

मादा प्रजनक के फलों का रंग भूरा होकर फलों तथा फल सुखने के पश्चात् इनको बेलों से तोड़ लिया जाता है। परिपक्व फलों को हिलाने पर फल में उपस्थित बीजों की आवाज आती है। परिपक्व फलों को 5-10 दिनों तक छायादार स्थान पर रखकर सुखाया जाता है, ताकि फलों एवं बीजों में उपस्थित अतिरिक्त नमी निकल जायें। सूखे हुए फलों से बीज निकाल लेना चाहिए। परिपक्व बीज काले व चमकीले रंग के दिखाई देते हैं।

मादा पुष्प पर परागकण

हाथ द्वारा पर-परागण परागित पुष्प को ढकना

उपजः इस प्रकार तोरई के संकर बीज की उपज 1.5-2.0 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

कीट एवं व्याधि प्रबंधन

इस फसल को मुख्यतः रस चूषक कीट जैसे-फलमक्खी एवं कद्दू का लाल कीट द्वारा विभिन्न अवस्थाओं पर नुकसान होता है। अतः इन कीटों के नियंत्रण के लिए बेलों पर इमिडाक्लोप्रिड या फ्रिपोनिल (0.5 मिली. प्रति लीटर) का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। मृदुलोमिल आसिता रोग का प्रकोप गर्मियों के मौसम में बरसात हो जाने की दशा में अधिक होता है जिसकी रोकथाम के लिए डायथेन एम-45 (2.0 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करें। अधिक तापमान व शुष्क मौसम की दशाओं में चूर्णिल आसिता रोग के लक्षण बेलों पर दिखाई देते है। इसकी रोकथाम के लिए कैराथेन (2.0 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करें।

हमें कैमरे से दूर रहना चाहिये, तभी हम देश के लिये कुछ कर पायेंगे। वो लोग जो हर वक्त मीडिया की चकाचौंध में रहना चाहते हैं वो कभी देश के लिये कुछ भी नहीं कर सकते।

-अन्ना हजारे

ड्रैगन फ्रूटः स्वास्थ्य एवं समृद्धि

राजन सिंह, डी.पी. सिंह एवं *यू.एस. गौतम

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
*भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली

ड्रैगन फ्रूट भारतीय फल नहीं है, लेकिन इसके लाजवाब स्वाद और लाभकारी फायदों के कारण भारत में भी इसकी माँग काफी बढ़ गयी है। यही वजह है देश में पंजाब, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में इसका सर्वाधिक उत्पादन किया जा रहा है। ड्रैगन फ्रूट का उपयोग ताजे फल के रूप में करने के साथ-साथ रस, जैम तथा आइसक्रीम के रूप में भी किया जाता है। यह फल खाने में तो स्वादिष्ट लगता ही है, इसके अलावा यह अनेक गंभीर रोगों को ठीक करने की क्षमता भी रखता है।

ड्रैगन फ्रूट (कमलम) थाइलैंड, वियतनाम, इजरायल और श्रीलंका में लोकप्रिय हैं। यह विदेशी फल ना ही सिर्फ किसानों की आमदनी को दोगुना करती है, बल्कि इसमें कई पोषक गुण भी हैं। आकर्षक दिखने के कारण इस फल की बाजार में काफी माँग हैं। भारत में इसकी खेती हाल ही में प्रचलित हुई है। इस फल का नाम ड्रैगन फ्रूट से बदल के गुजरात सरकार ने कमलम कर दिया है। कई शहरी उपभोक्ता जो मधुमेह, कार्डियो-वैस्कुलर और अन्य तनाव संबंधी बीमारियों से पीड़ित हैं और प्राकृतिक उपचार को प्राथमिकता देते हैं ड्रैगन फ्रूट उन लोगों के लिए बहुत फायदेमंद है। हाल ही में केंद्र ने ड्रैगन फ्रूट के विकास को बढ़ावा देने का निर्णय लिया है, इसके स्वास्थ्य लाभों को देखते हुए इसे 'विशेष फल' के रूप में मान्यता प्राप्त है। ड्रैगन फ्रूट हिलोसेरियस कैक्टस पर उगता है, जिसे होनोलूलू क्वीन के नाम से भी जाना जाता है। यह फल दक्षिणी मेक्सिको और मध्य अमेरिका का स्थानीय फल है। वर्तमान में भी यह पूरी दुनिया में उगाया जाता है। इस फल की खेती करने वाले राज्यों में मिज़ोरम सबसे आगे है। इसे कई नामों से जाना जाता है, जिनमें पपीता, पिठैया, स्ट्रॉबेरी और नाशपाती शामिल हैं। दो सबसे आम प्रकारों में हरे रंग की परत् के साथ यह चमकदार लाल रंग का होता है जो ड्रैगन के समान होता है। सबसे व्यापक रूप से उपलब्ध इसकी किस्म में काले बीजों के साथ सफेद गूदा होता है, हालांकि लाल गूदे और काले बीजों के साथ सामान्य प्रकार भी मौजूद होता है। यह फल मधुमेह के रोगियों के लिये उपयुक्त, कैलोरी में कम और आयरन, कैल्शियम, पोटैशियम तथा जिंक जैसे पोषक तत्वों से भरपूर माना जाता है। दुनिया में ड्रैगन फ्रूट का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक वियतनाम है जहाँ 19वीं शताब्दी में फ्रांसीसियों द्वारा इस पौधे को लाया गया था। वियतनामी इसेथान लॉन्ग कहते हैं जिसका अनुवाद है 'ड्रैगन की आँख'। वियतनाम के अलावा इसे संयुक्त राज्य अमेरिका, मलेशिया, थाईलैंड, ताइवान, चीन, ऑस्ट्रेलिया, इज़रायल और श्रीलंका में भी उगाया जाता है।

विशेषताएँ

इसके फूल प्रकृति में उभयलिंगी (एक ही फूल में नर और मादा अंग) होते हैं और रात में खुलते हैं। पौधा 20 से अधिक वर्षों तक उपज देता है, यह उच्च न्यूट्रास्युटिकल गुणों (पोषक-औषधीय प्रभाव वाले) के साथ मूल्य वर्द्धित और प्रसंस्करण उद्योगों के लिये लाभदायक है। यह विटामिन एवं खनिजों का समृद्ध स्रोत है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के अनुसार, इस पौधे को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है और इसे शुष्क भूमि पर उगाया जा सकता है। खेती की लागत शुरू में अधिक होती है लेकिन पौधे के लिये उत्पादक भूमि की आवश्यकता नहीं होती है; अनुत्पादक, कम उपजाऊ क्षेत्रों में इसका अधिकतम उत्पादन किया जा सकता है। राज्य सरकारों द्वारा उठाए कदम और इसकी खेती करने वाले किसानों के लिये प्रोत्साहन की घोषणा की है।

बहुवर्षीय फसल

ड्रैगन फ्रूट की माँग को देखते हुए एक एकड़ के खेत से लगभग 8-10 लाख रुपये की आय प्राप्त किया जा सकता है। एक बार इसका पौधा लगाने के बाद 25 सालों तक फलत में रहता है। ड्रैगन फ्रूट का पौधा किसी मजबूत डंडे या कॉलम की मदद से खड़ा किया जाता है और इसकी खेती करने के लिए सरकार की तरफ से सब्सिडी भी मिलती है।

अधिक आय वाली फसल

ड्रैगन फ्रूट को पहले इजराइल और वियतनाम में उगाया जाता था और अब इसकी खेती भारत के कई राज्यों में की जाती है। पंजाब और हरियाणा में भी लोग ड्रैगन फ्रूट की खेती कर एक वर्ष में लाखों रूपये कमा रहे हैं। इसकी खेती करने में ज्यादा मेहनत नहीं लगती और पानी का भी कम इस्तेमाल होता है। ड्रिप सिंचाई के जरिए खेतों को पानी दिया जाता है। विश्व में

ड्रैगन फ्रूट की 200 से ज्यादा स्थानीय प्रभेद की खेती होती है लेकिन भारत में ज्यादातर गुलाबी रंग के फल वाली किस्म की खेती की जाती है। एक फल का वजन 250-400 ग्राम होता है और 500 रूपये प्रति किग्रा. तक बिकता है।

सस्य तकनीक

पिछले दो से तीन दशक में जलवायु में काफी बदलाव आया है। इससे वर्षा की अनियमितता और फसल खराब होने की संभावना भी बढ़ गई है। इन सभी समस्याओं को देखते हुए, कई किसानों ने ड्रैगन फ्रूट की खेती की ओर रुख किया है। लाल गूदे वाला लाल रंग का। ड्रैगन फ्रूट के पौधे जून से अगस्त तक गर्म और आर्द्र वातावरण में रोपित कर सकते हैं।

ड्रैगन फ्रूट की कटिंग

ड्रैगन फ्रूट के पौध से नये कल्ले को चॉपस्टिक से काटा जाता है। पौधे की अच्छी वृद्धि के लिए 15-30 सेमी. के स्लाइस का उपयोग उचित है। कटिंग लेने के बाद सिरों पर फफूंदनाशक लगा दें और धूप में 2-3 दिनों के लिए कटिंग को सूखने दें। यह उपचार विकास की बढ़ावा देने में मदद करता है। जब कटी टिप्स सफेद हो जाती हैं आपको पता चल जाएगा कि यह तैयार हो गया है। अब आप कलम को मिट्टी या नर्सरी के लिए काले पॉलीबैग में वर्मीकंपोस्ट और कोकोपीट से तैयार की गई मिट्टी में लगा सकते हैं।

पादप सघनता

ड्रैगन फ्रूट से अधिकतम उत्पादन लेने के लिए एक हेक्टेयर भूमि में लगभग 1700 पौधे लगाये जा सकते हैं। ट्रिमिंग व प्रूनिंग पौधों की सीधी वृद्धि एवं विकास के लिए इनको लकड़ी व सीमेंट के खंभों से सहारा प्रदान करना चाहिए। अपरिपक्व पादप तनों को इन खंभों से बांधकर, पार्श्विक शाखाओं को सीमित रखते हुए 2-3 मुख्य तनों को बढ़ने के लिए छोड़ देना चाहिए। इसके बाद इसके ढांचे को गोलाकार रूप में सुरक्षित कर लेना चाहिए।

अंतरण

अधिक उत्पादन के लिए पौधे से पौधे एवं पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी 2×2 मीटर रखते हैं। गड्ढे का आकार 60×60×60 सेमी. रखते हैं। इन गड्ढों को कम्पोस्ट, मृदा व 100 ग्राम सुपर फॉस्फेट मिलाकर भर दिया जाता है।

बुवाई करने का तरीका

ड्रैगन फ्रूट के पौधे जून-अगस्त तक गर्म और आर्द्र वातावरण में प्रत्यारोपण कर सकते हैं। ड्रैगन फूट को चॉपस्टिक से काटा जाता है। पौधे की अच्छी वृद्धि के लिए 15-30 सेमी. के स्लाइस का उपयोग करना उचित है। इन स्लाइस किये पौधों को जुताई के बाद खेत में लगायें। जड़ को खराब होने से रोकने के लिए, श्रेडर को कवकनाशी के साथ इलाज किया जाना चाहिए और नर्सरी में रोपण के 5-7 दिनों के बाद ठंडे स्थान पर रखा जाना चाहिए। सामान्यतः 30-40 दिनों में जड़ें उभरने लगेंगी। इसे लगाने से पहले इसके लिए कई 180 सेमी. (6 फीट) लंबी आरसीसी पोल लगाने होंगे। क्योंकि यह एक कैक्टस बेल है और इनके फल काफी बड़े होते हैं, तो इन्हें खड़े होने के लिए सहारे की जरूरत पड़ती है। हर पौधे के बीच में कम से कम 180 सेमी. (6 फीट) की दूरी होनी चाहिए। इस प्रकार एक हेक्टेयर खेत में 1700 ड्रैगन फ्रूट के पौधे लगाए जा सकते हैं।

जलवायु

ड्रैगन फ्रूट की खेती उष्णकटिबंधीय अथवा उप-उष्णकटियबंधी क्षेत्रों में की जाती है। ड्रैगन फ्रूट की खेती एवं अच्छी उत्पादकता के लिए 20-30 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त माना जाता है। कैक्टस बेल होने के कारण यह कम पानी में भी अच्छा उत्पादकता देती है। इसे 50 सेमी. वार्षिक औसतन के दर से वर्षा की जरूरत होती है। बहुत अधिक सूर्य की रोशनी ड्रैगन फ्रूट के पौधे का नुकसान पहुंचा सकती है, ऐसे इलाके में इसकी खेती छायादार जगह पर करें।

भूमि का चयन

ड्रैगन फ्रूट को रेतीले दोमट मिट्टी से लेकर दोमट मिट्टी में उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए 5-7 पी.एच. मान तक की मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है। हालांकि बेहतर जीवाश्म व कार्बनिक गुणों से भरपूर और जल निकासी वाली बलुवाई मिट्टी इसकी उपज के लिए सबसे बेहतर है।

खेत तैयार करने का तरीका

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए सबसे पहले अपने जमीन की जुताई अच्छे से करनी होगी। ध्यान रहे कि जैविक खेती करने से उत्पाद बेहतर होगा और आमदनी अच्छी होगी। सामान्यतः 2 दिनों के लिए मिट्टी को खुले धूप में छोड़ दें ताकि सारे कीट, उनके अण्डे एवं रोगजनक जीवाणु मर जायें। जुताई के बाद कोई भी जैविक खाद अनुपात अनुसार मिट्टी में दिया जाना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक की मात्रा

ड्रैगन फ्रूट के रोपण के दौरान 10-20 ग्राम प्रति पौध जैविक खाद और 100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रदान करें। पहले दो वर्षों में प्रति पौध में 300 ग्राम नाइट्रोजन, 200 ग्राम फास्फोरस और 200 ग्राम पोटैशियम दें। प्रत्येक परिपक्व

पौधे के लिए 540 ग्राम नाइट्रोजन, 720 ग्राम फॉस्फोरस और प्रति वर्ष 300 ग्राम पोटैशियम प्रदान करें। पोषक तत्वों की इस खुराक को सालाना चार खुराक में दिया जाना चाहिए। वानस्पतिक अवस्था में इसको लगने वाले रासायनिक खाद का अनुपात पोटाशःसुपर फॉस्फेटःयूरिया 40:90:70 ग्राम प्रति पौधे होता है। जब पौधों में फल लगने का समय हो जाये तब कम मात्रा में नाइट्रोजन और अधिक मात्रा में पोटाश दिया जाना चाहिए ताकि उपज बेहतर हो। फूल आने से लेकर फल आने तक यानि की फूल आने के ठीक पहले (अप्रैल), फल आने के समय (जुलाई या अगस्त) और फल को तोड़ने के दौरान (दिसंबर) तक में इस अनुपात में रासायनिक खाद दिया जाना चाहिए।

कीट एवं रोग प्रबन्धन

सामान्यतः ड्रैगन फ्रूट में कीट और व्याधियों का प्रकोप कम होता है। फिर भी इसमें एंथ्रेक्नोज रोग व थ्रिप्स कीट का प्रकोप देखा गया है। एंथ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब दवा के घोल का 0.25 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें। थ्रिप्स के लिए एसीफेट दवा का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार की रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार समय-समय पर निराई-गुड़ाई करना चाहिए।

ड्रैगन फ्रूट (कमलम) की सिंचाई

ड्रैगन फ्रूट के पौधे को ज्यादा पानी की आवश्यकता नहीं होती है। टपक सिंचाई तकनीक ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए सबसे अनुकूल माना गया है। अधिक पानी और जड़ के पास पानी इकट्ठ होने से ड्रैगन फ्रूट की फसल खराब हो सकती है इसलिए खेतों में जल निकासी की अच्छी सुविधा होनी चाहिए।

फलों का आना एवं तुड़ाई

ड्रैगन फ्रूट प्रथम वर्ष में फल देना शुरू कर देता है। सामान्यतः मई और जून में फूल लगते हैं तथा जुलाई से दिसंबर तक फल लगते हैं। पुष्पन के एक महीने बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इस अवधि के दौरान इसकी 6 तुड़ाई की जा सकती है। ड्रैगन फ्रूट के कच्चे फल हरे रंग के होते हैं जो पकने पर लाल रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। फलों की तुड़ाई का सही समय रंग परिवर्तित होने के 3-4 दिनों बाद का होता है। फलों की तुड़ाई दरांती या हाथ से की जाती है। मई-जून में इसमें फूल आते हैं। अगस्त-दिसंबर तक फल लगते हैं। मानसून में ड्रैगन फ्रूट तैयार होता है। मानसून के चार महीने में प्रत्येक 40 दिनों के अंतराल पर फल पकते हैं। एक पौधे से सीजन में 200-400 रूपये प्रति किग्रा. की कीमत मिल जाती है। इस फसल में केवल एक बार निवेश के बाद पारंपरिक खेती के मुकाबले लगभग 25 वर्षों तक इससे आमदनी हो सकती है जो शहरों की फल मंडी में आसानी से बिक जाता है। इसकी उत्पादन क्षमता प्रति एकड़ पाँच से छः टन है। यह फल एक एकड़ की खेती करने पर 14 लाख रुपये का मुनाफा देता है ड्रैगन फ्रूट का पौधा एक सीजन में 3-4 बार फल देता है। प्रत्येक फल का वजन लगभग 300-800 ग्राम तक होता है। एक पौधे पर 50-120 फल लगते हैं। इस प्रकार इसकी औसत उपज 5-6 टन प्रति एकड़ होती है।

फलों का संग्रह

ड्रैगन फ्रूट को कमरे के तापमान यानी 25 डिग्री सेन्टीग्रेड पर 5-7 दिनों तक संग्रह किया जा सकता है। सामान्यतः 8 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर इसे 22 दिनों तक संग्रहित किया जा सकता हैं।

पैकेजिंग

सभी ड्रैगन फलों को कटाई के उपरांत उसी दिन पैक किया जाता है, फिर निर्यात के लिए कंटेनर पर लोड करने से पहले ठंडा किया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए इस प्रक्रिया को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए ताकि फल की स्व-जीवन लंबी हो।

- ड्रैगन फ्रूट कॉलेस्ट्रॉल को नियंत्रण करने में मदद करता है।
- मधुमेह रोगियों के लिए फायदेमंद है।
- ड्रैगन फ्रूट खाद्य रेशा युक्त होता है जो शरीर में जरूरी पोषक तत्व की कमियों को पूरा करता है।

सारिणी-1: ड्रैगन फ्रूट में लागत और लाभ

विवरण	:	धनराशि	विवरण	:	धनराशि
खम्भे लगाना	:	2,00,000 रू.	अन्य खर्चे	:	15,000 रू.
कलम की कीमत	:	30 के भाव से 60,000 रू.	कुल लागत	:	3,70,000-4,50,000 रू.
खाद और कीटनाशक	:	15,000 रू.	आय	:	20,00000 रू.
मजदूरी	:	60,000 रू.	लाभ	:	1550000-1630000 रू.
1 एकड़ जमीन की किराया	:	40,000-80,000 रू.			

सारिणी-2: ड्रैगन फ्रूट के प्रति 100 ग्राम फल में पाए जाने वाले प्रमुख पोषक तत्व

पोषक तत्व	मात्रा	पोषक तत्व	मात्रा
नमी	85.3 प्रतिशत	विटामिन 'ए'	0.01 मिग्रा.
प्रोटीन	1.10 ग्राम	नियासिन	2.80 मिग्रा.
वसा	9.57 मिग्रा.	कैल्शियम	10.20 मिग्रा.
क्रूड फाइबर	1.34 मिग्रा.	आयरन	3.37 मिग्रा.
ऊर्जा	67.70 किलो कैलोरी	मैग्नीशियम	38.90 मिग्रा
कार्बोहाइड्रेट	11.2 मिग्रा.	फॉस्फोरस	27.75 मिग्रा.
ग्लूकोज	5.70 मिग्रा.	पोटैशियम	272.0 मिग्रा.
फ्रक्टोज	3.20 मिग्रा.	सोडियम	8.90 मिग्रा.
सोरबिटोल	0.33 मिग्रा.	जिंक	0.35 मिग्रा.
विटामिन 'सी'	3.0 मिग्रा.		

- इसके सेवन से कार्डियोवैस्कुलर रोग (सी.वी.डी.) होने का खतरा काम हो जाता है।
- हार्ट अटैक जैसे गंभीर रोगों से बचाव करता है।
- ड्रैगन फ्रूट में एंटीअक्सीडेंट गुण भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं।
- पोटैशियम और विटामिन 'सी' ड्रैगन फ्रूट में प्रचुर मात्रा में होते हैं।
- शुगर मधुमेह रोगियों के लिए फायदेमंद है।
- ड्रैगन फ्रूट खाद्य रेशा युक्त होता है जो शरीर में जरूरी पोषक तत्व की कमियों को पूरा करता है।
- हार्ट अटैक जैसे गंभीर रोगों से बचाव करता है।
- पोटैशियम और विटामिन 'सी' ड्रैगन फ्रूट में प्रचुर मात्रा में होते हैं।

एंटीऑक्सीडेंट

एंटीऑक्सिडेंट का मुख्य लाभ मुक्त कणों का पता लगाना और उनसे छुटकारा पाना होता है। अगर मुक्त कण का इलाज न कराया जाये, तो यह कोशिका में होने वाली क्षति और उनके विनाश की वजह बन सकते हैं जिनसे दिल की समस्या से लेकर कैंसर तक कई तरह की दिक्कतें आ सकती हैं।

एंटीऑक्सीडेंट	उपयोग
बीटालेन	ड्रैगन फ्रूट के गूदे से निकले इन लाल रंग के पिगमेंट से खराब कोलेस्ट्रॉल से बचा जा सकता है।
हाइड्रॉक्सीसिनमेट्स	ड्रैगन फ्रूट में मौजूद इस एंटीऑक्सीडेंट समूह में कैंसर रोधी गुण होते हैं।
फ्लेवोनॉयड्स	एंटीऑक्सिडेंट का यह बड़ा समूह बेहतर मस्तिष्क स्वास्थ्य और कार्य के साथ-साथ दिल के रोगों के जोखिम को भी कम करता है।

ड्रैगन फ्रूट रेसिपी

नीचे दी गई रेसिपी के अलावा, ड्रैगन फ्रूट को और भी कई तरह से उपयोग किया जा सकता है। ड्रैगन फ्रूट का सबसे बड़ा फ़ायदा यह है कि यह आइसक्रीम के साथ बहुत अच्छा लगता है। इसे चाहे तो घर में बनी आइसक्रीम के स्वाद को बढ़ाने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं या फिर सादे वनीला आइसक्रीम में कुछ अलग-सा स्वाद लाने के लिए इसका इस्तेमाल करें। इसके आकर्षक आकार और रंग के कारण, यह मुख्य भोजन को सजाने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे काट कर अपने पसंदीदा पेय में भी डाल सकते हैं। ड्रैगन फ्रूट के टुकड़ों को केक और यहाँ तक कि मैकरॉन जैसे कई डेसर्ट में मिलाकर इसका मज़ा ले सकते हैं। यह फल पोषक तत्वों, विटामिन और खनिजों से भरपूर है। नीचे घर पर बनायें जा सकने वाले कुछ स्वस्थ व्यंजन के बारे में बताया गया है:

1. ड्रैगन फ्रूट शेक: स्वस्थ जीवन शैली पाने के लिए अपने नाश्ते में रोज़ाना ड्रैगन फ्रूट शेक लेना सही विकल्प हो सकता है।

सामग्री: छोटे-छोटे टुकड़ो में कटा हुआ केला, 1 पूरा ड्रैगन फ्रूट, 1 गिलास दूध (250 मिली.), 4½ गिलास पानी, 3 चम्मच चीनी (वैकल्पिक) एवं 2 काजू (वैकल्पिक)।

बनाने का तरीका

- स्टेप 1: कटे हुए केले और ड्रैगन फ्रूट को ब्लेंडर में डालें।

- स्टेप 2ः एक गिलास दूध (250 मिली.) को एक ब्लेंडर में डालें और 3 चम्मच चीनी डालें। चिकना (स्मूद) होने तक ब्लेंड करें (अगर यह गाढ़ा लगे, तो पानी या और दूध डालें)।
- स्टेप 3ः इसे एक गिलास में डालें और पीसे हुए काजू डाल कर सजायें।

2. ड्रैगन फ्रूट सलादः एक कटोरी फल दिल की बीमारी, टाइप 2 मधुमेह (डायबिटीज़) को कम कर सकता है और वज़न को नियंत्रित करता है। इसके विपरीत, एक कटोरी ड्रैगन फ्रूट में अन्य स्वस्थ फलों जैसे-स्ट्रॉबेरी, केला, तरबूज, अन्नास और काले अंगूर का मिश्रण होता है।

सामग्री-2 : ड्रैगन फ्रूट अच्छे से कटे हुए, तरबूज छोटे टुकड़ों में कटा हुआ, 1 केला छोटे-छोटे टुकड़ों में कटा हुआ एवं 1 कप काले अंगूर।

बनाने का तरीका

- स्टेप 1ः एक कटोरी में कटा हुआ ड्रैगन फ्रूट, केला, तरबूज और अंगूर डालें।
- स्टेप 2ः थोड़ा नमक और काली मिर्च छिड़कें (वैकल्पिक)।
- स्टेप 3ः स्वाद बढ़ाने के लिए इसमें एक चम्मच आइसक्रीम मिला सकते हैं।

गिरना भी अच्छा है औकात का पता चलता है, बढ़ते है जब हाथ उठाने को, अपनों का पता चलता है, जिन्हें गुस्सा आता है वो लोग सच्चे होते है, मैंने झूठों को अक्सर मुस्कुराते हुए देखा है, सीख रहा हूँ मैं भी अब इंसानों को पढ़ने का हुनर, सुना है चेहरे पे किताबों से ज्यादा लिखा होता है।

-हरिवंशराय बच्चन

कीटनाशकों का प्रयोगः आवश्यक सावधानियाँ

सतीश शर्मा, एस.के. अर्सिया एवं *एम.के.तिवारी

भगवंत राव मण्डलोई कृषि महाविद्यालय, खण्डवा (मध्य प्रदेश)

*राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

वर्तमान समय में कृषक अधिक उत्पादन की चाह से फसलों में रासायनिक खादों का अधिक उपयोग कर रहे हैं, वहीं इन फसलों से संबंधित कीट एवं व्याधियों की रोकथाम हेतु कीटनाशकों का भी अंधाधुंध उपयोग हो रहा है। खेती में कीटनाशकों का उपयोग करना कृषकों के लिए आवश्यक हो जाता हैं परन्तु अधिकांशतः कृषकों को इनके उपयोग की सही विधि की जानकारी नहीं होने तथा केवल विज्ञापनों अथवा कृषि आदान विक्रेताओं के कहने पर इनका उपयोग करते हैं। इसके फलस्वरूप एक तरफ जहाँ वे इन कीटनाशक पर खर्च बढ़ाते हैं वहीं इनके उपयोग की सही विधि का ज्ञान न होने के कारण उनके स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। असावधानीपूर्वक इस्तेमाल होने से प्रयोग करने वाला व्यक्ति, फसल, मृदा एवं पौध उत्पाद खाने वाले सभी प्रभावित होते हैं। इसके अतिरिक्त पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों में जहर के अवशेष चिंताजनक स्थिति की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। अतः इन हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए विशेष सावधानियाँ बरते और साथ ही साथ अपने मजदूरों को इनकी चयन सम्बंधी जानकारी एवं मात्रा वैज्ञानिक संस्तुति के अधार पर हो तथा उनका प्रयोग बताये गये निर्देशों के अनुसार किया जायें तो दुर्घटना से बच सकते हैं तथा आर्थिक हानि के साथ-साथ पर्यावरण को भी बचाया जा सकता है। इस संदर्भ में निम्नलिखित पहलुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है :

पेस्टीसाइड खरीदते समय

- सिर्फ उतना ही कीटनाशक खरीदें जितने की उस वक्त जरूरत हो। कई बार किसान एक साथ अधिक मात्रा में कीटनाशक खरीद लेते हैं और सोचते है कि इसे दोबारा इस्तेमाल करने के लिए रख लेंगे लेकिन ऐसा न करें।
- कभी भी कीटनाशक की सील टूटी हुई शीशी न खरीदें या इसे खुला हुआ न खरीदें। ध्यान रखें कि इसका कंटेनर लीक भी न कर रहा हों।
- उचित या स्वीकृत लेबल के बिना कीटनाशक को न खरीदें।

इसे कैसे रखें

- घर में कीटनाशक कभी भी न रखें।
- इसके असली कंटेनर में ही रखें और कंटेनर को ठीक से बंद करें।
- दूसरे कंटेनर में पेस्टीसाइड न डालें।
- कीटनाशक को ऐसी जगह न रखें जहाँ खाना या चारा रखा हों।
- पानी और सूरज की रोशनी की पहुँच से दूर रखें।
- कीटनाशक और घास-फूस नाशक को एक साथ न रखें।

पेस्टीसाइड को तैयार करते समय

- जब कीटनाशक को खेत में स्प्रे करने के लिए तैयार कर रहे तो उसमें साफ पानी का इस्तेमाल करें।
- हमेशा अपने हाथ, नाक, आँखे, कान और मुँह को ढक लें।
- सिर को भी कैप से ढक लें।
- हाथों को ढकने के लिए पॉलीथीन बैग्स से बने दस्ताने पहने, सिर को ढकने के लिए पॉलीथीन बैग का इस्तेमाल न करें, सिर को कैप या तौलियें से ढके और चेहरे को रूमाल, साफ कपड़े या मास्क से ढके।
- स्प्रे का घोल तैयार करने से पहने कंटेनर के ऊपर लगे लेबल को पढ़ लें। उसमें घोल तैयार करने का तरीका लिखा होता है।
- सांद्रित कीटनाशक को खोलते समय विशेष ध्यान रखें कि वो हाथ पर न गिरें।
- स्प्रेयर टैंक को कभी न सूंघे।
- स्प्रेयर टैंक को भरते समय ध्यान रखें कि कीटनाशक जमीन पर न फैले।
- स्प्रेयर तैयार करते समय न कुछ खायें और न कुछ पीयें।

उपकरण

- लीक करने वाला या कहीं से भी डिफेक्टिव उपकरण को स्प्रे करने के लिए न लें।
- नोजल सही होनी चाहिए।
- कभी भी नोजल को मुँह से फूंक कर साफ नही करना चाहिए। इसके लिए स्प्रे से बंधे पुराने टूथब्रश का उपयोग करें और पानी से साफ करें।
- खरपतवारनाशक और कीटनाशक को कभी भी एक स्प्रेयर

से स्प्रे न करें, अलग-अलग नोजल का प्रयोग करें।

- खाली कीटनाशक कंटेनर को किसी भी दूसरे काम में इस्तेमाल न करें।

छिड़काव करते समय ध्यान दें

- कृषि वैज्ञानिक द्वारा बताई गई या कीटनाशक के कंटेनर पर लिखी मात्रा में ही में छिड़काव करें।
- हमेशा हवा के 90 डिग्री कोण पर छिड़काव करें।
- जब बारिश होने वाली हो तब या होने के तुरंत बाद छिड़काव न करें।
- हवा के बहाव की विपरीत दिशा में छिड़काव न करें।
- नोजल की ऊँचाई करीब 45 सेमी. (1½ फीट) रखें व इधर-उधर न घुमायें।
- कीटनाशक का घोल बनाने के लिए जिस कंटेनर या बाल्टी का इस्तेमाल करें उसें दोबारा कभी किसी घरेलू काम में उपयोग न लायें।
- कीटनाशक के छिड़काव के बाद जानवरों या किसी भी व्यक्ति को खेत में न जाने दें।
- कभी खाली पेट छिड़काव न करें।
- कीटनाशक तैयार करते समय वक्त शरीर को जिस तरह ढका था उसी तरह इसका छिड़काव करते समय भी ढक लें।
- छिड़काव के बाद सारे कपड़े गर्म पानी में साबुन से धोयें और साबुन से नहा लें।
- छिड़काव शाम के समय करें, कीटनाशकों के द्रवीय संरूपणों का प्रयोग करें।

जीवनाशी छिड़काव के बाद बरती जाने वाली सावधानियाँ

- स्प्रे करने के बाद बचे हुए कीटनाशक को कभी भी किसी तालाब, कुएँ या किसी भी पानी के स्त्रोत में न बहायें बल्कि कोशिश करें कि इसे ऐसी बंजर जमीन पर फेंके जहाँ किसी का आना-जाना न हों।
- खाली कंटेनर को किसी पत्थर से तोड़कर उसे पानी से दूर कहीं जमीन में गहरा गड्ढा खोदकर दबा दें।
- स्प्रेयर और बाल्टी को इस्तेमाल करने के बाद साबुन से 4-5 बार धोयें।

कीटनाशक का विषात्त्ता स्तर कैसे जाने

कीटनाशक के डिब्बों, बोतलों या लेबिल पर बने त्रिकोण के रंग के आधार पर उनकी विषात्तता का अनुमान लगाया जा सकता है। अतः जो कीटनाशक जिस स्तर का है उसे उतनी ही सतर्कता के साथ प्रयोग करें। कीटनाशक विषों का विषात्तता के आधार पर निम्नानुसार वर्गीकरण किया जाता है :

कीटनाशक की विषात्तता का स्तर	डिब्बे, बोतल, लेबल अथवा थैली पर बने त्रिकोण का रंग
अत्यधिक विषैला	गहरा लाल
अधिक विषैला	गहरा पीला
मध्यम विषैला	गहरा नीला
कम विषैला	गहरा हरा

कीटनाशक की विषात्तता का स्तर
(डिब्बे, शीशी या थैली पर बने लिंकोन का रंग)

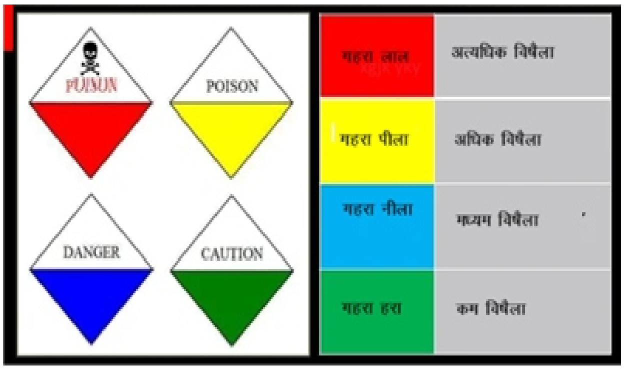

कीटनाशक का प्रयोग के बाद

1. जिस प्रक्षेत्र में दवा का उपयोग किया गया हो उसके पास एक तख्ती सावधान विष उपचारित क्षेत्र लिखकर लगायें।
2. लाल झंडी लगा दे जिससे कोई अनजान व्यक्ति दवा छिड़के खेत में न जायें।
3. कीटनाशक रसायनों के उपयोग के बाद हाथ-मुँह साबुन-पानी से अच्छी तरह धो लेना चाहिए एवं कपड़ों को तुरंत बदल लेना चाहिए।
4. कीटनाशक रसायन का विलयन बनाने में प्रयुक्त बाल्टी या बर्तन का उपयोग अन्य कार्यो में न लें।
5. दवा के प्रयोग के पश्चात् उनके खाली डिब्बों, थैलियों को नष्ट कर दें अथवा उन्हें भूमि में दबा दें।
6. दवा के प्रयोग के पश्चात् संयंत्र अच्छी तरह साफ करके रखें। उसे सिंचाई के पानी, नहर, तालाब या कुओं में खाली न करें।
7. कीटनाशक छिड़की फसल को कोई जानवर या पालतू पशु न खा लेवे यह ध्यान रखें।
8. प्रतीक्षाकाल की समाप्ति के बाद ही छिड़काव वाले खेत से फल व सब्जी आदि खाने के प्रयोग में ले।

सब्जियों की अगेती उपज हेतु लो-टनल तकनीक अपनायें

जसवंत प्रजापति, अभिनव यादव, अर्चना उपाध्याय, *अनीष कुमार सिंह, *अनंत बहादुर एवं **राहुल कुमार

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब)
*भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
**चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

सब्जियाँ मानव आहार का महत्वपूर्ण घटक हैं क्योंकि वे विटामिन, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लवण और खनिजों का समृद्ध स्रोत हैं। ताजी सब्जियों की साल भर माँग रहती है लेकिन आपूर्ति खेती के मौसम तक ही सीमित है। विकासशील देशों में छोटे किसानों द्वारा उगाई जाने वाली सब्जियाँ विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील हैं। तापमान में उतार-चढ़ाव, आर्द्रता और उच्च वर्षा की दशा में खुले मैदान में खेती में कई जैविक और अजैविक तनाव की स्थिति पैदा करती है जो विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण, मौसम के दौरान बाजार माँग की परवाह किये बिना सब्जियों से भर जाता है जिससे कीमतों में काफी गिरावट आती है और बे-मौसम में सब्जियों की कीमत बढ़ जाती है। साल भर ताजी सब्जियों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए बे-मौसमी खेती जरूरी है। सब्जी उगाने वाले किसानों के लिए बे-मौसमी सब्जी की खेती आय के संभावित स्रोतों में से एक है। बे-मौसमी सब्जियों की खेती का मुख्य उद्देश्य कम अवधि के दौरान सब्जियों का उत्पादन और बाजार में आपूर्ति सुनिश्चित करना है। लो-टनल पॉलीथीन शीट से बनी लम्बी अर्धवृत्ताकार कम ऊँचाई वाली संरचनायें हैं। इस तकनीक में लो-टनल लचीली पारदर्शी सामग्रियों से बनायी जाती हैं और सर्दियों के मौसम के दौरान पौधों के चारों ओर हवा को गर्म करके फसल के विकास को बढ़ावा देने के लिए पौधों की एक या अधिक पंक्तियों को घेरने के लिए उपयोग की जाती हैं। यह कम लागत वाली तकनीक ग्रीष्मकालीन सब्जियों की अगेती खेती के लिए उपयुक्त है। यह पौधों को ठंड से बचा सकता है और सामान्य मौसम की तुलना में फसल को लगभग एक महीने आगे बढ़ा सकता है। लो-टनल संरचनायें निर्माण में आसान हैं और रख-रखाव के लिए सीमित कौशल

की आवश्यकता होती है। इस तकनीक का एक अन्य लाभ यह है कि पॉलीटनल को आसानी से हटाया जा सकता है और बाद के वर्षों में उपयोग किया जा सकता है। यह तकनीक छोटे और सीमांत किसानों के लिए ज्यादा उपयोगी है। इस तकनीक में कम सिंचाई की आवश्यकता होती है क्योंकि पानी आवरण के अंदर संघनन के रूप में एकत्र होता है और मिट्टी में वापस आ जाता है। आमतौर पर लो टनल का उपयोग तापमान, आर्द्रता, प्रकाश की तीव्रता, हवा संचार, रोग नियंत्रण जैसे अनुकूल नियंत्रित वातावरण देने और फसल को प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों जैसे-उच्च वर्षा, ओलावृष्टि और पाला से बचाने के लिए किया जाता है।

लो-टनल पौधों के चारों ओर हवा के तापमान को बढ़ाकर उनके विकास को बढ़ावा देने के लिए पौधों की पंक्तियों को घेरने के लिए लचीली पारदर्शी सामग्री से बने होते हैं। इस तकनीक का उपयोग गर्मी के मौसम की सब्जियों की फसल को मौसम की शुरुआत में उगाने के लिए किया जाता है और सामान्य मौसम की तुलना में फसल को लगभग एक महीने आगे बढ़ा देती है। स्क्वैश, खीरा, खरबूजा, तरबूज, शिमला मिर्च और बैंगन जैसी विभिन्न सब्जियों की फसलें लो-टनेल तकनीक में उगायी जा सकती हैं। लो-टनेल या पंक्ति आवरण लघु ग्रीनहाउस जैसी संरचनायें हैं जो पंक्ति के साथ पौधों को ढकती हैं। ये लो-टनेल आधार पर लगभग 1 मीटर ऊँची और 1.5 मीटर चौड़ी हैं और उल्टा यू आकार की संरचना बनती है। लो टनल के घेरे धातु के तार, प्लास्टिक की छड़ों या

लकड़ी से बनाये जा सकते हैं। एक बार उठी हुई क्यारियाँ स्थापित हो जाने पर पंक्ति की लंबाई के साथ लगभग 2 मीटर के अंतराल पर उल्टा यू आकार की संरचना को खेत में रखें। क्यारी की छत को ढकने के लिए 2 मीटर चौड़ाई वाली 25-50 माइक्रोन की पारदर्शी प्लास्टिक फिल्म लगायी जाती है। यहाँ के तापमान को बाहर की तुलना में अधिक बनाये रखने के लिए इन्फ्रा-रेड विकिरण को परावर्तित करता है। ये अंदर के तापमान को बढ़ाती हैं और कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि करती है जिसके परिणामस्वरूप फसलों की अधिक प्रकाश संश्लेषक गतिविधि होती है जिससे उपज जल्दी होती है। पंक्तियों के बीच की दूरी सामान्यतः लगभग 1.5 मीटर रखी जाती है। लो टनल पौधों के आस-पास के सूक्ष्म वातावरण को संशोधित करती हैं, मिट्टी और हवा का तापमान बढ़ाती हैं जिसके कारण पौधे तेजी से बढ़ते हैं और पहले परिपक्व होते हैं और खुले मैदान में खेती की तुलना में पैदावार संभावित रूप से अधिक होती है। लो टनल का व्यापक रूप से कई प्रकार की सब्जियों की फसलों के शुरुआती उत्पादन के लिए उपयोग किया जाता है, लेकिन वे कद्दूवर्गीय सब्जियों जैसे-खरबूजा, तरबूज और स्क्वैश के लिए सबसे प्रभावी हैं। जब फसल की ऊँचाई लो टनल की ऊँचाई तक पहुँच जाती है तो पॉलीथीन शीट को हटाने की आवश्यकता होती है।

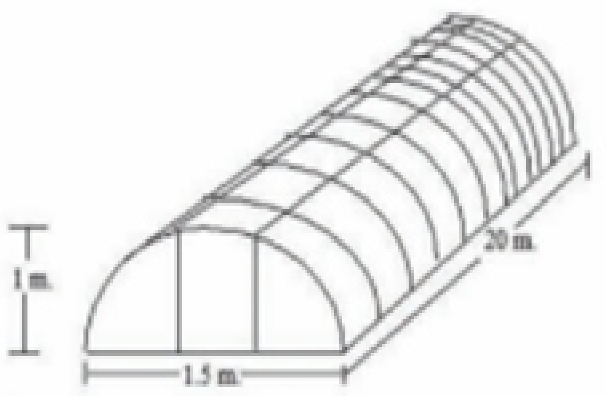

चित्र-1: लो टनल संरचना का माडल

चित्र-2: लो टनल की संरचना और अवलोकन

भूमि का चयनः लो टनल खेती में स्थल चयन महत्वपूर्ण विचार है। भूमि के आस-पास की भूमि से ऊँचे स्तर पर होनी चाहिए और जल निकासी की पर्याप्त सुविधा होनी चाहिए। यदि संभव हो तो लो टनल वहाँ लगाये जहाँ सर्दियों के महीनों के दौरान इसे कम से कम 6-8 घंटे सीधी धूप मिले। अभिविन्यास प्राप्त सूर्य के प्रकाश की मात्रा को प्रभावित करता है, इसलिए लो टनल के अंदर बेहतर तापमान लाभ के लिए लो टनल की दिशा पूर्व से पश्चिम की ओर होनी चाहिए और यह छाया से मुक्त होनी चाहिए। लो टनल को सामान्यतः बाजार के निकट स्थित होना चाहिए, ताकि उत्पाद यथाशीघ्र बाजार तक पहुँच सकें।

भूमि की तैयारी एवं बुआईः लो टनल में सब्जी की खेती के लिए भूमि की तैयारी एक महत्वपूर्ण आयाम है। मिट्टी में पानी सोखने और धारण करने का अच्छा गुण होना चाहिए। मिट्टी ढीली, बारीक भुरभुरी और पत्थर रहित होनी चाहिए। क्यारियो की तैयारी से 14 दिनों पहले मिट्टी का सौर्यीकरण किया जाना चाहिए जो तापमान 40-45 डिग्री सेन्टीग्रेड तक बढ़ने पर हानिकारक सूक्ष्मजीवों, कवकी एवं जीवाणुवीय रोगजनकों और नेमाटोड के नियंत्रण में मदद करता है। भूमि की तैयारी के समय अच्छी तरह से सड़ी गोबर की खाद को 1.5-2.0 किग्रा. प्रति मी^{2} का उपयोग किया जाना चाहिए। मिट्टी का पी.एच. मान 6.0-6.8 होना चाहिए। यदि मिट्टी अम्लीय प्रकृति की है, तो डोलोमाइट या चूना डालने की सलाह दी जाती है और यदि क्षारीय है तो सिफारिश के अनुसार जिप्सम का प्रयोग किया जा सकता है। रोपाई से पहले मिट्टी को खाद के साथ अच्छी तरह से मिलाकर भुरभुरा बना लेना चाहिए। सब्जी फसलों की बुआई या रोपाई के लिए क्यारियों के बीच 50 सेमी. जगह छोड़कर लगभग 100 सेमी. चौड़ी तथा 10-15 सेमी. ऊँची क्यारी तैयार करनी चाहिए। पत्तेदार सब्जियों की सीधी बुआई करनी चाहिए। अधिक दूरी वाली फसलों की रोपाई 45×45 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में की जाती है और पत्तेदार सब्जियों की बुआई पंक्तियों में 15-20 सेमी. की दूरी पर की जानी चाहिए। फसल को फंगल संक्रमण से बचाने और बेहतर उपज और गुणवत्तापूर्ण उपज प्राप्त करने के लिए बुआई या रोपाई के समय अंकुरों या बीजों को 15 मिनट तक उपचारित करना चाहिए।

लो टनल से लाभ

1. उच्च मूल्य वाली सब्जी फसलों की बे-मौसमी खेती संभव है।
2. खुले मैदान में लिये गये उत्पादन की तुलना में उत्पादन 2-4 गुना अधिक होता है।

3. संरचना की लागत अन्य संरक्षित संरचनाओं की तुलना में कम है।
4. भूमि, पानी और उर्वरक जैसे निवेश संसाधनों का कुशल उपयोग।
5. उच्च मूल्य वाली फसलों को बारिश, हवा, पाले, कीटों और बीमारियों से सुरक्षा।
6. बे-मौसम के दौरान सब्जी फसलों की बाजार कीमतें अधिक होने के कारण आर्थिक लाभ अधिक होता है।
7. खुले खेत की स्थिति की तुलना में फसलों की एक समान और बेहतर गुणवत्ता।

लो टनल खेती में समस्याएं

विभिन्न निर्माण सामग्री जैसे-जीआई पाइप, पॉलीथीन शीट आदि आमतौर पर स्थानीय बाजार में उपलब्ध नहीं हैं। कभी-कभी स्थापना और पर्यवेक्षण के लिए कुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है जो गाँव के क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध नहीं होते हैं। साल भर खेती के लिए विभिन्न सब्जी फसलों की प्रथाओं के पैकेज को मानकीकृत नहीं किया गया है, इसलिए एक क्षेत्र की सिफारिश दूसरे क्षेत्र के लिए काम नहीं कर सकती है। लो टनल में खेती के लिए आवश्यक स्व-परागण वाली सब्जी फसलें ही लेना संभव है। लो टनल में, यदि चादर सीधी और ठीक से कसी हुई नहीं है, तो संक्षेपण बन सकता है और पौधों को नुकसान पहुँचा सकता है, क्योंकि उच्च आर्द्रता का स्तर फफूंद के विकास को बढ़ावा देता है। लो टनल में रासायनों के छिड़काव या अन्य अंतः शस्य क्रियाओं के समय पॉलीथीन फिल्म को ऊपर उठाने और नीचे करने की आवश्यकता होती है।

फसल का चयन

लो टनल के नीचे उगायी जाने वाली फसलों के प्रकार का चयन एक महत्वपूर्ण निर्णय है और इसे सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। चयन में टमाटर, शिमला मिर्च, खीरा, स्क्वैश, पत्तागोभी, फूलगोभी, पत्तेदार सब्जियाँ आदि जैसी खेती के लिए सबसे उपयुक्त फसलों पर विचार शामिल होना चाहिए। फसल स्व-परागण वाली और उन्नत किस्मों की होनी चाहिए जो सीमित कारकों से बच सकें या सहन कर सकें। लो टनल में खेती के लिए आमतौर पर संकर किस्म के बीजों की सिफारिश की जाती है क्योंकि उनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता होती है और अंकुरण क्षमता अधिक होती है।

कद्दूवर्गीय सब्जीः कद्दूवर्गीय सब्जी (स्क्वैश, खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, करेला, कुम्हड़ा, टिण्डा, नसदार तोरई, चिकनी तोरई) की जल्दी उपज प्राप्त करने के लिए लो टनल का अभ्यास गर्मियों की शुरुआत में फसल उगाने में सहायक होता है। यह दिसंबर से फरवरी तक पौधों को ठंड से बचाने में मदद करता है। सामान्यतः 2.5 मीटर चौड़ाई की क्यारियाँ दिसम्बर माह में तैयार की जाती हैं। बुआई क्यारियों के दोनों ओर 45 सेमी. की दूरी पर की जाती है। बीज बोने के बाद 2 मीटर लंबाई की लचीली लोहे की छड़ों को अर्द्ध वृत्तखंड के आकार में 2 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है ताकि ऊँचाई कम से कम 45-60 सेमी. रहे। यह क्यारियों पर जोड़ी गई पंक्तियों को कवर करेगा। क्यारियों को 25-40 माइक्रान गेज मोटाई की पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढक दें। इन चादरों को क्यारी के दोनों ओर दबा दें। फरवरी के महीने में बाहर तापमान बढ़ने पर इन चादरों को हटा दें।

बैंगनः बैंगन कम तापमान के प्रति भी संवेदनशील है, इसलिए सर्दियों के दौरान पौधों की सुरक्षा के लिए लो प्लास्टिक टनल तकनीक की सिफारिश की जाती है। बैंगन के पौधों की रोपाई नवंबर के पहले पखवाड़े में ऊंचे क्यारी पर पंक्तियों के बीच 90 सेमी. और पौधों के बीच 30 सेमी. की दूरी पर की जाती है। दिसंबर के पहले सप्ताह में, लोहे के वृत्त-खंडों को ठीक किया जाता है और 50 माइक्रोन मोटाई की पारदर्शी गैर-छिद्रित प्लास्टिक शीट से ढक दिया जाता है। जब तापमान गर्म होने लगे तो पॉलीथीन शीट हटा दें, आमतौर पर फरवरी के दूसरे पखवाड़े में। खुले खेत में खेती की तुलना में यह प्रथा अधिक उपज देती है और मार्च-अप्रैल में कम अवधि के दौरान सब्जी की प्राप्ति संभव है।

शिमला मिर्चः शिमला मिर्च की जल्दी उपज प्राप्त करने के लिए लो टनल तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है। यह पौधों को दिसंबर से मध्य फरवरी तक अत्यधिक कम तापमान से बचाने में मदद करता है। शिमला मिर्च की नर्सरी अक्टूबर के पहले पखवाड़े में बोई जाती है। वायरस के प्रसार को रोकने के लिए नर्सरी क्षेत्र में ही पौधों को जाल से ढककर सफेद मक्खी से बचायें। 4-5 सप्ताह पुराने पौधों को पंक्तियों और पौधों के बीच क्रमशः 130 सेमी. और 30 सेमी. की दूरी बनायें रखते हुए ऊँचे क्यारियों के दोनों किनारों पर लगाया जाता है। दिसंबर की शुरुआत में लोहे के वृत्त-खंडों को 2 मीटर की दूरी पर मैन्युअल रूप से लगायें ताकि जोड़ी पंक्तियों को कवर किया जा सके और प्लास्टिक लो टनल को सहारा दिया जा सके। इन वृत्त-खंडों को तैयार करने के लिए, 2 मीटर लंबी लचीली लोहे की छड़ों को हुप्स का आकार दिया जाता है और इस तरह से लगाया जाता है कि क्यारी के स्तर से 45-60 सेमी. की ऊँचाई हो। पौधों को ढकने के लिए 100 गेज मोटाई की पारदर्शी गैर छिद्रित प्लास्टिक शीट का

सारिणी-1: लो टनल के खेती के संस्तुत फसलें और उनकी किस्में

क्र.सं.	फसल	फसलावधि	किस्में
1.	टमाटर	अक्टूबर-फरवरी	काशी अमन, काशी आदर्श, काशी चयन, काशी अभिलाष, बादशाह, अर्का अभिजीत, अर्का सौरभि, नवीन, अवतार, सोनाली, हीमसोहना, नन 7730
2.	शिमला मिर्च	अक्टूबर-फरवरी	यमुना, बॉम्बे, ट्रिपल स्टार, नताशा, नन 3019, प्रेरणा,पसारेला, स्वर्णा, ओरोबेल
3.	खीरा	नवम्बर-फरवरी	काशी नूतन, कियान, हिल्टन, मल्टीस्टार, इसतिस
4.	पत्तागोभी	जून-सितम्बर	रूबी बॉल, मैजिक बॉल, बीसी-76,
5.	फूलगोभी	जून-सितम्बर	काशी गोभी-25, पूसा स्नोबॉल, हिमज्योति, निचली सुरंग, पूसा शुभ्रा, सुमेधा
6.	तरबूज	जनवरी-फरवरी	लालिमा, राजा, शुगर बेबी, अर्का माणिक
7.	खरबूजा	जनवरी-फरवरी	अर्का जीत, पूसा मधुरिमा, पूसा शरद
8.	लौकी	जनवरी-फरवरी	काशी किरन, काशी गंगा, काशी बहार, पूसा नवीन, अर्का बहार, सम्राट
9.	करेला	जनवरी-फरवरी	काशी प्रतिष्ठा, काशी मयूरी, अरूण, एन.एस.-454
10.	पालक	जून-सितम्बर	आलग्रीन, काशी बारामासी, पूसा भारती

उपयोग करना चाहिए। यह लो टनल के तापमान को बाहर की तुलना में अधिक रखने में मदद करता है। शीट के किनारों को दोनों तरफ मिट्टी में दबा देना चाहिए। फरवरी माह में तापमान बढ़ने पर प्लास्टिक शीट हटा दें।

सिंचाई एवं उर्वरीकरणः फसल की पानी और उर्वरक की आवश्यकता आम तौर पर फसल के प्रकार, बढ़ते मौसम, मिट्टी के प्रकार आदि पर निर्भर करती है। लो टनल में सिंचाई के लिए ड्रिप सिंचाई प्रणाली सबसे व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली प्रणाली है। इस सिंचाई प्रणाली का उपयोग फर्टिगेशन के माध्यम से फसल को पानी में घुलनशील उर्वरक प्रदान करने के लिए भी किया जा सकता है। किसी विशेष सब्जी की फसल के लिए उर्वरक की अनुशंसित खुराक के अनुसार ही उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। पानी की मात्रा उसकी आवश्यकता के अनुसार सिंचाई की जानी चाहिए और जलवायु परिस्थितियों के अनुसार इसे बदला जा सकता है। सामान्यतः 2-4 लीटर प्रति घंटा (एल.एच.) डिस्चार्ज दर के साथ 16 मिमी. व्यास की इनलाइन पार्श्व का उपयोग आमतौर पर सब्जी फसलों में सिंचाई के लिए किया जाता है। सिंचाई की आवृत्ति, मिट्टी की बनावट, मौसम की स्थिति और पौधे के विकास चरण पर निर्भर करती है। आम तौर पर ड्रिप सिंचाई प्रणाली के माध्यम से सब्जियों की फसलों में पानी 3-5 दिनों के अंतराल पर दिया जाता है। अत्यधिक सिंचाई से मिट्टी का वातन असंतुलित हो सकता है और जड़ क्षेत्र में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप जड़ प्रणाली का विकास कम हो सकता है। अतः फसल को अधिकतम मात्रा में पानी देना चाहिए। प्लास्टिक मल्चिंग का उपयोग ड्रिप सिंचाई प्रणाली के साथ संयोजन में किया जा सकता है। फसल पर प्लास्टिक मल्चिंग का उपयोग न केवल मिट्टी की ऊपरी परत से वाष्पीकरण हानि को कम करता है बल्कि यह खरपतवारों के विकास में बाधा के रूप में भी कार्य करता है जिससे एक रसायन मुक्त खरपतवार प्रबंधन तकनीक मिलती है।

कीट एवं कीट प्रबंधनः लो टनल बीमारियों और कीटों से होने वाली फसल क्षति को कम करने, फसल की वृद्धि को बढ़ावा देने और उच्च गुणवत्ता वाली सब्जियों का स्थिर उत्पादन प्राप्त करने में प्रभावी हैं। खुले मैदान की तुलना में लो टनल में कीट और बीमारियाँ कम होते हैं, जिसका मुख्य कारण कम आर्द्रता, पत्तियों के गीलेपन पर नियंत्रण होता है। यदि आवश्यक हो तो फसल के अनुसार कीटनाशक का प्रयोग प्रारंभिक अवस्था में ड्रिप सिस्टम या पर्ण स्प्रे के माध्यम से किया जा सकता है। ऊंचे क्यारी पर मल्चिंग का उपयोग खरपतवारों, कीटों को नियंत्रित करने और पानी के उपयोग की दक्षता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

आर्थिक पहलू : बे-मौसम के दौरान प्लास्टिक लो टनल में सब्जियों की खेती किसान के लिए आर्थिक रूप से फायदेमंद है। लो टनल के निर्माण के लिए प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता होती है जिससे उत्पादन लागत पारंपरिक प्रथाओं की तुलना में काफी अधिक हो जाती है, हालांकि, इस लागत की भरपाई पहले की फसल से अधिक रिटर्न, बेहतर गुणवत्ता और उच्च पैदावार से की जानी चाहिए। प्लास्टिक और निर्माण के लिए आवश्यक सभी सामग्रियों सहित लो टनल की लागत काफी प्रारंभिक निवेश का प्रतिनिधित्व कर सकती है। सामान्यतौर पर लो टनल के आयामों और विशेषताओं के आधार पर लो टनल की निर्माण लागत 80-120 रूपये प्रति वर्ग मीटर होती है।

हाईटेक नर्सरीः आज की आवश्यकता

हरे कृष्ण, शुभम कुमार तिवारी एवं अनीष कुमार सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

किसी भी सब्जी की फसल की पूर्ण उपज क्षमता प्राप्त करने के लिए स्वस्थ बीज और पौधे, पहली और अनिवार्य आवश्यकता है। हाल के वर्षों में सब्जी उत्पादक गुणवत्ता वाले बीजों या पौधों के महत्व के प्रति अत्यधिक सचेत हो गये हैं। भारत में सब्जी की खेती के तहत् आने वाले क्षेत्र का एक बड़ा हिस्सा अब उच्च गुणवत्ता वाली संकर किस्मों के अन्तर्गत आता है। वर्तमान परिदृश्य में सब्जी नर्सरी का उत्पादन अत्यधिक लोकप्रिय कार्य व रोजगार बन गया है। सब्जी नर्सरी ऐसा व्यवसाय है जहाँ सब्जी के पौधों को तब तक उगाया या संभाला जाता है, जब तक की वे स्थायी रूप से रोपे जाने के लिये तैयार न हो जाये। भविष्य में पौधों की नर्सरी उगाने की व्यापक अवसर है। खासकर उन फसलों के लिए जिनका आर्थिक मूल्य अधिक है जैसे-टमाटर, शिमला मिर्च, मिर्च, बैंगन, फूलगोभी, ब्रोकली एवं कद्दूवर्गीय सब्जियाँ आदि।

हाई-टेक सब्जी नर्सरी का महत्व

1. ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता का विकास।
2. विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं के लिए रोजगार सृजन।
3. नर्सरी पौधों की उचित देखभाल।
4. महंगे संकर बीजों से अधिकतम स्वस्थ पौधे तैयार किये जाते हैं।
5. उचित बीज अंकुरण, एक समान वृद्धि तथा कम से कम मृत्यु दर।
6. कम से कम कीट और रोग का प्रकोप।

आधुनिक नर्सरी तैयार करने की तकनीक के घटक और प्रक्रियायें

व्यावसायिक रूप से आधुनिक नर्सरी तैयार करने के लिये संरक्षित संरचना, गुणवत्तायुक्त बीज, प्रो-ट्रे, प्लग ट्रे, मिडिया की तैयारी, स्व-चालित स्टेप सीडर मशीन, मशीनीकरण सिंचाई, उचित प्रकाश, आवश्यक पोषक तत्व एवं कठोरीकरण हेतु कक्ष बनाना आवश्यक है।

संरक्षित संरचनाः पॉलीहाउस (संरक्षित संरचना) बेहतर सुरक्षा देता है क्योंकि बारिश का पानी पॉलीहाउस में प्रवेश नही कर पाता इसलिए पत्ती रोगों को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है। पॉलीहाउस की छत को ढकने के लिए 200 माइक्रोन मोटाई की पारदर्शी यूवी स्थिर पॉलीथीन फिल्म का उपयोग किया जाता है। इसे जमीन के स्तर से संरचनाओं के ठीक नीचे लगभग 15 फीट की ऊँचाई पर वापस लेने योग्य चलने योग्य छाया जाल के साथ प्रदान किया जाता है। बारिश की बौछारों, घास, सतही जल से बेहतर सुरक्षा के लिए पॉलीहाउस के किनारों को जमीन के स्तर से 3 फीट की ऊँचाई तक सीमेंट और ईंट की पकी दिवार से ढकते हैं। किनारों की दीवार शेष ऊँचाई को चारों तरफ से 40 माइक्रोन सफेद रंग के कीट रोधी जाल से ढका जाता है। पॉलीहाउस में एक प्रवेश चैम्बर होता है जिसमें विपरीत दिशाओं में दो दरवाजे बने होते हैं। जहाँ पहले दरवाजे से पॉलीहाउस में प्रवेश या निकास किया जाता है और फिर पहला दरवाजा बंद करने के बाद दूसरे दरवाजा खोला जाता है। पॉलीहाउस का तापमान व आर्द्रता को आवश्यकतानुसार बनाये रखने के लिए पंखा लगा होता है जो तापमान को नियंत्रित करता है।

प्रो-ट्रेः नर्सरी पौधे उगाने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रो-ट्रे या प्लग ट्रे का प्रयोग किया जाता है। हाई-टेक नर्सरी में स्व-चालित स्टेप सीडर मशीन के अनुसार बीज की बुआई के लिए 98 खानों (सेल) वाली ट्रे का प्रयोग किया जाता है। ये प्रो-ट्रे सही अंकुरण में मदद करती है हर बीज को अंकुरित होने के लिए अलग जगह देती है, पौध क्षति की दर को कम करती है एवं समान और स्वस्थ अंकुर विकास को बढ़ावा देती है। पौधों को रोपण के लिए निकालने में आसानी होगी।

मिडियाः अंकुर ट्रे या प्रो-ट्रे को बढ़ते माध्यम (कोकोपीट, परलाइट और वर्मीकुलाइट) से भरा जाता है। बढ़ते माध्यम का अनुपात क्रमशः 3:1:1 का मिश्रण से तैयार करते हैं और प्रो-ट्रे या अंकुर ट्रे को भरते हैं।

बीज की बुआईः हाईटेक नर्सरी में बीज की बुआई मानव हाथ या मशीन से किया जाता है जिसे स्व-चालित स्टेप सीडर मशीन कहते हैं। इस मशीन को 98 प्रो-ट्रे सेल (530×275 मिमी. और प्रो-ट्रे कैबिटी मैट्रिक्सः 14×7 लम्बाई×चौड़ाई) के लिए उपयुक्त बनाया गया है। इस प्रणाली में प्रो-ट्रे कन्वेयर और इंडेक्सिंग सिस्टम, डिबिलंग यूनिट, पेनमैटिक सिस्टम, इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण और प्रोग्रामेबल लॉजिक कंट्रोलर शामिल है। मुख्य कन्वेयर शाफ्ट एक स्ट्रेपर मोटर द्वारा संचालित होता है और स्टेपर मोटर 3200 पल्स/रेव

कॉन्फिगरेशन के साथ एस माइक्रो-स्टेपिंग ड्राइव द्वारा संचालित होता है। 98 प्रो-ट्रे को बढ़ते मीडिया के मिश्रण को मानव हाथों द्वारा भरकर मशीन में डिब्लिग यूनिट में रखा जाता है, डिब्लिंग यूनिट का कार्य बढ़ते मिडिया के मिश्रण से भरे प्रो-ट्रे के प्रत्येक सेल के केन्द्र में 10 मिमी. व्यास ह 10 मिमी. गहरा बनाता है साथ-साथ बीज भी बोता है। सभी गतियों और कन्वेयर इंडेक्स की अंतिम सीमाओं के लिए पी.एन.पी. प्रकार के सेंसर के द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

सिंचाई

बूम सिंचाईः निश्चित सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के विकल्प मोबाइल वाटरिग बूम है। बूम सिंचाई प्रणाली में एक पाइप होता है जो इसकी लंबाई के साथ जुड़े नोजल को पानी पहुँचाता है स्प्रेयर आमतौर पर पॉलीहाउस की पूरी चौड़ाई में फैला होता है, गटर से जुड़ी श्रेणियों में कॉलम पोटर से कॉलम पोस्ट तक एवं स्वतंत्र संरचनाओं से साइडवॉल से साइडवॉल तक यह पूरी चौड़ाई या बेंच ले आउट या गलियारे विन्यास से मेल खाने के लिये सिर्फ कुछ हिस्से की सिंचाई कर सकता है।

बूम सिंचाई नियंत्रण के तरीकेः बूम सिस्टम को नियंत्रण करने के लिये कई तरीके उपलब्ध है। ऐसी प्रणालियों का नियंत्रण मैन्युअल संचालन द्वारा किया जा सकता है। खासकर अगर सिंचाई शुरू करने और रोकने के लिए हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। वैकल्पिक रूप से एक समय घड़ी या चक्रिय (साइक्लि टाइमर) घड़ी का उपयोग किया जा सकता है। जी ड्राइव यूनिट को पूर्व निर्धारित समय पर सक्रिय करता है।

बूम सिंचाई के लाभ

1. एक समान सिंचाई और प्रत्येक पौधे को अनुकूलित वितरण की अनुमति देती है।
2. कम पानी की आवश्यकता होती है।
3. श्रम कम हो जाता है क्योंकि अन्य काम करते समय सिंचाई की जा सकती है।
4. उर्वरीकरण व सिंचाई दोनों साथ-साथ किया जाता है।

जैविक संवर्धनः स्वस्थ पौध उत्पादन के लिए बीज उपचार सबसे आम या एक प्रभावी और किफायती तरीका है। बुआई से 24 घंटे पहले बीजों को *ट्राइकोडर्मा विरिड* 4 ग्राम या *स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस* 10 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज के हिसाब से उपचारित करें।

अंकुरणः सफल बीज अंकुरण के लिए निश्चित् तापमान और एक समान नमी महत्वपूर्ण है। बीज अंकुरण के लिए स्व-जनित नियंत्रित कक्ष प्रणाली उपलब्ध है। टमाटर के बीज 21 डिग्री सेन्टीग्रेड पर सबसे अच्छे अंकुरित होते है। विकास के पहले चार हफ्तों के दौरान आदर्श जड़ क्षेत्र का तापमान 26-29 डिग्री सेन्टीग्रेड और पांचवें और छठें सप्ताह के दौरान 20-26 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। बैंगन की बीज 21-24 डिग्री सेन्टीग्रेड पर अंकुरित होते हैं। मिर्च के बीज 28-30 डिग्री सेन्टीग्रेड पर अंकुरित होते हैं।

पोषक तत्वः नर्सरी में पोषण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कार्बनिक और अकार्बनिक स्रोतों के रूप में पोषण नर्सरी के पौधों की उचित वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्वों की आपूर्ति करता है। पौधों के गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए आवश्यता आधारित पोषक तत्वों को प्रयोग करते हैं।

प्रकाशः प्रकाश उन महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारकों में से एक है जो पौध की वृद्धि को नियंत्रित करते हैं। प्रकाश का उपयोग पौध को अधिक प्रतिकूल वातावरण में प्रत्यारोपित करने से पहले स्थिति के अनुकूल करने के लिए भी किया जा सकता है। एक निश्चित् फोटो पीरियड के तहत् प्रकाश संश्लेषण फोटॉन प्रवाह (पीपीएफ) को बढ़ाकर पौध की वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार किया गया। पीपीएफ का सभी परदा उपचारों के लिए समायोजित किया गया। एफआर प्रकाश अवशोषित करने वाली झिल्ली/परदा तने के विस्तार को कम करने और स्वस्थ टमाटर, शिमला मिर्च और खीरे के पौधे पैदा करने में प्रभावी है।

सारिणी-1: सब्जियों में प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपण हेतु आवश्यक बीज की मात्रा

फसल	बीज दर/हे. (ग्रा.)	फसल	बीज दर/हे. (ग्रा.)
टमाटर (मुक्त परागित)	250-300	बैंगन (मुक्त परागित)	300
टमाटर (संकर)	150-200	बैंगन (संकर)	400
मिर्च (मुक्त परागित)	500-600	फूलगोभी (अगेती)	700
मिर्च (संकर)	300-350	फूलगोभी (मध्य)	400-500
पत्तागोभी	450-500	शिमला मिर्च	400-600
गांठगोभी	700-750	करेला	2000
खीरा	500	लौकी	2000

सख्त कक्षः सख्त कक्ष बनाना शब्द का अर्थ है धीरे-धीरे पौधे को संरक्षित स्थिति से सामान्य जलवायु स्थिति में लाना। यह तनाव को कम करने और बाद में विकास की जाँच करने के लिए किया जाता है जब पौध को मुख्य क्षेत्र में प्रत्यारोपित किया जाता है। सख्त बनाना प्रकाश की तीव्रता को बढ़ाकर ऊर्जा या सिंचाई या पानी और उर्वरक के आवेदन को कम करके प्राप्त किया जा सकता है।

कीटों और रोगों का प्रबन्धन

1. कीटों और रोगों के नियंत्रण में स्वच्छता की महत्वपूर्ण भूमिका है।
2. प्रभावी वेंटिलेशन और वायुसंचलह भी एक अच्छी बीमारी की रोकथाम विधि है।

पौधों के ऊपर पानी का छिड़काव सिंचाई के लिए आमतौर पर नोजल के साथ बूम की आवश्यकता होती है। बूम सिंचाई संयंत्र प्रणाली के लिए कंक्रीट के फर्श और पानी के लिए टैंक की आवश्यकता होती है।

समय निर्मित चीज़ है। यह कहने के लिए कि 'मेरे पास समय नहीं है,' यह कहने जैसा है, 'मैं नहीं करना चाहता।

– लाओत्स

शुष्क क्षेत्रों के लिए खेजड़ी एक पोषकीय सब्जी

सुमन पूनियाँ, आस्तिक झा, निहारिका सिंह एवं अखिल कुमार चौधरी

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

खेजड़ी (*प्रोसोपिस सिनरैरिया* (एल.) भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग की शुष्क भूमि एवं कृषि प्रणालियों का बहुत उपयोगी पौधा है। यह बिश्नोई समुदाय का पवित्र वृक्ष, हिंदुओं का पूजनीय (शमी) वृक्ष और रेगिस्तानी पारिस्थितिकी तंत्र के निवासियों के लिए जीवन-रेखा है। वर्तमान परिस्थितियों को अगर देखा जायें तो रेगिस्तान के कल्प-तरु के रूप में खेजड़ी वृक्ष का महत्व है। खेजड़ी को शमी (संस्कृत), जांती और जंड (दिल्ली, हरियाणा, पंजाब), सुमी/सुमारी (गुजरात), बन्नी (कर्नाटक), वन्नी (तमिलनाडु), कंडी (सिंध) और गफ़ (संयुक्त अरब) के नाम से भी जाना जाता है। खेजड़ी एक फलीदार वृक्ष है। यह न केवल हरे-भरे पत्तों के साथ गर्म शुष्क क्षेत्र की अत्यधिक विषम-जलवायु परिस्थितियों को सहन करता है, बल्कि सबसे शुष्क अवधि के दौरान फल भी देता है।

उपयोग, पोषण एवं लाभः खेजड़ी बहु-कार्यात्मक वृक्ष है और यह पोषण से भरपूर चारा, फलियाँ, बीज और ईंधन-लकड़ी की उपलब्धता भी सुनिश्चित करता है। खेजड़ी की

चित्र-1: खेजड़ी वृक्ष

चित्र-2: खाने योग्य हरी फलियाँ

चित्र-3: सूखी फलियाँ

चित्र-4: किस्म थार शोभा में फलत

पत्तियों को बहुत महत्व दिया जाता है क्योंकि यह पौष्टिक पशु आहार का प्रमुख स्रोत है। हरा और सूखा दोनों प्रकार का अत्यधिक स्वादिष्ट होता है और सर्दियों में इसे खिलाना बहुत फायदेमंद होता है। सामान्यतौर पर पत्ती-चारा और फलियाँ आहार खाद्य रेशा (फाइबर), प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और खनिजों से भरपूर होती हैं।

इसकी फली का गूदा मीठा होता है जिसमें शर्करा 6-16 प्रतिशत पाया जाता है। पेड़ से गोंद के समान पीले-भूरे रंग का गोंद निकलता है। पेड़ की छाल सूखी, तीखा स्वाद वाली होती है और इसका उपयोग टॉनिक, रक्त शोधक और रोगों के उपचार में फार्मूलेशन तैयार करने में किया जाता है। छाल का उपयोग खांसी, सर्दी, अरुचिकर, कुष्ठ रोग, पेचिश, ब्रोंकाइटिस, अस्थमा, ल्यूकोडर्मा, बवासीर और मांसपेशियों के कंपन के इलाज में किया जाता है। पत्तियों का धुआँ आँखों की समस्याओं को ठीक करने में सहायक होता है। कुछ पेड़ों की परिपक्व और सूखी फलियाँ कसैली होती हैं जो गर्म तासीर की मानी जाती हैं। इनका स्वाद, अपचनीय व रक्तपित्त का कारण बनता है जो नाखूनों और बालों को नुकसान पहुँचाता

सारिणी-1: पत्तियों में खनिज और पोषक तत्व की मात्रा

क्र.स.	खनिज और पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)	क्र.स.	खनिज और पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
1.	प्रोटीन	12-18	5.	फ़ास्फ़रोस	0.4
2.	कार्बोहाइड्रेट	43-45	6.	कैल्शियम	2.1
3.	वसा	2.9	7.	कैलोरी मान	5000
4.	रेशा	13-22			

सारिणी-2: फलियों में खनिज और पोषक तत्व

क्र.स.	खनिज और पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)	क्र.स.	खनिज और पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
1.	प्रोटीन	18	4.	रेशा	26
2.	कार्बोहाइड्रेट	43-45	5.	फ़ास्फ़रोस	0.4
3.	वसा	2.9	6.	कैल्शियम	0.4

है। खेजड़ी सर्प-दंश और बिच्छू-डंक के उपचार के लिए अनुशंसित है। इसके फूलों को चीनी के साथ मिलाकर गर्भावस्था के दौरान गर्भपात रोकने के लिए उपयोग किया जाता है। इसके तने की छाल का पानी में घुलनशील अर्क सूजनरोधी गुण प्रदर्शित करता है। खेजड़ी गुणवत्तापूर्ण लकड़ी प्रदान करती है और इसका उपयोग घर-निर्माण में छत, खंभे, दरवाजे, बक्से, उपकरण-हैंडल और कृषि उपकरणों के रूप में किया जाता है। रेगिस्तान में कंटेनर निर्माण लकड़ी आधारित उद्योग है और काफी हद तक देशी पेड़ों पर निर्भर करता है। इसकी लकड़ी में उच्च कैलोरी मान वाला ईंधन (5000 किलो कैलोरी/किग्रा.) होता है और यह लकड़ी का कोयला बनाने के लिए अच्छा होता है। कटी हुई शाखाओं का उपयोग बाड़ लगाने की सामग्री या जलाऊँ लकड़ी के रूप में किया जाता है। कुल मिलाकर यह पेड़, मिट्टी और पारिस्थितिकी को समृद्ध करने के अलावा चारा, सब्जी, फल, गोंद, दवा, ईंधन-लकड़ी, इमारती लकड़ी, बाड़ सामग्री और छाया प्रदान करता है और इसलिए खेजड़ी में बागवानी दोहन और पर्यावरणीय सेवाओं के लिए बहुत ही उपयुक्त है।

किस्म

थार शोभाः किस्म थार शोभा (के.एस.-1) व्यावसायिक पैमाने पर बेहतर गुणवत्ता और उच्च सांगरी उत्पादन के लिए जानी जाती है जिसका विकास वर्ष 2007 में भा.कृ.अनु.प.-सीएआईएच द्वारा किया गया था। बड-ग्राफ्टेड पौधे फैलने वाले, घने-पत्ते और लंबी शाखा वाले होते हैं। विपणन योग्य अवस्था वाली कोमल फलियाँ हल्की हरी, सीधी, गोलाकार-चपटी, 13.1–20.2 सेमी लंबाई, 0.17–0.42 सेमी. व्यास और 0.97–1.75 ग्राम वजन वाली होती हैं। 6वें वर्ष की वाणिज्यिक कटाई आयु समूह में पौधे 3.54 मीटर ऊंचे और 3.72 x 3.98 मीटर फैले हुए हैं और सालाना 5.25 किग्रा. सांगरी और 6.85 किग्रा. लूंग की उपज होती है।

खेजड़ी चयन-2ः खेजड़ी चयन-2 की पहचान वर्ष 2007 में क्षेत्रीय विविधता से की गई थी और बागवानी क्षमताओं के लिए यथास्थान मूल्यांकन किया गया था। इसे बड-ग्राफ्टिंग तकनीक के माध्यम से स्थापित किया गया और वर्ष 2013-2017 तक सीआईएएच, बीकानेर में अध्ययन किया गया, यह उच्च उपज देने वाला है। बड ग्राफ्टेड पौधे सघन विकास, घनी पत्ती और लंबी शाखा-पत्तियों वाले होते हैं। विपणन योग्य अवस्था वाली कोमल फलियाँ हल्की हरी, सीधी, गोलाकार-चपटी, 15.32–21.81 सेमी. लंबाई, 0.28–0.53 सेमी. व्यास और 0.852–1.796 ग्राम वजन वाली होती हैं। 6वें वर्ष की वाणिज्यिक फसल आयु-समूह में पौधे 3.81 मीटर ऊँचाई और 3.62 x 3.75 मीटर फैले हुए और सालाना 5.62 किग्रा. सांगरी और 5.98 किग्रा. लूंग उपज देते है।

जलवायु एवं मिट्टीः ऐतिहासिक रूप से, खेजड़ी ने भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी शुष्क क्षेत्र में ग्रामीण पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। खेजडी को अधिक प्रकाश की आवश्यकता होती है और घनी छाया इसके अंकुरों को नष्ट कर देती है। यह सूखा प्रतिरोधी है और शुष्क परिस्थितियों को इस हद तक सहन करता है कि इसे शुष्कता-प्रिय वृक्ष के रूप में वर्णित किया गया है। खेजड़ी शुष्क जलवायु पसंद करता है और इसके अधिकांश वितरण क्षेत्रों में तापमान में अत्यधिक वृद्धि होती है। यह अत्यंत तनाव सहनशील है और 75 मिमी./वर्ष से कम बारिश वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जाता है। यह ठंड प्रतिरोधी है। यह पेड़ 50 डिग्री सेन्टीग्रेड तक के तापमान को सहन करने में सक्षम है, सबसे शुष्क मौसम की सबसे गर्म हवाओं (लू और आंधी) का सामना करता है तथा जीवित रहता है और थार रेगिस्तान की सबसे विषम परिस्थितियों में भी हरा-भरा रहता है। खेजड़ी में गहरी जड़ प्रणाली होती है, इसलिए यह संबंधित फसलों से प्रतिस्पर्धा नहीं करती है और इसके तने के आस-पास कई अन्य प्रजातियों के पौधे भी उगते हैं। खेजड़ी विभिन्न प्रकार की मिट्टी पर अच्छी तरह से उगती है और इसके लिये रेत और मिट्टी के व्यापक मिश्रण वाली जलोढ़ मिट्टी सबसे अच्छी होती है। उच्च लवणता पर यह जल्दी सूख जाती है। यह सीमित सिंचाई के लिए खारे पानी को सहन करने में सक्षम है। रेत के टीलों और लहरदार मैदानों पर भी इसका अच्छा विकास करता है।

पौधे का गुणनः खेचड़ी वानस्पतिक प्रसार की समस्याओं को हल करने के लिए अनुसंधान की महती आवश्यकता हैं। कटिंग द्वारा प्रसारित करना कठिन है और रूटिंग हार्मोन के साथ उपचार सफल साबित हुआ है लेकिन परिणाम क्षेत्र में ज्यादा उत्साहजनक नहीं हैं। जड़ प्रकंद और एयर-लेयरिंग द्वारा पौधों का गुणन किया गया है लेकिन यह बड़े पैमाने पर संभव नहीं है। एयर-लेयरिंग और कटिंग के माध्यम से प्रसारित करके इसकी मूल आबादी विकसित करने का प्रयास किया गया लेकिन सफलता प्राप्त नहीं हुयी। खेजड़ी की तीव्र वृद्धि के लिए कटिंग और ऊतक संवर्धन द्वारा प्रसार प्रभावी हो सकता है, लेकिन यह अभी तक अमल में नहीं आया है।

(क) बीज प्रसारः खेजड़ी का व्यापक प्रसार केवल बीज द्वारा ही होता है। बीजों के प्राकृतिक फैलाव के परिणामस्वरूप

स्वयं उगे पौधों के साथ-साथ नर्सरी में उगाये गये पौधों को रेगिस्तानी पारिस्थितिकी तंत्र की जीवन-रेखा वृक्ष के रूप में निवासियों द्वारा संरक्षित और प्रसारित किया गया है। जून माह में बीजों से भरी पकी हुई फलियाँ नीचे गिर जाती हैं और छोटे जानवर (बकरी और भेड़) खा जाते हैं और उनके मल के माध्यम से यह हर जगह फैल जाता है। बीजों में सुप्तावस्था नहीं होती और वे जल्दी अंकुरित हो जाते हैं। जून से अगस्त तक मानसून की बारिश बीजों के आसानी से अंकुरण में मदद करती है। युवा पौधे बहुत तेजी से बढ़ते हैं और मानसून अवधि के भीतर मजबूत जड़ विकसित करते हैं। संरक्षण में पौधे बहुत अच्छे से विकसित होते हैं और 4-5 वर्षों के भीतर आकार ले लेते हैं। जबकि असंरक्षित पौधों को जानवरों द्वारा अत्यधिक और नियमित रूप से चोट पहुंचाई जाती है और इसके जमीन के ऊपर के विकास में बाधा आती है, लेकिन जीवित रहने के लिए अच्छी तरह से विकसित जड़ प्रणाली होती है। नर्सरी के लिए ताजे काटे गए और गैर-संक्रमित खेजड़ी बीजों का उपयोग 1:1:1 के अनुपात में भेड़-खाद, वर्मी-कम्पोस्ट और रेतीली मिट्टी के मिश्रण से भरी पॉलीथीन ट्यूबों (30x10 सेमी.) में बुआई के लिए किया जाता है। बुआई से पहले बीजों को 2 प्रतिशत साधारण नमक वाले पानी में दो घंटे तक भिगोना चाहिए और फिर कुछ मिनट तक सुखाकर फफूंदनाशक से उपचारित करना चाहिए। एक या दो बीज बोना सर्वोत्तम है और एकल अंकुर/बीज रखते हुए 18-21 दिनों में विरलीकरण किया जाता है। शेड-नेट नर्सरी की तुलना में खुली परिस्थितियों में उगाये गये पौधों की ऊँचाई और तने का व्यास बेहतर होता है। अंकुर 7-9 महीनों में तैयार हो जाते हैं। इसे रूट-स्टॉक के रूप में खेत में रोपण के लिए या नर्सरी में नवोदित उपयोग के लिए अंकुर लगाना चाहिए। फरवरी और जून महीने में बोई गई नर्सरी के पौधे क्रमशः जून-जुलाई और सितंबर-अक्टूबर के दौरान रोपण के लिए तैयार होते हैं और खेत में बहुत अधिक (80-90 प्रतिशत) जमाव होता है। चूँकि, नवोदित होने में सफलता और बाद में स्कोन-कली के अंकुरण की दर अंकुरों की शक्ति और रूटस्टॉक्स की वांछनीय मोटाई पर निर्भर करती है। इसलिए, नर्सरी में नवोदित होने के लिए पौधों की उचित देखभाल की आवश्यकता होती है और पौध को यथास्थान विकसित किया जाता है। इसे नर्सरी में उगाया जाता है, उसके बाद खेत में रोपण किया जाता है और यथास्थान कलिकायन किया जाता है।

(ब) कटिंगः यह वानस्पतिक प्रसार की सबसे सरल एवं कम लागत वाली विधि है। खेजड़ी के तेजी से बड़े पैमाने पर प्रसार के लिए कलमों द्वारा प्रसार एक उपयुक्त तकनीक हो सकती है, लेकिन यह इतनी सफल नहीं है।

(स) एयर-लेयरिंगः खेजड़ी के पेड़ों की कटाई के बाद उभरे 6-12 महीने पुराने अंकुरों पर एयर-लेयरिंग (गूटी) पर अध्ययन किया गया और लैनोलिन पेस्ट से उपचारित किया गया। एयरलेयरिंग में सफलता बहुत कम (35 प्रतिशत) थी और जून महीने के अभ्यास में रूटिंग प्राप्त हुई। यह विधि कठिन और धीमी है और खेत की उत्तरजीविता अधिक नहीं होती है एवं पौधे कांटेदार होते हैं।

(घ) बड-ग्राफ्टिंग या बडिंग तकनीकः आनुवंशिक रूप से समान खेजड़ी रोपण सामग्री के लिए इसे पी. सिनेरिया रूट-स्टॉक्स पर पैच बडिंग या बड-ग्राफ्टिंग तकनीक द्वारा सफलतापूर्वक किया जाता है। बडिंग होने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली कोमल फलियाँ पैदा करने वाले चयनित विशिष्ट पेड़ों को नवंबर-दिसंबर या जून महीने के दौरान काट दिया जाना चाहिए ताकि नई वृद्धि हो सके और नयी कलियाँ आ सकें। पूरी तरह से विकसित स्कोन-कलियों को मार्च-अप्रैल, मई-जून और जुलाई-अक्टूबर में नर्सरी में उगाये गये अंकुर रूट-स्टॉक और पौधों पर पैच बड किया जा सकता है, और औसतन 76 प्रतिशत सफलता प्राप्त होती है। पैच बडिंग तकनीक सबसे व्यावहारिक, सरल है और प्राप्त परिणाम 7-15 महीने की नर्सरी में उगाये गये रूट-स्टॉक पर अत्यधिक सफल हैं। नियमित रूप से नवोदित होने के लिए उपयुक्त नयी कलियों को तैयार करने के लिए चयनित किस्म के मातृ वृक्षों की हर साल नवंबर-दिसंबर या जून के दौरान छंटाई की जानी चाहिए। सर्वोत्तम परिणामों के लिए, रूट-स्टॉक्स के तने का व्यास लगभग एक सेमी. होना चाहिए और ऐसी स्थिति में शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त करना संभव है। खेजड़ी के पौधों को बागवानी, कृषि-वानिकी और सिल्वी-पशुपालन प्रणालियों के लिए 2-4 मीटर और 4-10 मीटर की दूरी पर या 50-100/हेक्टेयर के घनत्व वाली लाइनों में लगाया जा सकता है। पौधों की प्रारंभिक वृद्धि धीमी होने के कारण खेत में स्थापना के पहले वर्ष में 2-3 निराई-गुड़ाई आवश्यक होती है। तने की सीधी वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए पौधे की शुरुआती उम्र से ही छंटाई करना फायदेमंद पाया गया है। पेड़ के अपेक्षित विकास के लिए जानवरों से सुरक्षा आवश्यक है अन्यथा बहुत पुराने पौधे जमीनी स्तर पर 'फूलगोभी' आकार के हो जाते हैं। खेजड़ी के पेड़ों को बढ़ावा देने के लिए, व्यवस्थित या ब्लॉक वृक्षारोपण विकसित करने के दो दृष्टिकोण हैं और यह कई उद्देश्यों के साथ हो सकता है। पहला उद्देश्य बागवानी एकरूपता और उच्च जैव-भार उत्पादन है और इसके लिए वानस्पतिक प्रचारित और विविध वृक्षारोपण

प्राथमिक आवश्यकता है। दूसरा दृष्टिकोण वृक्षारोपण कृषि-वानिकी और पर्यावरण-पुनर्स्थापना का है।

कटाई और छंटाईः खेजड़ी में वृक्ष संरचना, छत्र प्रबंधन और उपज के लिए कटाई और छंटाई दो आवश्यक कार्य है। नर्सरी या यथास्थान स्थापित रोपणों में मूलवृंतों पर सायन-कली के बंधन के बाद, स्टॉक के ऊपरी हिस्से को हटा दिया जाता हैं या काट दिया जाता है, ताकि अंकुरित सायन-कली की वृद्धि तेजी से हो सके। कली-कलम के नीचे के अंकुरों को तेज कटर का उपयोग करके छंटाई के माध्यम से नियमित रूप से हटाया जाना चाहिए। पौधों में बेहतर संरचना के लिए, कटाई और छंटाई साल में दो बार यानी नवंबर और जून महीने में किया जाता हैं और इसे क्षेत्र स्थापना के चार साल तक जारी रखा किया जाता हैं। बेहतर पौध छत्र प्रबंधन और आर्थिक उपज के लिए 4-5 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद नियमित कटाई और छंटाई का कार्य शुरू किया जाता हैं। खेजड़ी वृक्षारोपण के उद्देश्यों का आंकलन करने के बाद कटाई का समय निर्धारित किया जाता हैं। लूंग और सांगरी दोनों की वार्षिक कटाई के लिए जून महीने में छंटाई की सिफारिश की जाती है और व्यावहारिक रूप से यह तब किया जाता हैं जब सूखे फली (खोखा) पेड़ों से गिरने लगें। इस समय, कटाई की गई लूंग जल्दी सूख जाती है और गुणवत्ता में उत्कृष्ट होती है ताकि इसे ग्रीष्मकालीन-साग के रूप में उपयोग किया जा सके या लंबे समय तक केंद्रित चारे के रूप में संग्रहीत किया जा सके। केवल कली-कलमी वृक्षारोपण से अधिकतम चारे की पैदावार के लिए, लूंग की लॉपिंग प्रति वर्ष 2-3 बार की जा सकती है।

उपजः सामान्यतौर पर 15-20 वर्ष आयु वर्ग के प्राकृतिक रूप से स्थायी, फैले हुए और परिपक्व अंकुर वाले खेजड़ी पेड़ से सालाना 25-30 किग्रा. पत्ती-चारा और 10-15 किग्रा. कोमल फलियाँ प्राप्त होती हैं। सांगरी एक आकर्षक और उच्च कीमत वाली सब्जी है जो ताजी और निर्जलित दोनों तरह से क्रमशः 50-120 और 400-650 रुपये/किग्रा. की दर से बेची जाती है। पत्ता-चारा 10-15 रुपये/किग्रा. की दर से बेचा जाता है और इसकी बाजार क्षमता उत्कृष्ट है।

कीट-पतंग और बीमारियाँः रेगिस्तानी टिड्डियों (*शिस्टोकारिका ग्रेगेरिया*) और मेलोलोन्थिडे बीटल के हमले से खेजड़ी की पत्तियाँ बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। दीमक (*ओडोन्टोटोमेन ओबेसस*) और व्हाइट-ग्रब (*हेलोराचिया एसपीपी*) भी पौधे को जड़ प्रणाली के माध्यम से नुकसान पहुँचाते हैं और नष्ट कर देते हैं। अभी तक खेजड़ी में किसी भी बड़ी बीमारी के बारे में बहुत कम जानकारी है।

मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करणः खेजड़ी की कोमल फलियों को बड़े पैमाने पर निर्जलित किया जाता है और सूखी-सांगरी का उपयोग विभिन्न प्रकार की सब्जियों और अचार बनाने में व्यापक रूप से किया जाता है। बीजों से भरी पकी हुई फलियाँ पोषक तत्वों (कच्चा प्रोटीन 9-14 प्रतिशत, शर्करा 6-16 प्रतिशत फास्फोरस 0.3 प्रतिशत, कैल्शियम 1.6 प्रतिशत और लौह 0.06 प्रतिशत) और ऊर्जा से भरपूर होती हैं।

पहले वो आप पर ध्यान नहीं देंगे, फिर वो आप पर हँसेंगे, फिर वो आप से लड़ेंगे, और तब आप जीत जायेंगे।

-महात्मा गाँधी

उच्च तकनीक से सब्जियों की पौध तैयार करना

राजेश लाठर, सुरेश, श्री देवी एवं गुरनाम सिंह
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

प्रो-ट्रे तकनीक भविष्य के लिए एक बहुत ही अच्छी और कामयाब तकनीक है। अच्छे सब्जी उत्पादन के लिए, अच्छी गुणवता की पौध-अति आवश्यक है। इस तकनीक से बीज का जमाव बेहतर होता है और वानस्पतिक विकास बहुत ही अच्छा होता है। बीमारी और कीड़ों का आक्रमण भी तुलनात्मक तरीके से कम होता है। विशेषतौर पर बेल वाली सब्जियों की खेती गर्म मौसम में की जाती है। टमाटर, मिर्च, बैंगन, भिण्डी भी इसी मौसम में उगाई जाने वाली सब्जियाँ है। इनकी खेती फरवरी-मार्च से लेकर जून-जुलाई तक की जाती है। नेट हाऊस तकनीक से सर्दी के मौसम में इन सब्जियों की पौध तैयार करके इनकी अगेती फसल लेकर अच्छा लाभ कमाया जा सकता है। प्रो-ट्रे प्लास्टिक की बनी हुई होती है। इनमें बीज डालकर तथा नियंत्रित वातावरण में रख कर पौध तैयार की जाती है। प्रो-ट्रे में तैयार किये गये पौधे कई तरीकों से खेत में तैयार पौधों से बेहतर होते हैं। मौसम के अनुरूप पौधों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से लाया और ले जाया जा सकता है।

- इस तकनीक से पौधे जल्दी तैयार हो जाते हैं।
- इस विधि से तैयार पौध स्वस्थ होती है।
- मिट्टी से पैदा होने वाली बीमारियों से पौध को बचाया जा सकता है।
- क्यारी में तैयार की गई कुछ पौध, रोपण के समय टूट जाती है, लेकिन इस तकनीक से तैयार की गई पौध कम मरती हैं।
- इस विधि से तैयार पौध, खेत में जल्दी स्थापित हो जाती है।
- संरक्षित वातावरण में इस तकनीक से किसी भी समय किसी भी सब्जी की पौध तैयार की जा सकती है।
- इस तरह तैयार पौध आसानी से लाई और ले जाई जा सकती हैं।
- इसमें खाद और सिंचाई की कम आवश्यकता होती है।
- पौध एक समान होती है और खेत में बढ़वार अच्छी होती है।

प्रो-ट्रे के लिए माध्यम तैयार करना: इस तकनीक में मिट्टी रहित माध्यम का उपयोग किया जाता है। यह माध्यम परलाइट, कोकोपीट तथा वर्मीकुलाइट के मिश्रण से तैयार

प्रो ट्रे में बीज बुवाई

किया जाता है। इसके लिए साफ जगह या पक्के फर्श पर पॉलीथीन बिछाकर तीन भाग कोकोपीट, एक भाग परलाईट तथा एक भाग वर्मीकुलाइट मिलाकर इस मिश्रण पर पानी छिड़कना चाहिए। पानी डालते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मिश्रण न तो सूखा रहे और न ही अधिक गीला हो। फिर इस मिश्रण को ट्रे में भर दिया जाता है। आसानी से उपलब्ध माध्यम के रूप में 9 भाग वर्मीकुलाइट एवं एक भाग रेत मिलाकर ट्रे में भरा जा सकता है। इस माध्यम में पौध गलने की समस्या भी नही होती।

प्रो ट्रे में बुआई: माध्यम द्वारा भरी हुई ट्रे में हल्का गड्ढा बनाकर प्रत्येक गड्ढे में उन्नत किस्म के उपचारित बीजों की बिजाई करते हैं। इसके बाद प्रो ट्रे पर एक पतली परत के रूप में मिट्टी रहित माध्यम डाला जाता है। तत्पश्चात् प्रो ट्रे को समतल जगह पर रखकर झारे की सहायता से हल्का पानी दिया जाता है।

प्रो ट्रे का रख-रखाव: ज्यादा सर्दी में बीज के जमाव के लिए बहुत ज्यादा ध्यान देने की जरूरत होती है क्योंकि तापमान बहुत कम होता है। प्रो-ट्रे में जरूरत के हिसाब से पानी देना चाहिए और कीड़ों से बचाने के लिए नेट/सेड नेट में रखना चाहिए। नेट को पॉलीथीन से ढककर तापमान को ज्यादा किया जा सकता है। इस तरीके से अलग अलग सब्जियों की पौध 30-50 दिनों में तैयार हो जाती है। पौध निकालते वक्त तने से पकड़कर प्रो ट्रे के कक्ष को अंगुली से उपर की तरफ उठाया जाता है जिससे माध्यम सहित पौध ट्रे के बाहर आ जाती है। जनवरी के अन्तिम सप्ताह या फरवरी के प्रथम सप्ताह जब थोड़ी गर्मी हो जाती है और सर्दी का असर कम हो जाता है

कोकोपीट

परलाइट

वर्मीकुलाइट

तब पौध को प्रो-ट्रे से निकालकर पहले से ही तैयार खेत में रोप दिया जाता है और रोपाई के तुरन्त बाद पानी लगाया जाता है। इस तकनीक से सब्जी उत्पादन समय से पहले होता है। इसलिए किसानों को इसके अधिक दाम मिलते हैं।

कोकोपीटः नारियल के बुरादे से बनता है। कोकोपीट में पौध की जड़ें आसानी से वृद्धि करती है तथा कोकोपीट की पानी को रोकने की क्षमता भी बहुत अच्छी होती हैं।

परलाइटः यह वजन में बहुत ही हल्का और सफेद रंग का होता है। यह वोल्केनिक चट्टानों से निकले पदार्थों से बनता है। इसमें भी जड़े आसानी से वृद्धि करती हैं और जड़ों को आसानी से ऑक्सीजन मिलती रहती है।

वर्मीकुलाइटः यह गंध रहित एवं स्टेराइल प्रकृति का होता है तथा जल्दी खराब नहीं होता है। इसमें पानी को रोकने की बहुत अधिक क्षमता होती है तथा पौध की जड़ों को हवा आसानी से मिल जाती है। इसमें कुछ मिनरल्स भी उपलब्ध होते हैं जो पौध की वृद्धि के लिए जरूरी है। इसके प्रयोग करने से फँफूद व सड़न की समस्या भी नही आती है।

महान चीजों को पूरा करने के लिए, हमें न केवल कार्य करना चाहिए, बल्कि सपने देखना चाहिए, न केवल योजना, बल्कि विश्वास भी करना चाहिए।

– एनाटोल फ्रांस

स्पिरुलिना सायनोबैक्टीरियम का पोषकीय एवं औषधीय महत्व

प्रवीण सिंह, *सौरभ सिंह, *राजन सिंह, **भानु प्रकाश सिंह, ***शुभम तिवारी एवं *सुनील कुमार सिंह

संत बाबा भाग सिंह यूनिवर्सिटी, जालंधर (पंजाब)
*भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
**बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उत्तर प्रदेश)
***सैम हिग्गिनबॉटम विश्वविद्यालय कृषि प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान, प्रयागराज (उत्तर प्रदेश)

स्पिरुलिना एक प्रकार का बैक्टीरिया है जिसे सायनोबैक्टीरियम कहा जाता है जिसे आमतौर पर नीले-हरे शैवाल के रूप में जाना जाता है जो ताजे और खारे पानी दोनों में बढ़ता है। पौधों के समान यह प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया के माध्यम से सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा उत्पन्न करता है। यह गर्म पानी के क्षारीय तालाबों और नदियों में उगता और पनपता है। प्रोटीन आहार में महत्वपूर्ण घटकों में से एक है। यह प्रोटीन के सर्वोत्तम संभावित स्रोतों में से एक है। स्पिरुलिना में यह प्रोटीन मानव और पशु उपभोग के लिए बड़े पैमाने पर व्यावसायिक रूप से उगाया जाता है। स्पिरुलिना में 40-80 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा होती है और इसकी वृद्धि दर बहुत अधिक होती है। इसकी वृद्धि के लिए, इसे कम पानी, भूमि की आवश्यकता होती है और यह उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में किसी भी जलवायु में विकसित हो सकता है। मछली, झींगा और पशुधन जैसे वाणिज्यिक जलीय कृषि में; स्पिरुलिना को गीले या सूखे रूप में पूरक आहार सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है। स्पिरुलिना कोशिकीय, फिलामेंटस नीला-हरा शैवाल है जो अलग-अलग जकड़न और लगभग 0.1 मिमी. की संख्या के सर्पिल में कुंडलित होता है। पर्याप्त खनिजों वाले वातावरण में, यह उच्च पोषक तत्व सामग्री, कम न्यूक्लिक एसिड सामग्री, विटामिन और खनिजों की उच्च सांद्रता के साथ तेजी से बढ़ता है। विकासशील देशों में इसका उपयोग भोजन, चारा और ईंधन के संभावित स्रोत के रूप में किया जाता है। मानव पोषण के लिए इसकी खेती बड़े पैमाने पर साफ पानी और नियंत्रित परिस्थितियों में की जाती है, जबकि इसे अपशिष्ट जल में भी उगाया जाता है और इसका उपयोग जानवरों के चारे में किया जा सकता है। विशेषज्ञ कहते हैं कि यह बहुत से पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत है और यह शरीर को प्राकृतिक रूप से डिटॉक्सीफाई करने में मदद करता है। इसमें क्लोरोफिल पाया जाता है। प्रोटीन, एंटी कैंसर एलीमेंट्स के अलावा इसमें मल्टी विटामिंस होते हैं। एंटी आक्सीडेंट तत्वों के कारण यह खून की सफाई तथा ट्राइगिलसराइड की मात्रा को कम करता है। इससे रक्तचाप नियमित रहता है। पोषण आंकड़ों के मुताबिक, स्पिरुलिना एक पूर्ण वानस्पतिक आधारित प्रोटीन का स्त्रोत है। इसका मतलब यह है कि इसमें सभी प्रकार के एमिनो एसिड होते हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि वे, जिन्हें मवेशी उद्योग की स्थिरता और पर्यावरण पर इसके प्रभाव के बारे में चिंता है, उन्हें यह जानकर खुशी होगी कि स्पिरुलिना दो सौ गुना अधिक उपयोग करने योग्य प्रोटीन का उत्पादन करता है। स्पिरुलिना विटामिन 'बी', 'ए', 'सी', 'ई' और 'के' का बहुत ही अच्छा स्त्रोत है। स्पिरुलिना आयरन, मैग्नीशियम, मैंग्नीज, पोटैशियम, सेलेनियम और जिंक जैसे कई खनिज पदार्थ का भी एक अच्छा स्त्रोत है। ये सुपरफूड ओमेगा-3 फैटी एसिड, बीटा-कैरोटीन जैसे एंटी-ऑक्सीडेंट और अन्य फायदेमंद तत्वों का भी अच्छा स्त्रोत है। अपने छोटे आकार और सरल संरचना के कारण स्पिरुलिना को पचाना और अवशोषित कर पाना बहुत आसान होता है। पोषक तत्वों का भंडार होने के नाते स्पिरुलिना पारपंरिक मल्टी विटामिन का अच्छा विकल्प साबित हो सकता है। ये कैंसर से लड़ने में भी मदद कर सकता है।

स्पाइरुलीना का उत्पादन

स्पाइरुलीना का उत्पादन एक स्क्वायर मीटर में औसत आठ ग्राम प्रतिदिन होता है। इस लिहाज से एक एकड़ में प्रतिदिन 32 किग्रा. का उत्पादन होगा। यह औसत 800 रूपये प्रति किग्रा. बिकता है। स्पाइरुलीना की खेती के लिए जरूरी बातें निचे वर्णित की गयी हैं।

जलवायु

व्यावसायिक और बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए स्पिरुलिना की खेती उपयुक्त जलवायु परिस्थितियों वाले क्षेत्रों में की जानी चाहिए। उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र इसकी खेती के लिए उपयुक्त स्थान हैं। इसे पूरे वर्ष धूप की आवश्यकता होती है। स्पिरुलिना की वृद्धि दर और उत्पादन हवा, बारिश, तापमान में उतार-चढ़ाव और सौर विकिरण जैसे विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है।

तापमान

उच्च प्रोटीन सामग्री के साथ उच्च उत्पादन के लिए, 30-35

डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच का तापमान आदर्श है। स्पिरुलिना 22-38 डिग्री सेन्टीग्रेड के बीच तापमान में जीवित रह सकता है लेकिन प्रोटीन सामग्री और रंग प्रभावित होंगे। संवर्ध (कल्चर) का विरंजन तब होता है जब तापमान 35 डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर होता है और यह 20 डिग्री सेन्टीग्रेड से कम तापमान में जीवित नहीं रह सकता है।

प्रकाश

प्रकाश की तीव्रता इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रकाश का स्पाइरुलिना की प्रोटीन सामग्री, विकास दर और वर्णक संश्लेषण पर सीधा प्रभाव पड़ता है। स्पिरुलिना की खेती के लिए 20-30K लक्स के बीच प्रकाश की तीव्रता आदर्श पाई जाती है। इसे अलग-अलग प्रकाश शेड प्रदान करके 2 K लक्स के तहत 10 घंटे की अवधि के लिए देखा जाता है; नीली रोशनी के तहत, इसमें सबसे अधिक प्रोटीन सामग्री प्राप्त हुई। पीला, सफ़ेद, लाल और हरा प्रकाश उत्पन्न प्रोटीन का अगला स्तर था।

हिलाना

स्पिरुलिना को प्रकाश के संपर्क की आवश्यकता होती है, क्योंकि यह एक प्रकाश संश्लेषण करने वाला जीव है। ऊपरी सतह पर प्रकाश अधिकतम होता है जो स्पिरुलिना कल्चर के शीर्ष पर है वह अच्छी तरह से पनपेगा जबकि नीचे वाले की विकास दर धीमी है और जो स्पिरुलिना नीचे रहता है, वह मर सकता है। प्रत्येक जीव के अधिकतम उत्पादन एवं उचित वृद्धि दर के लिए उस कल्चर को लगातार हिलाते रहना पड़ता है। इससे सभी जीवों को कल्चर के शीर्ष पर पहुंचने में मदद मिलती है और प्रकाश संश्लेषण समान रूप से होता है। हिलाना मैन्युअल के साथ-साथ यंत्रवत् भी किया जा सकता है। पंप और पैडल व्हील लगाए जा सकते हैं और इन्हें सौर ऊर्जा से संचालित किया जा सकता है। हाथ से हिलाते समय अधिकतम सावधानी बरतनी चाहिए जो छड़ी, झाड़ू या किसी अन्य सुविधाजनक चीज़ से किया जा सकता है। एक दिशा में धीमी गोलाकार गति में हिलाना चाहिए। केवल दिन के समय हर दो से तीन घंटे में एक बार हाथ से हिलाया जाता है। हर बार हिलाने के बाद उपकरणों को पहले अच्छी तरह से साफ किया जाता है।

पानी की गुणवत्ता

व्यावसायिक स्पिरुलिना खेती में, कल्चर माध्यम को फिर से बनाने की आवश्यकता होती है जिसमें नीले-हरे शैवाल स्वाभाविक रूप से बढ़ते हैं। स्पिरुलिना के विकास के लिए पानी मुख्य स्रोत है। स्पिरुलिना के स्वस्थ विकास के लिए इसमें पोषण के सभी आवश्यक स्रोत होने चाहिए। पानी में नियंत्रित लवण स्तर प्रदान करके सूक्ष्म शैवाल द्रव्यमान उत्पादन के दौरान आदर्श पानी की गुणवत्ता बनाए रखी जानी चाहिए। आदर्श पीएच मान 8-11 रेंज के बीच होना चाहिए। टैंकों या गड्ढों में जल स्तर को नियंत्रित किया जाना चाहिए। सभी जीवों में होने वाली प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया के लिए जल स्तर महत्वपूर्ण है। जल स्तर जितना गहरा होगा, सूरज की रोशनी का प्रवेश कम हो जाएगा जिससे शैवाल की वृद्धि प्रभावित होगी। 20 सेमी. का न्यूनतम उथला स्तर आदर्श जल स्तर की ऊँचाई है। संवर्धन माध्यम की रासायनिक संरचना इस प्रकार है:

रासायनिक घटक	ग्राम प्रति लीटर
सोडियम हाइड्रोजन कार्बोनेट ($NaHCO_3$)	8.0
सोडियम क्लोराइड ($NaCl$)	1.0
पोटैशियम नाइट्रेट (KNO_3)	2.0
जलीय मैग्नीशियम सल्फेट ($MgSO_4.6H_2O$)	0.16
अमोनियम फॉस्फेट ($(NH4)_3PO_4$)	0.2
यूरिया ($CO(NH_2)_2$)	0.015
सल्फेट हेप्टा हाइड्रेट ($FeSO_4.6H_2O$)	0.005
आयरन पोटेशियम सल्फेट (K_2SO_4)	1.0
कैल्शियम क्लोराइड डाइहाइड्रेट ($CaCl_2.2H_2O$)	0.1
अमोनियम सायनेट (CH_4N_2O)	0.009

संदूषण

कल्चर माध्यम के संदूषण का स्पिरुलिना के उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। संदूषण या तो कीट प्रजनन, विदेशी शैवाल या रासायनिक संदूषकों के माध्यम से हो सकता है। पानी में मौजूद क्लोरीन की कोई भी मात्रा शैवाल की वृद्धि को नष्ट कर देगी। इससे स्पिरुलिना का उत्पादन पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा। मच्छरों और अन्य कीड़ों के लार्वा शैवाल पर फ़ीड करेंगे जिससे उत्पादन में लगभग 10 प्रतिशत की कमी आएगी। कटाई के समय, लार्वा या प्यूपा की मौजूदगी स्पिरुलिना की गुणवत्ता और उपज को दूषित कर देगी। एक महीन तार की जाली के फ्रेम का उपयोग करके सभी बाहरी सामग्रियों को कल्चर माध्यम से हटाया जा सकता है।

स्पिरुलिना की खेती और उत्पादन

प्राकृतिक आवास

स्पिरुलिना प्राकृतिक मीठे पानी में उगने वाली कई शैवाल प्रजातियों में से एक है। वे प्राकृतिक आवासों जैसे मिट्टी के दलदल, समुद्री जल और खारे पानी में भी पाये जाते हैं जहां क्षारीय पानी मौजूद होता है। वे उच्च स्तर के सौर विकिरण वाले अत्यधिक क्षारीय पानी में अच्छी तरह से पनपते हैं जहाँ कोई अन्य सूक्ष्मजीव विकसित नहीं हो सकते हैं। वे रात के दौरान 15 डिग्री सेन्टीग्रेड और दिन के दौरान कुछ घंटों के लिए 40 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान को भी सहन कर सकते हैं। प्राकृतिक आवासों में, उनका विकास चक्र पोषक तत्वों की सीमित आपूर्ति पर निर्भर करता है। जब नदियों से या प्रदूषण से नए पोषक तत्व जल निकायों में पहुंचते हैं, तो शैवाल तेजी से बढ़ते हैं और अपनी आबादी को अधिकतम घनत्व तक बढ़ाते हैं। जब पोषक तत्व समाप्त हो जाते हैं तो स्पिरुलिना नीचे पहुँचकर मर जाता है और पोषक तत्वों को पानी में छोड़ते हुए विघटित हो जाता है। जब अधिक पोषक तत्व झील में प्रवाहित होते हैं तो एक नया स्पिरुलिना चक्र शुरू होता है।

वाणिज्यिक और बड़े पैमाने पर खेती

जापान ने वर्ष 1960 के दशक की शुरुआत में क्लोरेला के सूक्ष्म शैवाल की बड़े पैमाने पर खेती शुरू की, इसके बाद वर्ष 1970 के दशक की शुरुआत में स्पिरुलिना की खेती शुरू की गई। आज 22 से अधिक देश ऐसे हैं जो बड़े पैमाने पर व्यावसायिक तौर पर स्पिरुलिना की खेती करते हैं।

स्पिरुलिना की कटाई

कल्चर माध्यम को छानना

जैसा कि पहले कहा गया है, तालाब में शैवाल की सांद्रता कटाई के लिए निर्णायक कारक होगी। सामान्यतौर पर बीज बोने की प्रक्रिया पूरी होने के पाँच दिन बाद तालाब कटाई के लिए तैयार हो जायेगा। विभिन्न किसान स्पिरुलिना की कटाई के लिए अलग-अलग तरीकों का उपयोग करते हैं, इसका कारण भौतिक संसाधनों और वित्त की उपलब्धता है। स्पिरुलिना की कटाई के लिए निस्पंदन किया जाता है। कल्चर को एक कंटेनर में एकत्र किया जाता है और कपड़े पर डाला जाता है। कल्चर माध्यम स्पिरुलिना को कपड़े पर छोड़ते हुए वापस तालाब में प्रवाहित होता है। अतिरिक्त या कल्चर माध्यम के अवशेष जो अभी भी बचे हैं उन्हें दबाव डालकर या निचोड़कर निकाला जा सकता है। किसानों ने आसान और त्वरित प्रक्रिया के लिए विभिन्न फ़िल्टरिंग प्रक्रियाएँ डिज़ाइन की हैं। कोई भी व्यक्ति विभिन्न डिज़ाइनों के लिए इंटरनेट पर अधिक जानकारी प्राप्त कर सकता है जिसका उपयोग मैन्युअल और त्वरित फसल प्रसंस्करण कार्य को कम करने के लिए किया जा सकता है। फ़िल्टर करने के बाद, एकत्रित स्पिरुलिना को नमक, संदूषक, या कल्चर माध्यम के अवशेषों के किसी भी निशान को हटाने के लिए आसुत जल में अच्छी तरह से धोया जाता है। एक बार सफाई हो जाने के बाद, पानी की मात्रा को निचोड़कर या दबाकर हटा दिया जाता है और सूखने के लिए तैयार किया जाता है। ताज़ा काटा गया स्पिरुलिना अपने पोषण मूल्यों में सर्वोत्तम होगा। ताजा स्पिरुलिना 2 दिनों से अधिक नहीं रह सकता है, इसलिए इसके पोषण मूल्यों को संरक्षित करने और लंबे समय तक चलने के लिए इसे सूखने की आवश्यकता होती है।

ताजा स्पिरुलिना को सुखानाः स्पिरुलिना सूखने पर कई महीनों तक चलता है और इसमें मौजूद पोषक तत्वों को भी संरक्षित किया जा सकता है। शीघ्र सुखाने के लिए, स्पिरुलिना को रसोई के प्रेस ग्रेटर के अंदर रखा जाता है और फिर धूप में एक लंबे साफ कपड़े पर पतले धागों में दबाया जाता है। यह जल्दी सूखने में मदद करता है. किचन प्रेस विभिन्न छेद आकारों की विभिन्न डिस्क के साथ आती है। ऐसी डिस्क का उपयोग करें जो आरामदायक हो और जो जल्दी सूखने में मदद करे। स्पिरुलिना को मशीनों के माध्यम से पतले धागों में निचोड़ा जाता है जिसका उपयोग नूडल्स के लिए किया जाता है और सूखने के लिए खुली धूप में रखा जाता है। कुछ किसान स्पिरुलिना को कपड़े के ऊपर चाकू का उपयोग करके एक पतली परत में लगाते हैं। तेजी से सुखाने के लिए बिजली या सौर ऊर्जा से चलने वाले ओवन का उपयोग किया जा सकता है। ओवन में तापमान 60 डिग्री सेन्टीग्रेड पर बनाये रखने पर लगभग 4 घंटे लगते हैं जबकि 40 डिग्री सेन्टीग्रेड पर स्पिरुलिना को सूखने में लगभग 15-16 घंटे लगते हैं।

पीसना और भंडारण

स्पिरुलिना की अच्छी तरह से सूखी हुई किस्मों को पीस कर तैयार करते हैं। स्पिरुलिना को पीसकर नरम पाउडर बनाया जाता है जिसे बाद में अलग-अलग वजन में पैक किया जाता है और विपणन के लिए सील कर दिया जाता है। वैक्यूम ड्राई और एयरटाइट पैकिंग से पोषण संबंधी गुण 3-4 साल तक सुरक्षित रहेंगे।

सब्जी फसलों में संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग

ओम प्रकाश, ब्रह्म प्रकाश, पल्लवी यादव, कामिनी सिंह एवं मुकुन्द कुमार
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

सब्जी वाली फसलों का महत्व विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत में अत्यंत अधिक है। भारत की जनसंख्या का बड़ा भाग जिसमें महिलायें एवं बच्चे भी सम्मिलित हैं, आज भी असंतुलित भोजन के कारण कुपोषण की गंभीर समस्या से जूझ रहा है। कुपोषण न केवल शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव डालता है, अपितु यह मानसिक विकास को भी प्रभावित करता है। भारत की विविध जलवायु सभी प्रकार की ताजी सब्जियों का उत्पादन एवं उपलब्धता सुनिश्चित करती है। सब्जी उत्पादन में भारत का विश्व में चीन के पश्चात् द्वितीय स्थान है।

सब्जी वाली फसलों में उर्वरकों का प्रयोग कैसे तथा कब करें?

गोभीवर्गीय सब्जियाों में प्रयोग

गोभीवर्गीय सब्जियाँ मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयुक्त होती हैं। गोभी तीन प्रकार की होती हैंः फूल गोभी, बंदगोभी तथा गांठ गोभी। फूलगोभी में दालों वाली सब्जियों से कम लेकिन अन्य सभी सब्जियों से अधिक प्रोटीन पायी जाती है। गोबर की खाद, कम्पोस्ट तथा अन्य जैविक खादें खेत की अंतिम जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए। अच्छी सड़ी हुई मुर्गी बाड़े की खाद का प्रयोग पौध लगाने के कुछ दिनों पश्चात् किया जा सकता है। इससे मृदा में संचित नमी की क्षति नहीं होती तथा कम सिंचाइयों से भी काम चल जाता है। फास्फोरस तथा पोटाश युक्त उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा एवं नाइट्रोजन की आधी मात्रा को एक साथ मिश्रित करके पौध लगाने वाली रेखा के इधर-उधर 10-12 सेमी. की दूरी पर 4-6 सेमी. की गहराई पर देने से अच्छी उत्पादकता प्राप्त होती है। तीन प्रकार की गोभी की फसलों में नाइट्रोजन की शेष मात्रा को पौध लगाने के लगभग 40 दिनों पश्चात् थोड़ी दूर पर डालकर मृदा में खुरपी से भली-भांति मिला देनी चाहिए। फूलगोभी में नाइट्रोजन की कुल संस्तुत मात्रा को तीन बराबर भागों में बाँटकर देने पर अच्छी फसल प्राप्त होती है। प्रथम मात्रा पौध लगाने के 20 दिनों पश्चात् खुरपी से पौधे के पास रखकर मृदा में मिश्रित कर देनी चाहिए। बंदगोभी में यूरिया का छिड़काव उपयोगी पाया गया है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने पर सूक्ष्म तत्वों का उचित सान्द्रण में घोल बनाकर पत्तियों पर छिड़काव करना चाहिए।

कंद वाली सब्जियों में प्रयोगः मूली, गाजर व शलजम जैसी फसलें कंद वाली प्रमुख सब्जियाँ हैं। मूली व गाजर की फसलों की खेती प्रायः हल्के गठन वाली बलुई अथवा दोमट मृदा में की जाती है। अतः इन फसलों से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए उर्वरकों एवं खादों का संयुक्त तथा संतुलित प्रयोग आवश्यक है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा के साथ फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण संस्तुत मात्रा को बुवाई के समय खेत में प्रयोग कर देना चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई आधी मात्रा दूसरी सिंचाई के समय प्रयोग कर लेनी चाहिए।

शलजमः शलजम की खेती करते समय गोबर अथवा कम्पोस्ट की खाद प्रथम जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटैशियम की सम्पूर्ण संस्तुत मात्रा अंतिम जुताई के समय खेत में मिला देनी चाहिए। लगभग 25-30 दिनों पश्चात् पौधों की जड़ें भली-भाँति विकसित हो जाने पर नाइट्रोजन की शेष मात्रा का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। खड़ी फसल में उर्वरक प्रयोग करने से पौधों का विकास अपेक्षाकृत अधिक तथा तीव्र गति से होता है।

अरबीः इसकी खेती करते समय खेत की तैयारी से 20-25 दिनों पूर्व गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट 20-25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देनी चाहिए। बुवाई से पूर्व नाइट्रोजन की आधी मात्रा और फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण संस्तुत मात्रा खेत में डालकर भली-भाँति मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई मात्रा को दो बार में, पहली बार पौध उगने के पश्चात् और दूसरी बार जून के अंतिम सप्ताह अथवा जुलाई के पहले हफ्ते में मिट्टी चढ़ाते समय प्रयोग करना चाहिए।

शकरकंदः शकरकंद की खेती करते समय खेत की तैयारी से कुछ दिनों पूर्व 20 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण संस्तुत मात्रा खेत की अंतिम जुताई के समय खेत में भली-भांति मिला देनी चाहिए।

फल वाली सब्जियों में प्रयोग

बैंगनः बैंगन की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी के समय 20-25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की

सड़ी खाद का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की संस्तुत मात्रा का आधा अंश तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के पहले ही खेत में मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई मात्रा का प्रयोग एक अथवा दो बार में खड़ी फसल में पर्णीय छिड़काव के रूप में प्रयोग करना चाहिए। बैंगन की पेड़ी फसल में अतिरिक्त खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करना लाभदायक रहता है।

टमाटरः इसकी पौध की रोपाई के 20-25 दिनों पूर्व 15-20 टन गोबर की सड़ी खाद खेत की तैयारी करते समय मृदा में भली-भांति मिश्रित कर देनी चाहिए। अंतिम जुताई करते समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा मृदा में 8-10 सेमी. की गहराई पर हल की मदद से प्रयोग कर लेना चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई आधी मात्रा रोपाई के 40 दिनों पश्चात् खड़ी फसल की पंक्तियों के मध्य में डालकर मृदा में भली-भांति मिला देना चाहिए। टमाटर की फसल से अच्छी उत्पादकता प्राप्त करने हेतु बोरॉन का प्रयोग विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध होता है। बोरॉन की कमी होने पर टमाटर के फलों के छिलकों का फटना एवं कड़ा हो जाना, फलों की आकृति का बिगड़ना तथा उनका समान रूप से न पकने जैसे लक्षण नजर आने लगते हैं। ऐसी अवस्था में बोरॉन की आपूर्ति के लिए 0.3 प्रतिशत सांद्रता वाले बोरेक्स के घोल का छिड़काव करने की सलाह दी जाती है। अगर उसी खेत में पहले उगायी गयी फसल में ये लक्षण पूर्व में ही दृष्टिगोचर हो गए हो तो फसल में पुष्पन से 15 दिनों पूर्व ही बोरेक्स का छिड़काव कर देना चाहिए। बोरेक्स का दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 15 दिनों उपरांत करना चाहिए। आवश्यकतानुसार तीसरा छिड़काव भी किया जा सकता है। जस्ते की कमी होने पर रोपाई के 50 दिनों पश्चात् 0.2 प्रतिशत सांद्रता वाले जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव कर देना चाहिए। बोरान तथा जस्ते की कमी के बारे में पहले से जानकारी होने पर रोपाई के समय अन्य उर्वरकों के साथ ही जस्ते व बोरॉनयुक्त उर्वरकों का प्रयोग कर लेना चाहिए।

भिंडीः इसके बुवाई के 20-25 दिनों पूर्व 15-20 टन गोबर की सड़ी खाद खेत की तैयारी करते समय मृदा में भली-भांति मिश्रित कर देनी चाहिए। अंतिम जुताई करते समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा मृदा में 8-10 सेमी. की गहराई पर हल की मदद से प्रयोग कर लेना चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई आधी मात्रा रोपाई के 40 दिनों पश्चात् खड़ी फसल की पंक्तियों के मध्य में डालकर मृदा में भली-भांति मिला देना चाहिए।

फली वाली सब्जियों में प्रयोग

लोबियाः लोबिया दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ों पर पायी जाने वाली गांठों में वायुमंडल में पाये जाने वाली नत्रजन को यौगिकीकृत करने वाले राइजोबियम जीवाणु पाये जाते हैं। अतः लोबिया की फसल को अधिक नत्रजन देने की जरूरत नहीं होती है। फिर भी लोबिया के पौधों की आरंभिक वृद्धि के लिए 25-30 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के पूर्व ही मृदा में प्रयोग कर लेना चाहिए। असिंचित दशा में खाद और उर्वरकों की आधी मात्रा का प्रयोग किया जाना चाहिए। उर्वरकों का प्रयोग बीज वाली कूँड़ के बगल में 5-6 सेमी. की गहराई में करना उपयुक्त रहता है।

सेमः सेम की फसल में 15 टन गोबर की सड़ी खाद, 15 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस तथा 50 किग्रा.पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग कर लेना चाहिए। 15 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के एक माह पश्चात् पर्णीय छिड़काव के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

फ्रेंचबीनः इसको ड्राईबीन, फील्डबीन, नेवीबीन, किडनीबीन, गार्डेन बीन, मैरोबीन तथा फराशबीन के नामों से भी जाना जाता है। फ्रेंचबीन की फसल में 15 टन गोबर की सड़ी खाद, 100 किग्रा. नत्रजन, 50-60 किग्रा. फास्फोरस तथा 50-60 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग कर लेना चाहिए। जस्ते की कमी वाले क्षेत्रों में 10-15 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

चौगला सेमः भारत में चौगला सेम महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, मध्य प्रदेश, ओडिशा तथा गोवा जैसे राज्यों में उगायी जाती है। इसकी अच्छी खेती हेतु 40 किग्रा. नाइट्रोजन, 80 किग्रा. फास्फोरस तथा 30-60 किग्रा. पोटाश का प्रयोग प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल में करना चाहिए।

कद्दूवर्गीय सब्जियों में प्रयोग

कद्दूवर्गीय सब्जियों में लौकी, सीताफल, पेठा, तुरई, टिण्डा तथा करेला जैसी फसलें प्रमुख हैं जो वर्ष में दो बार उगाई जाती हैं। इस वर्ग की सब्जियों हेतु प्रति हेक्टेयर 15-20 टन गोबर की अच्छी सड़ी खाद, नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद को खेत की तैयारी के समय अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। फास्फोरस तथा पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा के साथ आधा नत्रजन बुवाई के समय बीज बोये जाने वाले स्थान अथवा नालियों में भली-भांति मिला लेना चाहिए। शेष नत्रजन की आधी मात्रा लगभग 3-4 हफ्ते बाद तथा शेष पुष्प आने पर नालियों में डाल देना चाहिए।

लौकी एवं सीताफलः खेत की तैयारी के पश्चात् बीज बोने के लिए बनाये गये गड्ढों में प्रति गड्ढा एक टोकरी गोबर की खाद तथा आवश्यक मात्रा में नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश युक्त उर्वरक डालना चाहिए। फल लगने के समय 10-15 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से पौधों की जड़ों से 8-10 सेमी. दूर रखकर मृदा में मिला देने से फल आकार में बड़े हो जाते हैं।

ककड़ी एवं खीराः ककड़ी व खीरा की खेती हेतु खेत की तैयारी करते समय 6-7 टन कम्पोस्ट अथवा 15-20 गाड़ी कम्पोस्ट डालकर भली-भांति मृदा में मिला देना चाहिए। इसके पश्चात् आवश्यक मात्रा में नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश के प्रयोग करना चाहिए। मृदा में जस्ते, अन्य गौण अथवा सूक्ष्म पोषक तत्वों का अभाव होने पर उसकी पूर्ति की जानी चाहिए। प्रायः 25 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना उपयुक्त रहता है। प्रायः बीज बोने के स्थान पर खोदे गए प्रत्येक गड्ढे में एक टोकरी गोबर की सड़ी खाद, यूरिया तथा सूखी मिट्टी भर दी जाती है।

चिचिंडाः चिचिंडा की उत्तम पैदावार लेने हेतु 25-30 टन गोबर की सड़ी खाद के अलावा 40-60 किग्रा. नत्रजन तथा 20-30 किग्रा. फास्फोरस तथा इतना ही पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी करते समय मृदा में मिला लेना चाहिए। बुवाई के 20-25 दिनों पश्चात् नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाशयुक्त उर्वरकों का 15-20 ग्राम मिश्रण प्रति थाल की दर से प्रयोग करना चाहिए। यही मात्रा 3-4 बार में 15-20 दिनों के अंतराल पर प्रयोग करना आवश्यक होता है।

परवलः परवल की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 15-20 टन गोबर की खाद के अतिरिक्त 60-80 किग्रा. नाइट्रोजन, 30-40 किग्रा. फास्फोरस तथा इतना ही पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना आवश्यक होता है। एक वर्ष पुराने पौधों में से किल्ले फूटने के पश्चात 20 दिनों के अंतर पर प्रति पौधा 35 ग्राम यूरिया देना चाहिए। इसके पश्चात् अप्रैल-मई माह में हर पौधे को 100 ग्राम डी.ए.पी. तथा 100 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश दिया जाना चाहिए।

खरबूजा तथा तरबूज में प्रयोगः खरबूजा व तरबूज की फसलें खेतों में गड्ढे बनाकर अथवा नदी के कछारों में नालियाँ खोदकर बोई जाती हैं। गड्ढे अथवा नालियों की तली में गोबर की खाद की मोटी-सी तह बिछा दी आती है। खाद की तह के ऊपर कीटनाशी रसायन का छिड़काव कर देना चाहिए। गोबर की खाद का प्रयोग 25-30 टन प्रति हेक्टेयर की दर से किया जाता है। इसके अलावा फास्फोरस तथा पोटाश की संस्तुत मात्रा का प्रयोग आवश्यक होता है। खाद तथा उर्वरकों की संस्तुत मात्राओं का प्रयोग बुवाई के लिये किया जाता है तथा इतनी ही नत्रजन का पर्णीय छिड़काव किया जाता है। खरबूजा व तरबूज जैसी फसलों को हल्के गठन वाली बलुई दोमट अथवा दोमट मृदाओं में बोये जाने की दशा में खाद तथा उर्वरकों की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

सब्जी वाली फसलों में उर्वरकों की संस्तुत मात्रा का प्रयोगः सब्जी वाली फसलों में उर्वरकों की संस्तुत मात्रा सारिणी-1 में दर्शाई गई हैः

सारिणी-1ः सब्जी वाली फसलों में उर्वरकों की संस्तुत मात्रा

फसल	**नाइट्रोजन** (कि.ग्रा./हे.)	**फास्फोरस** (कि.ग्रा./हे.)	**पोटाश** (कि.ग्रा./हे.)	**अभ्युक्ति**
गोभी-वर्गीय सब्जियाँ				
फूलगोभी	150	60	60	संकर क़िस्मों हेतु उर्वरकों की मात्रा दोगुनी
बंदगोभी	100	60	60	
गांठ गोभी	100	60	60	
कंद-वाली सब्जियाँ				
मूली	100	60	80	
गाजर	60	30	75	गाजर की जड़ों के भीतर काला होने पर 10-20 किग्रा./हे की दर से बोरेक्स का प्रयोग करें।
शलजम	50	30	30	
फल वाली सब्जियाँ				
बैंगन	100-120	50-60	50-60	संकर क़िस्मों हेतु उर्वरकों की मात्रा दोगुनी
टमाटर	100-120	60-80	50-100	
भिंडी	100-150	50-100	50-100	
शिमला मिर्च	100	50	50	
मिर्च	100	50	50	

फली वाली सब्जियाँ				
लोबिया	25-30	60	50	गौण व सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा मृदा परीक्षण के आधार पर प्रयोग करें
सेम	30	40	50	
फराश बीन	100-120	50-60	50-60	
मटर	20-40	60	50-60	
कूष्माण्ड कुल की सब्जियाँ				
लौकी, तुरई, करेला, टिंडा, खीरा, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, परवल, कद्दू, पेठा आदि	40-60	40-60	30-60	संकर क़िस्मों हेतु उर्वरकों की मात्रा दोगुनी
रूपांतरित तना वाली सब्जी				
आलू	150-250	80-150	100-250	-

नोटः सभी सब्जी वाली फसलों में जैविक खादों का प्रयोग महत्वपूर्ण होता है। अतः गोबर की खाद, कम्पोस्ट, प्रेस मड, फसल अवशेष आदि का उपलब्धतानुसार प्रयोग करना चाहिए। जैविक खादों की संस्तुति 20-25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से की जा सकती है।

इस प्रकार, उपरोक्त विधि से खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करके सब्जी वाली फसलों से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

क्रोध, पछतावा, चिंता, और शिकायत में अपना समय बर्बाद मत करो। जीवन दुखी होने के लिए बहुत छोटा है।

– रॉय टी. बेनेट

खरबूजा में विषाणु जनित रोगों का प्रबंधन

हिमांशु सिंह, *प्रदीप कर्मकार, अजित सिंह, **बृजेश कुमार मौर्या, *परगट सिंह, *सौरभ सिंह एवं *राजीव कुमार
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उत्तर प्रदेश)
*भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
**चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

भारत में जलवायु विभिन्नता के कारण 100 से अधिक सब्जियों की खेती की जाती है। कद्दूवर्गीय सब्जियों का पोषकीय दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थान है। इन सब्जियों को ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में देशभर में सफलतापूर्वक उगाया जाता है। सब्जियों में पाये जाने वाले विभिन्न पोषक तत्व और विटामिन मानव स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होते है। कद्दूवर्गीय सब्जियों में स्क्वैश, कद्दू, खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी आदि शामिल हैं, जिसमें खरबूजा एक महत्वपूर्ण फसल है। खरबूजा सुंदर, रसदार और स्वादिष्ट फल है जो पौष्टिक और औषधीय गुणों के लिए लोकप्रिय है। यह दुनिया के सभी उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है, लेकिन गर्म जलवायु इसकी खेती के लिए अत्यधिक उपयोगी है। खरबूजा की खेती नगदी फसल के रूप में की जाती है। इसके फल स्वाद में अत्यधिक स्वादिष्ट होते है जिनका उपयोग जूस या सलाद के रूप में किया जा सकता है। भारत में विभिन्न क्षेत्रों में खरबूजा की कई किस्में उगायी जाती हैं। खरबूजा की खेती के मुख्य क्षेत्र उत्तर में यमुना, गंगा और नर्मदा नदी के किनारे और दक्षिण में कावेरी, कृष्णा और गोदावरी हैं। भारत में इसकी खेती लगभग सभी प्रांतो में की जाती है। देश के उत्तरीय राज्य जिनमें उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश एवं बिहार के शुष्क व अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में इसकी खेती बहुतायत में होती है। व्यापारिक माँग बढ़ने से महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश व तमिलनाडु और पश्चिम-दक्षिण प्रांतों में भी इसकी खेती व्यापक रूप से होने लगी है। कद्दूवर्गीय फसलें वायरस जनित बीमारियों से बहुत अधिक प्रभावित होती हैं। वर्तमान समय में 70 से अधिक अलग-अलग विषाणु प्रजातियाँ कद्दूवर्गीय सब्जियों को संक्रमित कर रही है। विषाणुओं के संक्रमण की बढ़ती संख्या संभवतः पौधों के विषाणु की पहचान के तरीकों में बढ़ोत्तरी के कारण है। इसके अलावा यह ग्लोबल वार्मिंग में बदलाव का भी परिणाम है जिसका व्यापक प्रभाव वाहक (वेक्टर) की आबादी पर हो सकता है। वैश्वीकरण ने दुनिया भर में बीज और पौधों की सामग्रियों के आदान-प्रदान को बढ़ाया है जिसका वैश्विक स्तर पर वायरस के प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान है, जो वर्तमान समय में विषाणुओं की संख्या में वृद्धि से स्पष्ट होता है। इनमें से कुछ विषाणु व्यापक हैं और बड़ी उपज हानि का कारण बनते हैं, जबकि अन्य सीमित भौगोलिक क्षेत्रों या विशिष्ट फसल प्रणालियों तक ही सीमित रहते हैं, जहाँ उनका आर्थिक महत्व कम होता है। पिछले 15 वर्षों के भीतर, मुख्य रूप से एशिया और अमेरिका में 10 नये बेगोमोवायरस, आईपोमोवायरस और क्रिनिवायरस से कद्दूवर्गीय सब्जयों (कुकुर्बिट्स) में संक्रमण पाया गया है। कद्दूवर्गीय सब्जयों में वायरस के संक्रमण के कारण पैदावार तथा बाजार में उपलब्धता पर बड़ा असर होता है। विषाणु के संक्रमण के कारण फल बनने तथा फलों की गुणवत्ता में गिरावट आ जाती है। कुकुर्बिट विषाणु के कारण होने वाले सामान्य लक्षणों में पत्ती मोजैक, कर्लिंग, पौधे के आकार में कमी, गंभीर रूप से मुरझाना, विरूपण, धब्बेदार उभार, पीलापन और नेक्रोसिस शामिल हैं।

विषाणु का प्रसार

कद्दूवर्गीय सब्जियों में होने वाले विषाणु जनित रोगों का प्रसार मुख्य रूप से एफिड तथा सफेद मक्खी द्वारा होता है। सब्जियों की फसलों में एफिड एवं सफेद मक्खी से प्रसारित विषाणु ज्यादा नुकसानदायक होते हैं। विषाणु फसल की पैदावार को कम कर देते हैं। चूंकि एफिड और सफेद मक्खियों की कॉलोनियाँ तेजी से बढ़ती हैं, इसलिए जब पौधे युवा और वृद्धि कर रहे हों, तो पौधों की साप्ताहिक रूप से कम से कम दो बार निगरानी करना महत्वपूर्ण है। पत्तियों के नीचे की ओर देखें जहाँ एफिड्स एकत्र होते हैं और चींटियों की गतिविधि की तलाश करें। एक बार जब एफिड के खाने से पत्तियाँ मुड़ जाती हैं, तो एफिड की संख्या को कम करना अधिक कठिन हो जाता है।

खरबूजा में वायरस से होने वाले प्रमुख रोग

टमाटर लीफ कर्ल नई दिल्ली वायरस (टी.ओ.एल. सी.एन.डी.वी.)

यह एक बाइपरटाइट बेगोमोवायरस प्रजाति है जो प्रकृति में सफेद मक्खी *बेमिसिया टैबासी* द्वारा प्रसारित होती है। टी.ओ.एल.सी.एन.डी.वी. आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण

बेगोमोवायरस है जो टमाटर उत्पादन को विनाशकारी नुकसान पहुँचाता है और यह उत्तरी भारत में अधिक प्रचलित है। टी.ओ.एल.सी.एन.डी.वी. के लक्षण संक्रमित पौधों की प्रजातियों और वृद्धि की स्थिति पर निर्भर करते हैं, हालांकि सामान्य लक्षणों में जुकिनी और तरबूज के पौधों की नई पत्तियों का मुड़ना और पीला पड़ना शामिल है। खीरे के पौधों में वेंस में सूजन और तरबूज के पौधों में गंभीर मोजैक होता है जो खाद्य उत्पादकता और गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकते हैं। इस रोग के कारण उत्पादन में होने वाली हानि पौधों की प्रजातियों, पर्यावरण व अन्य विषाणु के साथ संभावित मिश्रित संक्रमण और यहाँ तक टी.ओ.एल.सी.एन.डी.वी. से जुड़े बीटा सैटेलाइट्स की उपस्थिति पर निर्भर करता है, हालांकि कद्दूवर्गीय फसलों में कोई बीटा सैटेलाइट्स नहीं पाया गया है। खुले मैदान में उगाये गये खरबूजा के पौधों में पत्तियों का पीलापन और नीचे की ओर मुड़ना दिखाई देता है। टी.ओ.एल.सी.एन.डी.वी.के लक्षण को कद्दूवर्गीय सब्जियों में छोटी अवस्था में संक्रमण होने पर सरलता से पहचाना जा सकता है। टी.ओ.एल.सी.एन.डी.वी. के संक्रमण से जुड़े लक्षण पत्ती विकृति, पीला मोजैक, शिराओं का नष्ट होना और पत्ती मुड़ना हैं।

जुकिनी येलो मोजैक वायरस

पौधों में जुकिनी येलो मोजैक नामक रोग पॉटी वायरस समूह के विषाणुओं के संक्रमण से होता है। इस रोग के प्रारम्भ में पौधों के पत्तियों की शिरायें पीली पड़ने लगती है। इसके साथ-साथ पत्तों पर हल्के पीले रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जो मोजैक के समान होता है। इसके अलावा गहरे हरे रंग की शिरायें, पीले मोजैक एवं गंभीर विकृति इसके अन्य लक्षण है। इस रोग के कारण फल विकृत हो जाते हैं जिससे वो बाजार में बेचने योग्य नहीं होते है। यह वायरस एफिड्स द्वारा प्रसारित होता है।

कुकुम्बर मोजैक विषाणु

यह रोग कुकुमो समूह के विषाणु के संक्रमण से होता है। पौधों में इस वायरस के संक्रमण के कारण प्रारम्भ मे पत्तियाँ झुर्रीदार, विकृत और धब्बेदार हो जाती है तथा उनका किनारा नीचे की ओर मुड़ने लगता है। इस रोग के कारण पौधों के तनों के दो गांठों की बीच की दूरी भी कम हो जाती है तथा पत्तियों का आकार भी कम होने लगता है। इसके साथ-साथ प्रारंभिक अवस्था में विषाणु के संक्रमण के कारण तने से निकलने वाली बेलों तथा फूलों की संख्या में कमी हो जाती है। परिपक्व पत्तियों पर हल्के पीले एवं भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जो बाद में पूरे पत्ते पर फैल जाते हैं। पौधों में लगे फलों पर हल्के

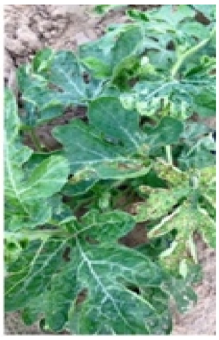

सफेद एवं पीले रंग के धब्बे भी दिखायी देते हैं तथा इनके बीच में कहीं-कहीं पर गहरे हरे ऊबड़-खाबड़ हिस्से होते हैं जिनके कारण फल विकृत हो जाता है। खरबूजा की बेलों का जल्दी नष्ट होना आमतौर पर सीएमवी संक्रमण के कारण होता है। यह वायरस एफिड्स की कई प्रजातियों द्वारा फैलता है।

कुकुर्बिट-पपीता रिंगस्पॉट

कुकुर्बिट-पपीता रिंगस्पॉट (पॉटीवायरस) एफिड से संचारित होता है। यह विषाणु सन् 1969 में पहली बार महामारी के रूप में सामने आया था। यह विषाणु सभी वाणिज्यिक कद्दूवर्गीय फसलों को संक्रमित करने में सक्षम है। प्रभावित पौधों की पत्तियों में मोजैक, विकृति और गहरी पत्ती का कटाव दिखायी देता है। फल भी गांठदार अति वृद्धि और विकृत होते हैं। इस रोग के प्रारम्भ में पत्तियों की शिरायें पीली हो जाती हैं। इस लक्षण के बढ़ने के साथ ही पत्तों पर गहरे हरे रंग के मोजैक, फफोले तथा विकृत दिखाई देने लगते हैं। पौधों के शुरूआत में ही संक्रमित होने पर फल कम संख्या में बनते हैं, जबकि देर से संक्रमण की स्थिति में धब्बेदार फल लगते हैं।

विषाणु जनित रोगो से बचाव व रोकथाम

स्वस्थ बीज एवं पौध का प्रयोगः खरबूजा में लगने वाले कुछ वायरस बीज जनित होते हैं। अतः किसानों को रोग मुक्त स्वस्थ फसल से ही बीज प्राप्त करना चाहिए। बीज उत्पादन के लिए फसल की पहली तथा दूसरी तुड़ाई वाले फलों का प्रयोग ही करना चाहिए। फसल का निरीक्षण निरंतर करते रहे तथा संक्रमित पौधों को प्रारंभिक अवस्था में ही उखाड़ कर नष्ट कर दें। जंगली पौधे व अन्य खरपतवार, जो विषाणुओं को शरण देते हैं, उनको खेत के आस-पास के क्षेत्र में उगने न दें तथा दिखाई देने पर उन्हें नष्ट कर देना चाहिए।

वाहक (वेक्टर) की गतिविधि में नियंत्रणः वायरस के

फैलने के माध्यम में कमी करके भी विषाणु जनित रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। कई कुकुर्बिट वायरस यांत्रिक संपर्क द्वारा भी प्रसारित होते हैं। यांत्रिक संचरण नर्सरी में पौध तैयार करने के दौरान और बाद में छंटाई के दौरान, या फलों की कटाई के दौरान हो सकता है। वायरस को फैलने से रोकने का प्रमुख तरीका सावधानीपूर्वक हाथ की सफाई और कीटाणु शोधन है। इसके अतिरिक्त कीटाणुओं से फैलने वाले विषाणुओं को नियंत्रित करने के लिए कीटों को फंसाने के लिए खेत के बाहर नीले और पीले रंग के चिपचिपे ट्रैप बोर्ड स्थापित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त सिल्वर कलर के प्लास्टिक मल्च का प्रयोग भी कीट वेक्टर को भगाने के लिए किया जा सकता है। कुछ वायरस पत्ती और जड़ों के संपर्क से संचारित होते है। अतः पौधों को उचित दूरी पर रोपण करना चाहिए। जल एवं मिट्टी से संचारित होने वाले विषाणुओं के रोकथाम के लिए उचित जल निकास की व्यवस्था करना चाहिए। फसल के अंतिम कटाई के बाद पुरानी फसल को तुरंत ही नष्ट कर देना चाहिए जो रोगवाहक कीट तथा विषाणु के प्रसार को कम करने में सहायक होता है। वाहक (वेक्टर) कीटों और उनके द्वारा फैलने वाली बीमारियों के प्रबंधन के लिए डिटर्जेंट, कीटनाशकों, आवश्यक तेलों और इन पदार्थों के संयोजन का उपयोग करके कई रासायनिक तरीकों से रोग के फैलाव को नियंत्रित किया जा सकता है। विषाणु जनित रोग, सफेद मक्खी एवं एफिड का प्रकोप फसल में दिखाई देने पर कीट वाहकों को रोकने के लिए 10-12 दिनों के अंतराल पर 0.2 प्रतिशत नीम तेल, 0.1 प्रतिशत डाईमेथोएट, 0.05 प्रतिशत इमिडाक्लोप्रिड कीटनाशक का अदल-बदल कर छिड़काव करने से रोग के फैलाव को रोकने में मदद मिलती है।

वायरस प्रतिरोधी किस्मों का उपयोगः वायरल रोगों को नियंत्रित करने के लिए किसानों द्वारा वायरस प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग संभवतः सबसे आसान तरीका है। किसी पौधे को वायरस के प्रति प्रतिरोधी बनाने के लिए कई तरीके अपनाये जाते हैं। वायरस-प्रतिरोधी रूट स्टॉक पर वांछित अति संवेदनशील किस्म का ग्राफ्टिंग खरबूजा, ककड़ी और तरबूज को मिट्टी से पैदा होने वाले वायरस (जैसे- कार्मोवायरस, नेक्रोवायरस, टोबामोवायरस आदि) से बचाने के लिए बहुत प्रभावी साबित हुआ है। कुछ सबसे हानिकारक मोजैक-उत्प्रेरण कुकुर्बिट वायरस के लिए माइल्ड-स्ट्रेन संरक्षण को सफलतापूर्वक विकसित किया गया है। लेकिन गंभीर कद्दूवर्गीय वायरल रोगों के नियंत्रण के लिए प्रतिरोधी संकर/किस्मों का उपयोग सबसे आसान, कुशल और पर्यावरण के अनुकूल विधि है। व्यावसायिक रूप से उपलब्ध कई किस्मों में अब पारंपरिक प्रजनन या आनुवंशिक इंजीनियरिंग के माध्यम से विकसित कुशल वायरस-प्रतिरोधी जीन मौजूद हैं।

समय की कमी नहीं बल्कि दिशा का अभाव असली समस्या है। हम सभी के पास चौबीस घंटे का दिन होता है।

– जिग जिगलर

सब्जियों के रोग एवं उनका प्रबंधन

नितिका कुमारी एवं ऋतु मावर
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

भारत की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में सब्जी उत्पादन का महत्वपूर्ण योगदान है। सब्जियाँ सघन श्रमिक आवश्यकता वाली फसलें हैं। अतः ये किसान के लिये रोजगार के ज्यादा अवसर प्रदान करती है तथा उनकी आय को बढ़ाती है। इसके साथ ही इन फसलों में लगने वाले रोगों की जानकारी व उपचार का भी उतना ही महत्व है। सब्जियों में बीमारियों का प्रकोप बीजों की बुवाई से लेकर फलों के तैयार होने तक कभी भी हो सकता है। रोग पौधों की जड़ों से लेकर पत्तियों एवं फलों तक में हो सकता है। अन्य फसलों की तरह ही सब्जियों में मुख्य रूप से फफूँद, जीवाणु एवं माइकोप्लाज्मा जनित रोगों का प्रकोप होता है। फसल को विभिन्न प्रकार की बीमारियों से सुरक्षित करने के लिये यह भी जानना आवश्यक है कि प्रत्येक बीमारी के रोगाणु की उपलब्धता व उनके विकसित होने का स्त्रोत या माध्यम भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। ये माध्यम प्रमुख रूप से तीन प्रकार के हो सकते हैः

1. बीज जनित
2. भूमि जनित
3. वायु के माध्यम से फैलने वाले रोगाणु।

इसी प्रकार इनके बीज उपचार, भूमि उपचार तथा फसल पर छिड़काव द्वारा रोगों की रोकथाम की जा सकती है।

सब्जियों की फसल पर प्रकोप करने वाले प्रमुख फफूँद रोग

- **पत्ती धब्बा रोग (लीफ स्पोट)**

सब्जियों की बढ़वार के समय प्रमुख रूप से पत्तियों पर विभिन्न आकार, शक्ल व रंग के धब्बें हो जाते हैं जो बाद में असीमित आकार के बन जाते हैं। ग्रसित पत्तियाँ अपरिपक्व अवस्था में ही गिर जाती हैं। यह रोग मुख्य रूप से *अल्टरनेरिया, सर्कोस्पोरा, फाइटोफ्थोरा* व *सेप्टोरिया* जैसे-फफूँदों से पत्तागोभी, फूलगोभी, टमाटर, बैंगन आदि में बहुतायत से पाया जाता है।

प्रबंधन

प्रबंधन के लिये बुवाई से पूर्व आलू के कंद को मैन्कोजेब 0.3 प्रतिशत की दर से उपचारित करें। अन्य सब्जियों में लक्षण प्रकट होने पर मैन्कोजेब 0.25 प्रतिशत या डायथेन जेड-78 या फाइटोलान 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

- **चूर्णिल आसिता रोग (पाउडरी मिल्डयू)**

यह सब्जियों की आम बीमारी है जिसका प्रकोप होने से पौधों पर सफेद चूर्ण छा जाता है। चूर्ण की परत पत्तियों, कलियों, तनों, टहनियों तथा फलों पर जमी हुई दिखाई देती है। क्षतिग्रस्त पौधें सिकुड़ कर छोटे रह जाते हैं तथा कालान्तर में पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। चूर्णिल आसिता रोग अलग-अलग सब्जियों में भिन्न-भिन्न प्रकार के फफूँदों से होता है जैसे-*इरीसीफी सीकोरेसीयम* का प्रकोप कद्दूवर्गीय सब्जियों तथा भिण्डी में होता है।) विशेष रूप से यह रोग फूल आने की अवस्था पर शुष्क मौसम एवं तापक्रम बढ़ जाने पर ज्यादा होता है।

प्रबंधन

1. गंधक का बारीक चूर्ण 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भुरके।
2. सामान्यतः 2.5 किग्रा. घुलनशील गंधक का पाउडर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।
3. कैराथेन 1 मिली./लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें, जिसे आवश्कतानुसार छिड़काव को 15 दिनों के अन्तराल पर पुनः दोहरावें।

- **झुलसा रोग तथा फल सड़न रोग**

झुलसा बीमारी में टमाटर व अन्य फसलों के तने, फलों और पत्तियों पर गहरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं और सड़ने लगते हैं।

प्रबंधन

इसकी रोकथाम के लिए कॉपर फंफूदीनाशक 3 किग्रा. या मैन्कोजेब (डाईथेन एम 45) 2 किग्रा. प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़के।

- **टमाटर में आर्द्र गलन (डैम्पिंग ऑफ)**

इस रोग का प्रकोप अधिकतर नर्सरी क्षेत्र में देखा जाता हैं। यह रोग बीजजनित और मृदाजनित होता हैं। आर्द्र गलन रोग का अधिकतर प्रभाव 10-15 दिनों के पौधों में ज्यादा देखने को मिलता है। इस रोग के लक्षण अधिकतर टमाटर, मिर्च, बैगन, फूलगोभी, पत्तागोभी, लौकी, गिलकी, करेला और भी कई अन्य सब्जियों में दिखाई देता हैं। डैम्पिंग ऑफ आमतौर पर तब होता है जब पुराने बीज की बुवाई गीली मिट्टी, कम तापमान में की जायें और मिट्टी में जल निकास की सुविधा न

हो तथा उच्च आर्द्रता का स्तर, ठंडी मिट्टी और बीज बहुत गहराई से रोपण जैसी पर्यावरणीय परिस्थितियाँ भी इसके विकास को प्रोत्साहित करती हैं।

प्रबंधन

1. ऐसे क्षेत्र में 1 प्रतिशत फोर्मेलिन घोल (1 लीटर दवा 100 लीटर पानी में) का ड्रेन्चिंग करके बुवाई पूर्व भूमि उपचार कर लें। उपचारित क्षेत्र को 48 घण्टे तक गीले टाट या पॉलीथीन की शीट से ढक दें ताकि जमीन में इस दवा का धुआं घुस सके। इसके बाद उपचारित जमीन को बुवाई से पूर्व 2-3 दिनों तक खुला छोड़ दें ताकि अंकुरण पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़े।
2. पौधों की जड़ों को रोपाई से पहले 0.2 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम के घोल (2 ग्राम दवा 1 लीटर पानी) में 5 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें।
3. नर्सरी में बुवाई से पहले बीजों को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम या 3 ग्राम थाइराम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
4. हर वर्ष नर्सरी के लिए जगह का बदलाव करें और गर्मियों में प्लास्टिक मल्च से ढककर मृदा का उपचार करें।
5. नर्सरी में पानी संयमित मात्रा में दें और जलभराव नहीं होने दें।

जीवाणु (बैक्टीरिया) रोगों का सब्जियों में प्रकोप तथा उनकी रोकथाम

जीवाणु रोगों से सब्जियों में बहुत नुकसान होता हैं। अलग-अलग प्रकार के जीवाणु रोग सब्जियों पर प्रकोप करते हैं, इनमें से प्रमुख हैंः

- **टमाटर व मिर्च में झुलसा (बैक्टीरियल लीफ स्पॉट)**

इस रोग के प्रकोप से पौधों की पत्तियों पर छोटे-छोटे तैलीय या जलीय धब्बे बन जाते हैं। धब्बे बाद में गहरे भूरे से काले रंग के उठे हुए दिखाई देते हैं। कभी-कभी ये धब्बे बहुत अधिक हो जाते हैं।

उपचारः 200 मिग्रा. स्ट्रेप्टोसाईक्लीन प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर आवश्यकतानुसार क्षेत्र में छिड़काव करना चाहिए। बीमारी की गम्भीरता को देखते हुए पौधा बनने से लेकर फल धारण होने तक 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

- **फूलगोभी में काला सड़न रोग**

यह रोग *'जेन्थोमोनास कैम्पेस्ट्रिस'* नामक जीवाणु से फैलता है। नर्सरी की क्यारियों में नई पौध पर यह रोग अधिक लगता है। यह रोग पत्तियों के किनारों से फैलता है। इसके कारण जगह-जगह पीले तथा 'वी' आकार के चकत्ते दिखाई देते हैं। उग्रावस्था में यह रोग गोभी के अन्य भागों में भी दिखाई देता है जिससे फूल का डंठल अन्दर से काला पड़ जाता है।

उपचार

1. बुवाई के पूर्व बीजों को स्ट्रेप्टोसाईक्लीन 250 मिग्रा. एक लीटर पानी में अथवा कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में 2 घण्टे भीगोंकर तथा बीजों को सुखाकर बुवाई करें।
2. पौध रोपण से पूर्व पौध की जड़ों को स्ट्रेप्टोसाईक्लीन एवं कार्बेन्डाजिम के उपर्युक्त घोल में एक घण्टा डुबोकर लगावें।
3. संक्रमित पौधें को हटायें।
4. बीज स्वस्थ और प्रमाणित स्रोत से ही लें।

- **खीरा में कोठिया पत्ती रोग**

यह खीरा में पाये जाने वाला प्रमुख रोग है। यह रोग *'स्यूडोमोनास लैक्रिमन्स'* नामक जीवाणु द्वारा होता है। इसके कारण पत्तियों पर कोणीय भूरे धब्बे बन जाते हैं। पत्तियाँ सूखकर झड़ जाती हैं। प्रभावित फलों में भूरे रंग की सड़न दिखने लगती है। यह बीमारी रोगग्रस्त बेलों, बीजों तथा पानी द्वारा फैलती है।

उपचार

1. स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना चाहिए।
2. स्ट्रेप्टोमाईसिन के 250 पी.पी.एम. के घोल में बीजों को डुबोकर उपचारित करना चाहिए।
3. फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही स्ट्रेप्टोमाईसिन के 250 पी.पी.एम. के घोल से छिड़काव करें।

- **सब्जियों के विषाणु रोग तथा उनका नियंत्रण**

सब्जियों की फसल में विषाणुओं से भी कई प्रकार की बीमारियाँ फैलती है। विषाणु रोग का उपचार बहुत कठिन हैं। अभी तक कोई पूर्ण कारगर रासायनिक उपचार नहीं है। रोगरोधक किस्मों की बुवाई ही इनका सस्ता व कारगर उपाय है। विषाणु रोग के प्रसार में एक कमजोरी यह है कि इसमें चलायमान होने की शक्ति नहीं है। अतः अपने आप नही फैल पाता है तथा कीटों के माध्यम से ही यह एक पौधे से दूसरे पौधे में पहुँच पाता है। अतः विषाणु रोग के प्रसार को रोकने के लिए कीटों का नियन्त्रण कर आसानी से रोका जा सकता हैं। प्रमुख विषाणु रोग एवं उनके नियंत्रण के बारे में नीचे बताया जा रहा हैः

- **कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में विषाणु रोग तथा उनका नियंत्रण**

कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में दो प्रकार के विषाणु पाए जाते हैं: (अ) कुकुम्बर मोजैक वायरस (सी.एम.बी.)

(ब) वाटर मेलन मोजैक वायरस (डब्लू.एम.सी.)

लक्षण: विषाणु रोग एफिडस (मोयला या चेपा) से फैलते हैं। इस रोग के कारण पत्तियों की लम्बाई-चौड़ाई कम हो जाती है। ग्रसित पौधे के फल भद्दे रंग के व बेडोल आकार के हो जाते हैं।

प्रबंधन

1. रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।
2. विषाणुग्रस्त बीजों को प्रयोग नहीं करें तथा रोगरोधी किस्मों की ही बुवाई करें।
3. चेपा की रोकथाम के लिए फास्फोमिडान 150 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर से 10-15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें।

- **मिर्च, टमाटर एवं बैंगन आदि में मोजैक रोग एवं उसका नियंत्रण**

यह रोग मिर्च, टमाटर, बैंगन, आलू तथा कुष्माण्ड कुल की अन्य सब्जियों में अधिक होता है।

लक्षण

1. पौधों की पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं और झुरियाँ पड़ जाती हैं इसलिए इसे माथा बन्दी रोग कहते हैं। पौधा भोजन लेना बन्द कर देता है।
2. पौधों की बढ़वार रूक जाती है और उन पर फल नहीं आते हैं।
3. यह एक विषाणु रोग है जो रस चूसने वाले कीड़ों जैसे- सफेद मक्खी, एफिड या थ्रिप्स के कारण फैलता है।

प्रबंधन

इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी से ही उपचार करना आवश्यक है अन्यथा एक बार रोग हो जाने पर उस काबू पाना बहुत कठिन है।

1. नर्सरी में बुवाई पूर्व कम्पोस्ट खाद के साथ ट्राइकोडर्मा कतारों में डलवा दें।
2. बुवाई के 10 दिन बाद नर्सरी में 10 मिली डाईमेथोएट प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
3. पौध रोपाई के बाद- (अ) फूल आने से पहले डाइमेथोएट 1 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें, (ब) फल आते समय मेलाथिओन 50 ई.सी. 1250 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

- **भिण्डी का पीत -शिरा विषाणु रोग (येलो वेन मोजैक) एवं प्रबंधन**

इस रोग में पत्तियाँ चितकबरी या पीली हो जाती हैं और भोजन बनाना बन्द कर देती है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है।

उपचार: फल लगने से पहले तक टमाटर व मिर्च के विषाणु रोग की तरह ही आन्तरिक कीटनाशी जैसे-डाईमेथोएट का 15-15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करते रहना चाहिए। फल लगने पर मैलाथियान के घोल का फसल पर छिड़काव दोहराते रहना चाहिए। रोगरोधक भिण्डी की किस्मों की बुवाई ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

- **माईकोप्लाज्मा रोग एवं प्रबंधन**

इस श्रेणी के अन्तर्गत लिटिल लीफ रोग उल्लेखनीय है। यह रोग बैंगन की फसल पर प्रकोप करता है।

लक्षण: पौधे पर अनेक छोटी-छोटी पत्तियों का प्रकट होना इस रोग का प्रमुख लक्षण है। इससे पौध की बढ़वार रूक जाती है तथा फूल व फल नहीं लगते।

उपचार

रोग फैलाने वाले कीड़ों के नियन्त्रण के लिए 1 मिली. मैलाथियान का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

रोगों का जैव नियन्त्रण उपाय

ट्राइकोडर्मा

यह फफूँद विरोधी जैव संगठक है जो सब्जियों की फसलों में बीज एवं पौध गलन, पद गलन, जड़ गलन व उकठा आदि की बीज एवं मृदा जन्य बीमारियों से सुरक्षा में प्रभावी है। ट्राइकोडर्मा से बीज उपचार कम लागत में सरलता से किया जा सकता है। इसकी 4-6 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से आवश्यकता होती है। जड़ गलन एवं उकठा रोगग्रसित खेतों में प्रति वर्ष इससे बीज अथवा पौध को उपचार करके बोना चाहिए। ट्राइकोडर्मा में फफूँद के स्पोर होते हैं। इन्हें सूखे एवं ठण्डे स्थानों पर भण्डारित करना चाहिए तथा तीन माह के भीतर इसे प्रयोग कर लेना चाहिए। *ट्राइकोडर्मा* का भूमिगत बीमारियों के निदान हेतु उपयोग किया जाता है। यह एन्टागोनिस्टक फफूँद है जिसके कारण रोगजनित फफूँद की वृद्धि रुक जाती है एवं पौधों पर रोगों का प्रकोप भी कम हो जाता है। यह जैविक नियंत्रण विधि होने के कारण इससे फसलें रासायनिक दवाओं के दुष्परिणाम से अप्रभावित रहती है।

प्रयोग विधि

बीजोपचार-कृषि एवं उद्यानिकी फसलों में बीजोपचार 4-8 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से किया जाता है।

जड़ोपचार

ऐसी फसलें, जिसमें पौध तैयार कर खेत में रोपण किया जाता है, की पौध की जड़ों को उपचार कर लगाने से फसल में बीमारी कम आती है। इसके लिए 500 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* 5 लीटर पानी में घोल बनाकर जड़ों को आधा घण्टा डुबोकर रोपण करना चाहिए।

भूमि उपचार

सामान्यतः 1-2 किग्रा. ट्राइकोडर्मा, 40 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर बुवाई के पूर्व एक हेक्टेयर क्षेत्र में मिलायें।

नर्सरी उपचार

सब्जियों की नर्सरियों में 5 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* प्रति वर्गमीटर की दर से बीज की बुवाई के पूर्व में मिलायें। यह जानकारी होनी चाहिए कि रोग बीज जनित है या भूमि जनित या हवा के माध्यम से फैलने वाला।

रोगों के उपचार करते समय ध्यान रखने वाली बातें

रोग का प्रकोप उसके मौसम की अनुकूलता से ही बढ़ता है, जैसे-आर्द्रता, तापक्रम, नमी, वर्षा आदि। अनुकूल मौसम मिलते ही झुलसा, उकठा, चूर्णिल आसिता आदि रोग पत्तियों, तनों, फलों आदि पर फैलने लगते हैं। रोगों के विस्तार के लिए जिम्मेदार मौसम संबंधी पूर्ण जानकारी का ज्ञान होना चाहिए ताकि समय रहते फसल को उस रोग से बचाने के लिए उपयुक्त रसायन का उपयोग कर उसका नियन्त्रण किया जा सके। रोग संक्रमण की पहचान, फसल पर आये लक्षणों जैसे-धब्बे होना, पीला होना, चूर्ण जमा हुआ दिखना, पत्तियाँ सिकुड़ना, तना सूखना, पौधा मुरझाना, फलों का सड़ना आदि को देखकर रोग को पहचानने का ज्ञान होना चाहिए ताकि उसके अनुसार सही रोगनाशक रसायनों का प्रयोग किया जा सके। बीज व जड़ों के रोगों की पहचान इन भागों के रोगग्रस्त होने से की जा सकती है।

कई रोगों के लिए सुरक्षात्मक उपाय रोग होने से पूर्व ही करना पड़ता है जबकि अधिकतर रोगों में बीमारी के लक्षण दिखने पर ही नियन्त्रण कार्य किया जाता है। अतः पहले यह निश्चित करना होगा किस फसल पर किस प्रकार का संक्रमण है तथा उसके बाद सही पौध संरक्षण दवाओं का चयन करना चाहिए। प्रयोग में लाये जाने वाले रसायन उस सब्जी की फसल के लिए किसी भी प्रकार से हानिकारक (फाइटो टोक्सिक) नहीं होने चाहिए अन्यथा वह फसल को नुकसान कर सकते हैं या उसके अंगों में कुरूपता पैदा हो सकती है। रोग नियन्त्रण में हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि रसायनों का उपयोग उनकी प्रारम्भिक अवस्था से करें अन्यथा बाद में उनका नियंत्रण करना सम्भव नहीं होता। अतः सही पौध-संरक्षण रसायनों का सही समय पर प्रयोग करना चाहिए तभी किये गये खर्चे से ज्यादा लाभ प्राप्त हो सकेगा तथा किफायती भी रहेगा।

अपने ज्ञान के प्रति जरुरत से अधिक यकीन करना मूर्खता है ! यह याद दिलाना ठीक होगा कि सबसे मजबूत कमजोर हो सकता है और सबसे बुद्धिमान गलती कर सकता है !

महात्मा गाँधी

कद्दूवर्गीय सब्जियों में फल मक्खी कीट का प्रबंधन

विनीता राजपूत, सुनील कुमार एवं केतन
कृषि विज्ञान केंद्र, सिरसा
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कद्दूवर्गीय सब्जियाँ (खीरा, तोरई, कुम्हड़ा, करेला, तरबूज, खरबूजा, लौकी/घिया, चिचिण्डा, ककड़ी, टिंडा, फूट-ककड़ी आदि) मुख्यतया ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन महत्वपूर्ण फसलें हैं। यह भारत के लगभग हर क्षेत्र में उगायी जाती हैं। कद्दूवर्गीय सब्जियों का भारत के कुल सब्जी उत्पादन 5.6 प्रतिशत योगदान है । इनकी उत्पादन क्षमता लगभग 10 टन प्रति हेक्टेयर है और छोटे-सीमांत किसानों के लिए आय का अच्छा साधन है। वैसे तो कद्दूवर्गीय सब्जियों को कई प्रकार की बीमारियाँ और कीट प्रभावित करते हैं, परन्तु फल मक्खी (मेलन फ्लाई) इन फसलों में बहुत ज्यादा नुकसान पहुँचाती है। विभिन्न सब्जियों में फल मक्खी से होने वाला नुकसान 30-100 प्रतिशत तक भी हो सकता है।

चित्र-1: छप्पन कद्दू की खेती

फल मक्खी कीट की पहचान और प्रकोप का लक्षण

यह कीट पीले-भूरे रंग की पारदर्शी पंखों वाली मक्खी होती है। फल मक्खी *(बैक्टोसेरा कुकुरबिटी)* सामान्यतः सभी कद्दूवर्गीय सब्जियों पर आक्रमण कर फलों को नुकसान पहुँचाती है। प्रभावित फलों में मक्खी की सूँडी पायी जाती है। फल मक्खी का प्रकोप मार्च महीने से शुरू होकर अगस्त-सितम्बर महीने तक होता है । जुलाई-अगस्त के महीने में मक्खी का प्रकोप इतना ज्यादा हो जाता है कि फसल तुड़ाई लायक ही नहीं रहती है। मादा मक्खी फल के छिलके के नीचे अण्डे देती है जिसमें से सूँडी निकल कर फल को अंदर-अंदर ही खाती रहती है। अधिकतर मक्खी छोटे और मुलायम फलों को अण्डे देने के लिए चुनती है। सामान्यतः 7-10 दिनों में सूँडी फल से बाहर निकलकर मिट्टी में गिर जाती है और प्युपा में परिवर्तित हो जाती है।

चित्र-2 : फल मक्खी का वयस्क

चित्र 3 व 4: करेले और ककड़ी में फल मक्खी का संक्रमण

प्रभावित फलों को उनके टेढ़े-मेढ़े आकार, छेद के निशान एवं छेद से निकलने वाले चिपचिपे गोंद को देखकर पहचाना जा सकता है। संक्रमित फल खाने योग्य नहीं रहते और जीवाणु फफूंद के संक्रमण से गलकर व सूखकर गिर जाते हैं।

फल मक्खी के नियंत्रण के लिए आमतौर पर किसान कीटनाशक के 10-12 छिड़काव करते हैं। फिर भी जानकारी के अभाव में सही प्रकार से प्रबंधन न करने पर इस कीट का प्रबंधन नहीं हो पता है। इसके लिए एकीकृत प्रबंधन तकनीकों की आवश्यकता है, आइए इसके बारे में विस्तार से चर्चा करें।

फल मक्खी प्रबंधन के उपाय

- संक्रमित फलों को नियमित रूप से एकत्रित कर खेत से दूर नष्ट कर दें।
- मक्खी के प्युपा को नष्ट करने के लिए सर्दियों में खेत तैयार करते समय गहरी जुताई करें।
- गर्मियों के दिनों में मक्खी की संख्या कम होती है और बरसात के समय सबसे अधिक, इसलिए बिजाई का समय इसके अनुसार निर्धारित करें।
- फल मक्खी की संख्या और उनके आक्रमण को नियंत्रित करने के लिए फेरोमॉन ट्रैप का प्रयोग सबसे ज्यादा कारगर और पर्यावरण के लिए सुरक्षित उपाय है। इसमें कृत्रिम

चित्र 5 व 6: फल मक्खी प्रबंधन के लिए फूड ट्रैप और पीले स्टिकी ट्रैप का प्रयोग

रूप से बनाए गए मादा मक्खी के फेरोमॉन का प्रयोग नर मक्खी को पकड़ने के लिए किया जाता है। इस प्रकार मक्खी के प्रजनन चक्र को तोड़ा जाता है। फेरोमॉन ट्रैप बनाने के लिए 60 मिली. एथाइल ऐल्कहॉल + 40 मिली. p-एसिटॉक्सीफेनाइल ब्युटेनॉन + 20 मिली. डाईक्लोरोवॉस को मिला कर उसमे एक लकड़ी का गुटका या रस्सी का टुकड़ा 24 घंटे के लिए भिगाएं और ट्रैप बोतल या जार में रखें। एक एकड़ में इस प्रकार तैयार किए गए 10-12 ट्रैप लगाने चाहियें। यह ट्रैप 30-40 दिनों तक काम करता है।

- खेत में पीले स्टिकी ट्रैप 25 ट्रैप प्रति एकड़ लगायें।
- मक्खियों के लिए चारा तैयार करें। इसके लिए मैलाथियान 50 ईसी. का 0.1 प्रतिशत घोल बनाकर उसकी कुछ बूंदें पके हुए कद्दू के गूदे में मिलायें और इसे खेत में 10-15 जगह रखें।
- ट्रैप को और प्रभावशाली बनाने के लिए नीम के तेल (5 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
- यदि खेत में 10 प्रतिशत से ज्यादा फल प्रभावित मिलें, तो मैलाथियान 50 ईसी. (400 मिली. 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़), 1.25 किग्रा. गुड़ मिलाकर 10-10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।
- मक्का का ट्रैप फसल की तरह प्रयोग करें एवं इसे खेत से 8-10 मीटर की दूरी पर कतारों में लगायें। मक्खियों के संक्रमण होने के बाद मैलाथियान 50 ईसी. का छिड़काव कर इनका समुचित प्रबंधन किया जा सकता है।
- कीटनाशक छिड़काव के 7 दिनों तक तुड़ाई न करें।

खुद की तुलना ज्यादा भाग्यशाली लोगों से करने कि बजाये हमें अपने साथ के ज्यादातर लोगों से अपनी तुलना करनी चाहिए और तब हमें लगेगा कि हम कितने भाग्यवान हैं।

-हेलेन केलर

मशरूम के अचार एवं व्यंजन

सतीश शर्मा, *एम.के. तिवारी एवं एस.के. असिया

भगवंत राव मण्डलोई कृषि महाविद्यालय, खण्डवा (मध्य प्रदेश)

*राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर(मध्य प्रदेश)

प्राचीन काल से स्वादिष्ट मानी जाने वाली खुंभी ऐसा संपूरक आहार मानी जाती है जो प्रोटीन एवं विटामिन का अच्छा स्त्रोत है। इसके अलावा इसमें आहार योग्य तंतु की अधिकता, कम कैलोरी मूल्य और कोलेस्ट्रॉल की अनुपस्थिति के कारण यह मोटापा घटाने, मधुमेह और दिल की बीमारियों में आहार चिकित्सा में उपयोग में लायी जाती है। अनूठी सुगंध, असाधारण स्वाद, गठन तथा आर्कषक रूप के कारण खुंभी के अनेक व्यंजन बनाये जाते हैं। मशरूम सूप शादी एवं बड़े होटलों की शान है। कई कम्पनियाँ सूप पाऊडर, मसाला पाऊडर का निर्माण कर पैकिंग कर रही है। मशरूम व्यंजन जैसे- मशरूम मटर, मशरूम पकोड़ा, मशरूम आलू, मशरूम नूडल्स, मशरूम अचार, मशरूम खट्टा-मीठा अचार, मशरूम ऑमलेट आदि बनाये जा सकते हैं। वर्तमान में अनेक उत्सवों, शादी, पार्टी में मशरूम व्यंजनों की माँग बढ़ रहीं है। कुछ व्यजन बनाने की विधि नीचे दी जा रही है:

- **मशरूम का अचार**

सामग्री: मशरूम 1 किग्रा., सरसों तेल 300 मिली., लहसुन 10 ग्राम, सिरका 350 मिली., जीरा 10 ग्राम, लौंग, बड़ी व छोटी इलायची, दालचीनी 25 ग्राम, राई दो बड़े चम्मच, मेथी दाना 10 ग्राम, हल्दी 10 ग्राम, अदरक 25 ग्राम, नमक 50 ग्राम, प्याज 25 ग्राम एवं लाल मिर्च स्वादानुसार।

विधि: मशरूम को अच्छी तरह धोकर लम्बे व पतले टुकड़ों में काट लिया जाता है। उबलते पानी में 2 मिनट के लिए डालकर निकाल लें । धूप में फैलाकर अतिरिक्त पानी को सूखने दें। आधे तेल को गर्म करें इसमें बारीक पीसे प्याज, लहसुन, अदरक व अन्य मसालों को भून लें । फिर मशरूम भी इसमें डाल दें। अब सिरका डाल दें। ठण्डा होने पर काँच के बर्तन में भर दें। बाकी बचा हुआ तेल भी इसमें डाल दें। एक महीने पश्चात् खाने योग्य अचार तैयार हो जायेगा।

- **मशरूम का खट्टा मीठा अचार**

सामग्री: मशरूम 1 किग्रा., अदरक 25 ग्राम, लहसुन 10 ग्राम, प्याज 25 ग्राम, सरसों तेल 400 मिली., चीनी 300 ग्राम, सिरका, गर्म मसाला 2 बड़े चम्मच, मिर्च हल्दी व नमक स्वादानुसार।

विधि: मशरूम को धोकर पतला व लम्बा काट लें। सूखने पर तेज आँच पर तेल डालकर मिला लें। शेष बचे तेल में सभी मसालों (पिसे हुए) को भून लें। चीनी को सिरके में पकाकर गला लें तथा अब मसाले डाल दें। अब इसमें मशरूम डाल दें ठण्डा होने पर साफ बर्तन में भर लें। दो-तीन दिन धूप में रखकर 14 दिनों में यह अचार खाने योग्य हो जाता है।

- **मशरूम पकौड़े**

सामग्री: मशरूम 250 ग्राम, बेसन 200 ग्राम, 5 मध्यम आकार के प्याज, सौंफ, अजवाइन, नमक मिर्च स्वादानुसार।

विधि: मशरूम तथा प्याज को लम्बे व पतले काट लें। सभी मसालें, नमक को बेसन में मिलाकर गाढ़ा धोल तैयार कर लें। इसमें कटे प्याज तथा मशरूम डाले तथा कढ़ाही में तेल गर्म कर पकोड़े बनायें तथा पुदीने की चटनी के साथ परोसे। गर्म पकौड़े में चाट मसाला डालकर इसका स्वाद भी बढ़ाया जा सकता है या मशरूम के डंठल काटकर निकाल दें। छोटे मशरूम को सीधे पकोड़े के घोल में डालकर तलें या बड़े मशरूम को बीच से काटकर, 2 टुकड़े कर इसके पकोड़े बनायें।

- **मशरूम सब्जी**

सामग्री: मशरूम 250 ग्राम, प्याज 100 ग्राम, अदरक 10 ग्राम, लहसुन 25 ग्राम, टमाटर 2, हल्दी आधा चम्मच, जीरा आधा चम्मच, गर्म मसाला 2 ग्राम, नींबू 1. नमक व मिर्च स्वादानुसार।

विधि: मशरूम धोकर लम्बा काट लें। प्याज, लहसुन, अदरक तथा टमाटर पीस लें। तेल को गर्म कर जीरा डालें फिर प्याज, लहसुन, अदरक व टमाटर का पेस्ट डालें, तेल छोड़ने पर इसमें मसाले डालकर भूनें, फिर मशरूम डालकर पका लें। आवश्यकतानुसार नींबू का रस डालकर स्वाद बढ़ायें।

मशरूम को मसाले में मिलाने से पहले थोड़े से तेल में हल्का फ्राई कर स्वाद बढ़ाया जा सकता है।

- **मशरूम आलू**

सामग्रीः मशरूम 250 ग्राम, आलू 100 ग्राम, प्याज 50 ग्राम, टमाटर 50 ग्राम, तेल 15 मिली., नमक व गर्म मसाला स्वादानुसार।

विधिः मशरूम व आलू को धोकर काट लें। प्याज तथा टमाटर को बारीक काट लें अथवा कद्दूकस करें। एक कढ़ाही में तेल या घी को गर्म करें और कटी प्याज को सुनहरा होने तक भूनें, फिर टमाटर डालकर हल्की आँच में 5 मिनट तक पकायें। इसमें आलू डालकर थोड़ी देर पकायें। इसमें मशरूम डालकर हल्दी, मिर्च और नमक डालकर हल्की आंच पर पकायें। आवश्यकतानुसार पानी डाल दें । पानी सूख जाने तक पकायें तथा अन्त में गर्म मसाला डालकर गर्म-गर्म परोसें।

- **मशरूम सूप**

सामग्रीः मशरूम 250 ग्राम, घी मक्खन 20-25 ग्राम, नमक, काली मिर्च, शक्कर स्वादानुसार, दूध 250 मिली., अदरक 5 ग्राम, लहसुन 3 कली, मक्के का आटा 1 चम्मच।

विधिः मशरूम को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें। अदरक, लहसुन एवं प्याज को काट लें। इसके पश्चात् आधा लीटर पानी में कटी मशरूम, अदरक, लहसुन, प्याज डालकर उबालें। अच्छी तरह उबलने पर छान लें। अब कड़ाही पैन में मक्खन या घी डालकर मक्के का आटा भूनें और उसमें दूध मिलायें। इस मिश्रण को छानकर पहले से बने घोल में मिलाये और 10-15 मिनट तक उबालें एवं उसमें स्वादानुसार शक्कर, नमक मिलायें तथा गरमा गरम मशरूम सूप परोसें। काली मिर्च का प्रयोग परोसते समय करें।

- **मशरुम दो प्याजा**

सामग्रीः मशरूम 1 किग्रा., टमाटर 250 ग्राम, 2 बड़े प्याज, अदरक का एक टुकड़ा, लहसुन 1 गाँठ, मिर्च, नमक, गर्म मसाला स्वादानुसार, घी या तेल 100 ग्राम।

विधिः मशरूम को पानी में साफ करके, लम्बे टुकड़े कर गुलाबी होने तक थोड़े से घी में तलें। एक कड़ाही में प्याज भून लें। उसमें मिर्च, गर्म मसाला डालकर चलायें। अब प्याज, टमाटर, लहसुन व अदरक का पेस्ट डालकर भूनें। तले मशरूम को डालकर नमक मिलायें तथा पकाकर परोसें।

- **मशरुम ऑमलेट**

सामग्रीः अण्डे, मशरूम 2 फलनकाय, प्याज 1 मध्यम आकार का, नमक व काली मिर्च स्वादानुसार, मक्खन/घी तलने के लिए।

विधिः प्याज तथा मशरूम को छोटा -छोटा बारीक काट लें। एक फ्राई पैन में थोड़े से मक्खन डालकर भून लें। नमक व काली मिर्च पाऊडर डाले गये प्लेट में निकाल लें । दो अण्डों को तोड़कर इसमें नमक डालकर, फ्राई पैन में डालकर फैला दें फिर इसके ऊपर तैयार मशरूम को फैलाकर डाल दें दोनों तरफ से अच्छी तरह सेक लें। फिर टमाटर सॉस के साथ गर्म परोसे।

- **खुंभी मटर कढ़ी**

सामग्रीः खुंभी 200 ग्राम, टमाटर 2 बड़े, मटर 500 ग्राम, हल्दी 2 चम्मच, प्याज 2, दालचीनी 2 ग्राम, लहसुन 6 कली, अदरक 10 ग्राम, मिर्च व नमक स्वादानुसार, गर्म मसाला 4 ग्राम।

विधिः खुंभी को धोकर काट लें। मटर लें। प्याज, अदरक, लहसुन काट लें। घी गर्म करके जीरा का तड़का लगायें। सभी मसाले भून लें। टमाटर डालकर आँच हल्की कर लें। अब खुभी तथा मटर डालकर हल्की आँच पर तब तक पकायें जब तक मटर नरम न हो जाये। यदि चाहें तो पानी डालें। पक जाने पर गर्म मसाले डालें।

- **खुंभी केचप**

सामग्रीः खुंभी 500 ग्राम, नमक 12 ग्राम, पीसी इलायची 2 ग्राम, जावित्री 2 ग्राम, सिरका 500 मिली, दाल चीनी पिसी 1 ग्राम, सौंफ 2 ग्राम, काली मिर्च 2, ग्राम लॉग पीसी 2 ग्राम, लाल मिर्च 2 ग्राम।

विधिः खुंभी की टोपियों को एक गीले कपड़े से साफ कर लें। नमक छिड़कने के बाद खुंभी को एक चीनी मिट्टी के बर्तन में 12 घंटे के लिए रख दें। सिरके में खुंभी कई दिनों के लिए

संरक्षित रह सकती है। सिरके में भीगी या नमक लगी खुंभी को पीसकर गाढ़ा घोल बनायें और मसाले मिला दें। इस घोल को केचप जैसा गाढ़ा होने तक आँच पर रखें। महक बढ़ाने के लिए थोड़ा सा मोनो सोडियम ग्लुटामेट भी मिला सकते हैं। गर्म-गर्म बोतलों में भरकर कार्क लगाकर उबलते पानी में 30 मिनट तक बोतले विसंक्रमित करें। बोतलें ठंडी करके शुष्क जगह पर रखें। खुबी केचप तैयार है।

- **खुंभी सैंडविच**

सामग्रीः खुंभी 50 ग्राम, प्याज 20 ग्राम, टमाटर आधा, घी या तेल 20 ग्राम, नींबू का रस एक चम्मच, ब्रेड, नमक, काली मिर्च स्वादानुसार।

विधिः प्याज को काटकर घी में भून लें। अब एक छोटे बर्तन में पानी डाल लें और कटे हुए टमाटर, नमक, काली मिर्च पाउडर और कुछ नींबू का रस मिला लें। प्याज और कटी हुई खुंभी पैन में डाल लें और पानी उड़ने तक उबालें। तत्पश्चात् घी में अच्छी तरह सेंक लें। अब खुंभी करी रखें और पैन में घी लेकर इन्हें सेंक लें। अब ये टमाटर सॉस या पुदीना की चटनी के साथ परोसने को तैयार है।

- **खुंभी पैन केक**

सामग्रीः मैदा 110 ग्राम, दूध सवा कप, नमक 1 चुटकी पानी (ठंडा) सवा कप. तेल या मक्खन 2 चम्मच, अंडा1।

विधिः मैदे में नमक मिलाकर छान लें। आटे की बीच में से दबाकर गड्ढा बना लें। उसमें अंडा तोड़कर अच्छी तरह फेंट लें। अब धीर-धीरे दूध मिलाते हुए फेंटें। इसमें गांठें नहीं बननी चाहिए। दूध इतना ही मिलायें कि लप्सी बन जाये। अब इसमें बाकी का दूध भी डाल दें और अंत में एक बार और फेंट लें। अब एक फ्राइंग पैन में आधा चम्मच घी लेकर इतना गर्म करें कि धुआं निकलने लगे। तत्पश्चात् लप्सी को गर्म फ्राइंग पैन में पतला फैला लें। पैन को हिलाने से लप्सी समानता से फैल जाएगी। एक तरह सुनहरा भूरा होने तक तेजी से पकायें। चाकू से पेन केक का किनारा उठा कर देखें बाद में दूसरी ओर पलटकर पका लें।

भरने की सामग्रीः खुंभी 250 ग्राम, पनीर 100 ग्राम, मक्खन 50 ग्राम, क्रीम 60 ग्राम, नमक, काली मिर्च स्वादानुसार।

विधिः मक्खन गर्म करें और खुंभी (गोल कटी हुई) नरम होने तक भूनकर पका लें। इसमें नमक और काली मिर्च डालें। आँच से उतारकर इसे फेंटी हुई क्रीम में मिला लें। पैन केक की परतों के बीच इन्हें भरकर ऊपर से घिसा हुआ पनीर डाल दें या प्रत्येक पैन केक को शंखनुमा बनाकर उसमें भरावन करें।

महान दिमाग विचारों पर चर्चा करते हैं । औसत दिमाग घटनाओं पर चर्चा करते हैं। छोटे दिमाग लोगों पर चर्चा करते हैं।

– इलीनियर रूजवेल्ट

सब्जी ग्वार के मुख्य रोग एवं उनका प्रबंधन

विनय कुमार कर्दम, नितिका कुमारी एवं ऋतु मावर
भा.कृ.अनु.प.- केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

सब्जी ग्वार (सायमोप्सिस टेट्रागोनोलोबा) शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों में खरीफ मौसम की प्रमुख फसल है। देश में करीब 27 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में उगायी जाती है, उसमें से राजस्थान का करीब 80 प्रतिशत हिस्सा हैं। इसके अलावा गुजरात, हरियाणा व पंजाब में भी इसकी खेती की जाती है। फलीदार फसल होने के कारण यह कम उर्वरता वाली मिट्टी में पोषक तत्वों, विशेष रूप से नत्रजन को स्थिर करने वाली प्रमुख फसल है जो मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है और नमी के तनाव को भी झेल सकती है। पौराणिक समय से ही सब्जी ग्वार, पशुओं के चारे व आहार के रूप में काम में लिया जाता रहा है। सब्जी ग्वार की हरी और कोमल फलियाँ सबसे अधिक पसंद की जाती हैं एवं इसकी कोमल फलियों को सुखाकर व तलकर खाया जाता है। पिछले तीन दशकों से सब्जी ग्वार के बीजों में पाये जाने वाले गोंदनुमा तत्व (29 प्रतिशत) की वजह इसका औद्योगिकीकरण हो गया है। ग्वार पाउडर के विभिन्न औद्योगिक अनुप्रयोग हैं जैसे-भोजन, पोषण संबंधी उत्पाद, दवाई, पेंट, कपड़ा, कालीन, खनन और कागज इत्यादि बनाने में किया जाता है। इसमें कम पानी में भी अच्छी पैदावार देने की क्षमता की वजह से आजकल यह शुष्क क्षेत्रों में काफी लोकप्रिय फसल हो गयी है। सब्जी ग्वार में विभिन्न प्रकार के रोगों का प्रकोप होता है जिससे फसल की गुणवत्ता और पैदावार पर असर पड़ता है। इन रोगों की रोकथाम करना बहुत जरूरी होता है ताकि फसल को नुकसान न हो । इसके लिए कुछ उपाय निम्नवत है:

1. पत्ती धब्बा (लीफ स्पोट) रोग

यह फफूँद (अल्टनेरिया प्रजाति) से होने वाला रोग है जो पत्तों पर छोटे-छोटे भूरे रंग के गोल या असमान धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो गोलाकार छल्लों का रूप ले लेते हैं। ये धब्बे बाद में संकेंद्रित क्षेत्र के साथ गहरे भूरे रंग में बदल जाते हैं, जिन्हें हल्के भूरे रंग की रेखाओं से सीमांकित किया जाता है। पत्ती के बड़े भाग में धब्बे एकत्रित हो जाते हैं। आर्द्र मौसम में फैलकर पत्ती के ज्यादातर भाग को झुलसा देते हैं। ऐसे संक्रमित पत्तियाँ क्लोरोटिक हो जाती हैं और गिर जाती हैं। यह रोग फूल खिलने और फली लगने के बीच की अवस्था में गंभीर रूप से लक्षण प्रकट करता है। इस अवस्था में फलियाँ कम लगती है व दानों का आकार छोटा होता है। यह रोग बीजों द्वारा फैलता है। अत्यधिक वर्षा और आर्द्रता उपलब्ध होने पर रोगजनक फसल की बड़ी आबादी को संक्रमित कर देता है। पर्यावरणीय परिस्थितियाँ और उत्पादन के मौसम में पत्ती धब्बा रोग के कारण उपज में काफी कमी हो जाती है ।

प्रबंधन

- रोग रहित क्षेत्रों से उत्पन्न बीजों को काम में लेने से इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।
- रोगजनक की उग्रता को कम करने के लिए गैर पोषिता फसल के साथ फसल चक्र अपनाना चाहिए।
- रोग सहनशील किस्में जैसे-एच.जी. 186, एच.जी.एस. 365 एवं आर.जी.सी. 986 बोनी चाहिये।
- रोग के लक्षण दिखते ही कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) को स्ट्रेप्टोसाइकलीन के साथ मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।

2. शुष्क जड़ गलन (ड्राई रूट राट)

यह रोग भूमि व बीज दोनों ही तरीकों से फैलती है। इसका प्रकोप शुष्क और गर्म पर्यावरणीय परिस्थितियों में सबसे गंभीर होता है एवं कम वर्षा या दो वर्षा के बीच में लम्बे अन्तराल होने पर इसका प्रभाव ज्यादा देखने को मिलता है। रोग की उग्र अवस्था में 40-50 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। मुरझाये पौधे व हल्के भूरे रंग के तनों के रूप में इस रोग की पहचान हो सकती है। इससे पौधों की जलापूर्ति में बाधा पड़ती है और पौधे मुरझा जाते हैं, ऐसे पौधे आसानी से उखाड़े जा सकते हैं। बड़े पौधों में यह रोग एक या अधिक शाखाओं पर पत्तियों के भूरे होने के रूप में प्रकट होता है जिसके बाद पौधे के ऊपरी कोमल भाग गिर जाते हैं। रोगग्रस्त पौधे गुच्छों या फलियों के बिना ही बढ़ते रहते हैं तथा जड़ों में नत्रजन संचय करने वाली ग्रंथियाँ नही बनती है।

प्रबंधन

- फसल की मई-जून में सिंचाई व जुताई करें। इसके बाद खेत को खुला छोड़ दें।

- फसल चक्र में बाजरा, मोठ बीन लेने से दूसरे वर्ष रोग कम लगता है।
- जल्दी पकने वाली किस्मों को बोना चाहिये।
- बीजों को बुवाई से पहले वीटावैक्स या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. की दर से उपचारित करना चाहिए।
- फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए।
- पौधों की कतारों के बीच में खेत में नही काम आने वाले पौधों के अवशेषों की परत् डालना एवं बकरी/भेड़ की खाद मिलाना आदि उपयोगी है।
- सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्र में 25 टन सरसों की फसल अवशेष व आधा टन सरसों की खली मिलाना चाहिए। तेज गर्मी के समय पानी देने से सरसों के कचरे के सड़ने पर जो गैसें उत्पन्न होती है वह इस रोग की फफूंद को काफी हद तक नष्ट कर देती है।
- मित्र फफूँद ट्राइकोडमा की 25-30 किग्रा. मात्रा गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.) के साथ मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से बीजाई से पूर्व भूमिपचार करें।

3. चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू)

चूर्णिल आसिता (ओइडोपसिस टाऊरिका) नामक फफूँद से होता है। यद्यपि राजस्थान के मरू क्षेत्रों में इसकी शुरूआत फसल के पकने के कुछ ही समय पूर्व होती है परन्तु गुजरात के क्षेत्रों में यह काफी समय पहले ही देखा जा

सकता है। यह रोग सिर्फ पत्तियों पर ही आक्रमण करता है। पत्तियों पर गहरे सफेद रंग के धब्बे हो जाते हैं जो निचली सतह पर ही अधिक होते हैं जो धीरे-धीरे तने और हरी फलियों पर भी फैल जाते हैं रोग की उग्र अवस्था में पत्तियाँ सड़कर जल्दी गिर जाती है। गंभीर रूप से प्रभावित पौधे समय से पहले सूखने और संक्रमित पत्तियों के मरने के कारण कमजोर हो जाते हैं। उष्ण तापक्रम (35 डी. सें.), कम आर्द्रता (50 प्रतिशत) व तेज धूप इसके फैलने में सहायक होती है।

प्रबंधन

- इस रोग की अनुकूल परिस्थितियों से बचाव के लिए फसल की अगेती बुआई करनी चाहिए।
- घुलनशील गंधक को 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़क दें। इसके अलावा कैराथेन दवा की 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना लें और पौधों पर भी छिड़क दें। इससे फसल में चूर्णी फफूँद नहीं लगेगी। इसका छिड़काव सबसे प्रभावकारी व सस्ता है।
- डिनोकेप, ट्राईडीमोर्फ आदि का छिड़काव (0.1 प्रतिशत) भी काफी प्रभावशाली रहता है लेकिन थोड़ा महंगा है।
- स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (0.01 प्रतिशत) व डिनोकेप (0.01 प्रतिशत) का सम्मिलित छिड़काव छाछ्या के लिये काफी प्रभावकारी है जिससे पानी की बचत भी होती है।

1. जीवाणु झुलसा (बैक्टीरीयल ब्लाईट)

यह रोग सब्जी ग्वार की खेती करने वाले सभी क्षेत्रों में होता है। भारत के अलावा अन्य देशों में भी यह रोग ग्वार को काफी नुकसान पहुँचाता है। उग्र अवस्था में इस रोग से

45-50 प्रतिशत तक उपज कम हो जाती है। यह रोग जेन्थोमोनास एक जोनोपोडीस पेथोवार साईमोप्सिडिस नामक जीवाणु से होता है। यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में हो सकता है। प्रारम्भ में पत्तियों के दोनों तरफ शिराओं के मध्य छोटे बड़े गोल चिपचिपे धब्बे देखे जा सकते हैं जो अनूकुल वातावरण मिलने पर एक-दूसरे में मिलकर पत्तियों को झुलसा देते हैं। पत्तियाँ समय से पहले गिर जाती है। उग्र अवस्था में पत्ती से संक्रमण व्यवस्थित रूप से डंठलों के माध्यम से तने तक बढ़ता है और तने पर लम्बाकार धारियाँ दिखाई देती हैं। जिससे तना काला पड़ जाता है और टूट जाता है। इस रोग का फैलाव फली आरंभ अवस्था के बाद ही देखा गया है जिससे पौधे पर फलियाँ कम लगती है व इनमें दाने भी कम हो जाते हैं। यह रोग कम वर्षा में अधिक आर्द्रता (80-90 प्रतिशत) व कम तापमान (30 डी. सें.) से ज्यादा फैलता है। रोग के जीवाणु बीज के माध्यम से एक से दूसरे पौधे में प्रसारित होते है। एक बार पौधों की पत्तियों पर लगने के बाद वर्षा के बूंदों आदि से यह रोग स्वस्थ पौधों में तेजी से फैलता है। पौधों की एक माह की अवस्था सबसे नाजुक होती है।

प्रबंधन

- खेत में रोग रोधी या रोग सहनशील किस्में लगानी चाहिये। आर.जी.सी. 936, आर.जी.सी. 1002 एच.एफ.जी. 75, आर.जी.सी. 1002, एच.जी.एस.-0365 आदि प्रमुख रोग रोधी किस्में है।
- स्वस्थ बीजों को बोने के काम में लेने चाहिये।
- बीजों को स्ट्रप्टोसाइकलीन (0.025 प्रतिशत) से उपचारित करके बोना चाहिये। सामान्यतः 8 लीटर पानी में 2 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइकलीन घोलकर बीजों को 2 घंटे तक डुबाकर निकालने के बाद छाया में सुखाकर बोने चाहिये ।
- रोग फैलने के लिये अनुकूल मौसम होने पर 10 ग्राम

स्ट्रेप्टोसाइकलीन 100 लीटर पानी (0.01 प्रतिशत) में मिलाकर छिड़कना चाहिये। उग्र अवस्था हो तो दूसरा छिड़काव 15 दिनों के पश्चात करना चाहिये।

- खेत में पिछले वर्ष का कचरा नहीं छोड़ना चाहिये।
- रोग से बचाव के लिये 30 ग्राम स्ट्रैप्टोसाईक्लिन व 400 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराईड को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ का छिड़काव जा सकता है।

2. एन्थ्रोक्नोज रोग

जब ग्वार की फसल में यह रोग लगता है, तो तने, पत्तियाँ और फलियाँ प्रभावित होती है एवं पौधे का जो भी भाग प्रभावित होता है, वह भूरे रंग का हो जाता है और किनारे लाल या पीले रंग के हो जाते है, साथ ही प्रभावित तने फटकर सड़ जाते हैं इसके अलावा फलियों पर छोटे-छोटे काले रंग के धब्बे दिखाई देते है। इस रोग से पूरी फसल खराब हो सकती है। यह रोग ग्रसित बीज से फैलता है।

प्रबंधन

- बुवाई से पहले बीजों को सेरेसान, कैप्टान या फिर थीरम 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
- मैन्कोजेब या कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत का घोल बनाये और रोग ग्रसित पत्तियों और फलियों पर छिड़क दें। इस प्रक्रिया को करीब कर 7-10 दिनों के अंतराल पर करें।

3. पत्ती धब्बा

इन प्रमुख रोगों के अलावा ग्वार को कुछ पत्ती धब्बा रोगों से भी नुकसान पहुँचता है जिनमें सरकोस्पोरा, मिरोथिसियम, करवुलेरिया व कोलीटोट्राईकम प्रमुख है। मौसम की अनुकूलता से ये धब्बे फसल की एक माह की अवस्था में देखे जा सकते हैं। उग्र अवस्था में ही ये ग्वार को अधिक नुकसान पहुंचा पाते हैं।

प्रबंधन

मैंकोजेब या कॉपर आक्सीक्लारोराईड (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव किया जा सकता है।

7. मोजैक रोग

ग्वार की फसल में मोजैक विषाणु जनित बीमारी होती है, इसमें पौधे की पत्तियों पर गहरे हरे रंग के धब्बे होने लगते हैं तो वहीं पत्तियाँ अंदर की तरफ सिकुड़ जाती हैं और पूरा पौधा पीला भी पड़ जाता है। इस रोग की प्रमुख विशेषता पत्तियों का मोजैक धब्बेदार होना एवं पत्तियों का कम विकसित होना है, इस प्रकार वायरल संक्रमण के कारण पूरा पौधा नष्ट हो जाता है।

प्रबंधन

- मोजैक रोग से फसल को बचाने के लिए रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ देना चाहिए।
- इसके अलावा मैटासिस्टाक्स 1 मिली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़क दें।

मूल्यहीन व्यक्ति केवल खाने और पीने के लिए जीते है , मूल्यवान व्यक्ति केवल जीने के लिए खाते और पीते है !

सुकरात

जैव प्रौद्योगिकी में ऊतक संवर्धन तकनीकी का महत्व

राघवेन्द्र प्रताप सिंह, राजन सिंह एवं अनूप प्रताप सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

कृत्रिम वातावरण में नये पौधे के ऊतकों से नवीन पौधों को विकसित करने की तकनीक को ऊतक संवर्धन या ऊतक संवर्धन कहते हैं। जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पौधों में आनुवंशिक सुधार हेतु ऊतक संवर्धन की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस तकनीक में जड़, तना, पुष्प आदि के ऊतककों को निर्जर्मित परिस्थितियों में पोषक माध्यम पर उगाया जाता है। पौधे की प्रत्येक कोशिका पूर्ण पौध के निर्माण करने में सक्षम है। वर्ष 1902 में हैबरलांट ने कोशिका की पूर्ण शक्तता की संकल्पना दी थी। इस प्रक्रिया में संवर्धन घोल महत्वपूर्ण है जो पौधों के ऊतकों को बढ़ाने में सहायक होता है । विभिन्न पौधों के पोषक तत्व 'जेली' के रूप में शामिल होते हैं जो पौध विकास के लिए आवश्यक हैं। वर्तमान में पोषक तत्व मीडिया और पौधों के नियामकों की खोज के कारण ऊतक संवर्धन तकनीकी को महत्वपूर्ण गति मिल रही है।

ऊतक संवर्धन की प्रक्रिया कैसे होती हैः

1. पौधे के ऊतकों का छोटा-सा टुकड़ा उसके बढ़ते हुए ऊपरी भाग से लिया जाता है और जेली में रखा जाता है जिसमें पोषक तत्व और प्लांट हार्मोन होते हैं। ये हार्मोन पौधे के ऊतकों में कोशिकाओं को तेजी से विभाजित करते हैं जो कई कोशिकाओं का निर्माण करते हैं और एक जगह एकत्रित कर देते हैं जिसे 'कैलस' कहाँ जाता है।
2. फिर इस 'कैलस' को अन्य जेली में स्थानांतरित किया जाता है जिसमें उपयुक्त प्लांट हार्मोन होते हैं जो 'कैलस' को जड़ों में विकसित करने के लिए उत्तेजित करते हैं।
3. विकसित जड़ों के साथ 'कैलस' को एक और जेली में स्थानांतरित किया जाता है जिसमें विभिन्न हार्मोन होते हैं जो पौधे के तने के विकास को प्रोत्साहित करते हैं।
4. अब इस 'कैलस' को जिसमें जड़ें और तना है को छोटे प्लांटलेट के रूप में अलग कर दिया जाता है। इस तरह से कई छोटे-छोटे पौधे केवल कुछ मूल पौधे कोशिकाओं या ऊतक से उत्पन्न हो सकते हैं।
5. इस प्रकार उत्पादित प्लांटलेट को बर्तन या मिट्टी में प्रत्यारोपित किया जाता है जहाँ वे परिपक्व पौधों के निर्माण के लिए विकसित हो सकते हैं।

पौधों में क्लोन क्या है?

पौधों के लैंगिक प्रजनन के कारण बीज पैदा होते हैं और प्रत्येक बीजों की अपनी आनुवांशिक सामग्री होती है जो अन्य बीज और मूल पौधों से भी अलग होता है। आमतौर पर ऊतक संवर्धन पौधे के सूक्ष्म फैलावयुक्त कलम या उनका एक क्लोन हैं जो आनुवंशिक रूप से पैरेंट प्लांट के समान है। इसमें विशेष रूप से अच्छे फूल, फल या अन्य वांछनीय लक्षण के पौधों के क्लोन का उत्पादन किया जाता है।

ऊतक संवर्धन तकनीक का प्रयोग

ऊतक संवर्धन तकनीक का उपयोग ऑर्किड, डहेलिया फूल, कार्नेशन गुलदाउदी के फूल आदि जैसे सजावटी पौधों के उत्पादन के लिए किया जा रहा है। ऊतक संवर्धन की विधि द्वारा पौधों का उत्पादन भी सूक्ष्म प्रवर्धन के रूप में भी जाना जाता है क्योंकि इसमें पौधों के छोटे से हिस्से का प्रयोग किया जाता है। ऐसा कहना गलत नहीं होगा कि एकल कोशिका से पूरे पौधे का निर्माण किया जा सकता है।

ऊतक संवर्धन के प्रकार

पादप ऊतक संवर्धन तकनीकों को मोटे तौर पर प्रयुक्त एक्सप्लांट के प्रकार और पादप सामग्री की विशिष्ट वृद्धि आवश्यकताओं के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। निम्नलिखित उप शीर्षक विभिन्न प्रकार की ऊतक संवर्धन तकनीकों का अवलोकन प्रदान करते हैंः

- **भ्रूण संवर्धन**

भ्रूण संवर्धन में बीजों या अपरिपक्व फलों से निकाले गए भ्रूणों की इन विट्रो वृद्धि और विकास शामिल है। यह तकनीक विशेष रूप से बीज की निष्क्रियता पर काबू पाने, गर्भपात वाले बीजों से भ्रूण को बचाने और दूर के क्रॉस से संकर पौधे प्राप्त करने में उपयोगी है।

- **अंग संवर्धन**

अंग संस्कृति में पोषक माध्यम पर पूरे पौधे के अंगों जैसे-पत्तियाँ, तना या जड़ें का अलगाव और विकास शामिल होता है। यह तकनीक नियंत्रित परिस्थितियों में अंग विकास, ऑर्गोजेनेसिस और अंग कार्य के अध्ययन की अनुमति देती है।

- **बीज संवर्धन**

बीज संवर्धन एक पोषक माध्यम पर बीजों का इन विट्रो अंकुरण है जिसका उपयोग अक्सर बीज की निष्क्रियता को दूर करने, रोगज़नक़ मुक्त पौधों का उत्पादन और विशिष्ट आनुवंशिक लक्षणों वाले पौधों के विकास को सक्षम करने के

लिए किया जाता है।

- **कैलस संवर्धन**

कैलस कल्चर पोषक माध्यम पर अविभाजित पौधों की कोशिकाओं या ऊतकों की वृद्धि है जो आमतौर पर एक्सप्लांट से प्राप्त होते हैं। विकास नियामकों के हेर-फेर के माध्यम से कैलस ऊतकों को विभिन्न अंगों या पूरे पौधों में अंतर करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

- **प्रोटोप्लास्ट संवर्धन**

प्रोटोप्लास्ट संस्कृति में पौधों की कोशिकाओं को अलग करके उनकी कोशिका दीवारों को हटा दिया जाता है जिसके बाद पूरे पौधों में उनका पुनर्जनन होता है। यह तकनीक दैहिक संकरण, आनुवंशिक परिवर्तन और कोशिका भित्ति जैव संश्लेषण के अध्ययन के लिए उपयोगी है।

- **पराग संवर्धन**

पराग संस्कृति, जिसे इन विट्रो पराग अंकुरण के रूप में भी जाना जाता है, एक पोषक माध्यम पर पराग कणों की वृद्धि है जो पराग ट्यूब विकास, निषेचन प्रक्रियाओं और अगुणित पौधों की पीढ़ी के अध्ययन की अनुमति देती है।

- **निलंबन संवर्धन**

सस्पेंशन कल्चर एक ऐसी तकनीक है जहाँ पौधों की कोशिकाओं या छोटे सेल समुच्चय को तरल पोषक माध्यम उगाया जाता है जिससे बायोमास, माध्यमिक मेटाबोलाइट्स या आनुवंशिक रूप से संशोधित कोशिकाओं के बड़े पैमाने पर उत्पादन की सुविधा मिलती है।

- **एंथर संवर्धन**

परागकोष संस्कृति में परागकोशों या माइक्रोस्पोर्स की इन विट्रो संस्कृति शामिल होती है जिससे अगुणित पौधों का उत्पादन होता है जो पौधों के प्रजनन और आनुवंशिक अध्ययन में मूल्यवान होते हैं।

- **दैहिक भ्रूण जनन संवर्धन**

दैहिक भ्रूणजनन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें दैहिक कोशिकाएँ भ्रूण में विभेदित हो जाती हैं जो बाद में पूरे पौधों में विकसित हो सकती हैं। यह तकनीक बड़े पैमाने पर प्रसार, आनुवंशिक परिवर्तन और सिंथेटिक बीज उत्पादन के लिए उपयोगी है।

- **एकल कोशिका संवर्धन**

एकल कोशिका संस्कृति एक पोषक माध्यम पर व्यक्तिगत पौधों की कोशिकाओं का अलगाव और विकास है जिससे कोशिका व्यवहार, आनुवंशिक परिवर्तनशीलता और एकल कोशिकाओं से क्लोनल पौधों के उत्पादन का अध्ययन किया जा सकता है।

भारत में ऊतक संवर्धन का भविष्य

भारत ज्ञान, बायोटेक विशेषज्ञों के साथ विशाल ऊतक संवर्धन के अनुभव के साथ-साथ निर्यात-उन्मुख गुणवत्तायुक्त पादप सामग्री के उत्पादन में मदद करने के लिये कम लागत वाली श्रम शक्ति से युक्त देश है। ये सभी कारक भारत को अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में गुणवत्तापूर्ण वानस्पतियों की विस्तारित और विविध श्रेणी का संभावित वैश्विक आपूर्तिकर्त्ता बनाते हैं तथा बदले में विदेशी मुद्रा का अर्जन करते हैं। कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण एक वित्तीय सहायता योजना चला रहा है ताकि प्रयोगशालाओं को उन्नत बनाने में मदद मिल सके जिससे निर्यात करने के लिये गुणवत्तायुक्त ऊतक संवर्धन पादप सामग्री का उत्पादन किया जा सके। यह विविध देशों को ऊतक संवर्धन रोपण सामग्री के निर्यात के संबंध में सुविधा प्रदान करता है जैसे- बाज़ार के विकास, अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में ऊतक संवर्द्धन पौधों का बाज़ार विश्लेषण, प्रचार एवं प्रदर्शनी तथा विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर क्रेता-विक्रेता बैठक के माध्यम से आदि।

भारत से ऊतक संवर्धन पौधों का आयात करने वाले शीर्ष दस देश

नीदरलैंड, अमेरिका, इटली, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, केन्या, सेनेगल, इथियोपिया और नेपाल। भारत का वर्ष 2020-2021 में ऊतक संवर्धन पौधों का निर्यात 17-17 मिलियन अमेरिकी डॉलर था जिसमें नीदरलैंड का लगभग 50 प्रतिशत शिपमेंट था।

भारत में ऊतक संवर्धननिर्यातकों के समक्ष चुनौती

- बिजली की बढ़ती लागत
- प्रयोगशालाओं में कुशल कार्यबल का निम्न दक्षता स्तर
- प्रयोगशालाओं में संदूषण के मुद्दे
- सूक्ष्म प्रचारित रोपण सामग्री के परिवहन की लागत
- अन्य देशों के साथ भारतीय रोपण सामग्री के एच.एस.-कोड में सामंजस्य का अभाव
- वन एवं क्वारेंटाइन विभागों का प्रतिरोध

मृदा सौर्यीकरण

अभिनय, नीरज सिंह, शरद शर्मा, सुजन मजूमदर, सुरेन्द्र नारायण सिंह एवं डी.आर. भारद्वाज
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान- वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

गत कई दशकों से उत्पादन वृद्धि हेतु रसायनों जैसे उर्वरकों, कीटनाशक एवं खरपतवारनाशी दवाओं का प्रयोग बढ़ रहा है जो मानव समाज व पर्यावरण दोनों के लिए अत्यंत हानिकारक है। वर्तमान में प्राकृतिक एवं जैविक खेती पर ज्यादा बल दिया जा रहा है। ऐसे में खरपतवार तथा मिट्टी में पाये जाने वाले अन्य हानिकारक सूक्ष्म जीवों के नियंत्रण के लिए मृदा सौर्यीकरण तकनीक कारगर साबित होगी।

मृदा सौर्यीकरण क्या है

मृदा सौर्यीकरण, सौर ऊर्जा का उपयोग करके मृदा जनित बीमारियों और कीटों को नियंत्रित करने की अरासायनिक विधि है। इस तकनीक में पारदर्शी पॉलीथीन (प्लास्टिक मल्चिंग) से वर्ष के अधिक तापमान वाले महीनों (मई-जून) में सिंचाई उपरान्त खाली पड़े खेत को ढक देना चाहिए तथा पॉलीथीन के किनारों को मिट्टी से अच्छी तरह दबा देना चाहिए, ताकि मृदा में अवशोषित एवं संचयित ताप बाहर न निकल सकें। जिसके फलस्वरूप खेत की सतह पर तापमान में लगभग 8-12 डिग्री सेंटीग्रेड की वृद्धि हो सके। जो की मृदा को उसमें पाए जाने वाले हानिकारक सूक्ष्म जीवाणुओं (जिसे हम अपनी नंगी आँखों से नही देख सकते) एवं खरपतवारों के बीजों के संक्रामकता दोष से शुद्धि करता है।

मृदा सौर्यीकरण के सिद्धांत

मृदा सौर्यीकरण एक प्लास्टिक कवर के नीचे सौर विकिरण को कैप्चर करके काम करता है, जो आमतौर पर पॉलीइथाइलीन से बना होता है। फंसी हुई गर्मी मिट्टी के तापमान को ऐसे स्तर तक बढ़ा देती है जो हानिकारक मृदा जनित जीवों की आबादी को काफी कम करती है। प्रभावी सौर्यीकरण के लिए अधिक सौर विकिरण की आवश्यकता होती है, जो वर्ष के सबसे गर्म महीनों के दौरान सबसे अधिक उपलब्ध होती है। विगत कई वर्षो से देखा जा रहा है की अप्रैल के महीने में ही तापमान 40 डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर पहुँच रहा है। इसका उपयोग रबी की फसलों के कटाई के बाद जुताई करके मृदा जनित हानिकारक रोग एवं कीटों की संख्या को कम करने के लिए उपयोग किया जा सकता है।

मृदा सौर्यीकरण की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण कारक

तैयारी: मिट्टी को मलबे, चट्टानों और बड़े ढेले से साफ करें और सुनिश्चित करें कि यह नम हो। नम मिट्टी सूखी मिट्टी की तुलना में गर्मी का बेहतर संचालन करती है।

कवरिंग: तैयार मिट्टी पर पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछाना चाहिए तथा किनारों को दबाकर रखना चाहिए।

1. सौर ऊर्जा का अवशोषण एवं संचयन अधिक हो सके इसके लिए पतली (0.05 मिमी. या 20-25 माइक्रो मीटर) एवं पारदर्शी पॉलीथीन सीट जो मोटे एवं काली पॉलीथीन सीट की तुलना में अधिक प्रभावशाली होती है।
2. सौर्यीकरण हेतु पॉलीथीन को मिट्टी से चिपकर बिछाना चाहिए जिससे सूर्य की उष्मा का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है।
3. मृदा में नमी की मात्रा इस तकनीक की सफलता का एक मुख्य कारक है इसलिए पॉलीथीन बिछाने से पहले खेत की हल्की सिंचाई (40-50 मिमी.) कर देना चाहिए। इससे मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणु पर सौर ऊष्मा का प्रभाव बढ़ जाता है और साथ ही साथ ऊष्मा का संचालन अधिक गहराई तक हो जाता है।
4. मृदा सौर्यीकरण का प्रभाव मुख्यतः भूमि के ऊपरी सतह (0-10 सेंमी.) तक रहता है। इसके प्रभाव को ज्यादा गहराई तक पहुँचाने के लिए सौर्यीकरण की अवधि 8-10 सप्ताह का होना चाहिए। जिससे कंद व गांठों से उगने वाले खरपतवार भी नष्ट हो जाते हैं।
5. मृदा सौर्यीकरण के उपरान्त खेत में जुताई कार्य उचित नही हैं अन्यथा इसका असर कम हो जाता हैं। अतः बुवाई में डिबलर या अन्य यंत्र जो केवल कूंड बनाने का कार्य करें जैसे सीड ड्रिल आदि का ही प्रयोग करना चाहिए। अतः इस तकनीक का पूर्ण लाभ लेने के लिए किसान को इस बात का विशेष ध्यान देना चाहिए।

अवधि: प्लास्टिक को 4-6 सप्ताह तक ऐसे ही रहने दें, जो जलवायु और लक्षित जीवों पर निर्भर करता है।

मृदा सौर्यीकरण के प्रभाव एवं लाभ

1. फसल बढ़वार एवं उत्पादन पर प्रभाव

मृदा सौर्यीकरण से मिट्टी में पाये जाने वाले परजीवी कवकों, जीवाणुओं, सूत्रकृमि व खरपतवारों पर अत्यंत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः इनकी निष्क्रियता से फसलों को सीधा लाभ होता है। लाभकारी सूक्ष्म जीवों की सक्रियता, पोषण तत्वों की घुलनशीलता तथा उपलब्धता में वृद्धि एवं प्रभावकारी

खरपतवार नियंत्रण आदि सभी कारकों के सम्मिलित प्रभाव से फसलों की बढ़वार तथा अंतः पैदावार में प्रशंसनीय वृद्धि हो जाती है। मृदा सौर्यीकरण तकनीक से जहाँ एक ओर परजीवी कवकों, जीवाणुओं एवं सूत्रकृमि की संक्रात्मकता से दोषमुक्त देखा गया वही दूसरी ओर प्रभावी खरपतवार नियंत्रण से प्याज की पैदावार में 100-120 प्रतिशत, मूंगफली में 50-55 प्रतिशत एवं तिल में 60-70 प्रतिशत की वृद्धि भी रिकार्ड किया गया है।

कवकः फ्यूजेरियम विल्ट, वर्टिसिलियम विल्ट और स्क्लेरोटियम रॉल्फ़्सी जैसे मृदाजनित कवक रोगजनक सोलराइज़ेशन के दौरान प्राप्त उच्च तापमान के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। कवक के इनोकुलम के स्तर को कम करके, सोलराइज़ेशन टमाटर में फ्यूजेरियम विल्ट और बैंगन में वर्टिसिलियम विल्ट जैसी बीमारियों के प्रबंधन में मदद करता है।

बैक्टीरियाः रोगजनक बैक्टीरिया जैसे-बैक्टीरियल विल्ट (*राल्स्टोनिया सोलानेसीरम*) और क्राउन गॉल (*एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफ़ेसिएन्स*) को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जाता है। गर्मी बैक्टीरिया कोशिका संरचनाओं और चयापचय कार्यों को बाधित करती है जिससे उनकी गिरावट होती है।

सूत्रकृमि (नेमाटोड): रूट-नॉट नेमाटोड (*मेलोइडोगाइन एसपीपी*) कई फसलों में एक महत्वपूर्ण समस्या है। सोलराइजेशन मिट्टी में सूत्रकृमि के अंडों, लार्वा और वयस्कों को मारकर उनकी आबादी को कम करता है जिससे सूत्रकृमि से संबंधित बीमारियों की घटनाओं में कमी आती है।

2. खरपतवारों पर प्रभाव

सौर्यीकरण से कई खरपतवार के बीज और अंकुर भी नष्ट हो जाते हैं जिससे प्रतिस्पर्धा कम हो जाती है और फसल की बेहतर स्थापना होती है। यह अप्रत्यक्ष लाभ खरपतवार मेजबानों द्वारा सुगम रोगों को कम करने में मदद करता है।

पर्यावरण के अनुकूलः रासायनिक फ्यूमिगेंट्स के विपरीत, मृदा सौर्यीकरण विषाक्त अवशेष नहीं छोड़ता है। यह एक स्थायी विकल्प है जो मृदा स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र संतुलन को बनाए रखने में मदद करता है। मृदा सूर्यिकर्णको व्यापक एकीकृत कीट प्रबंधन रणनीतियों में एकीकृत किया जा सकता है। यह जैविक नियंत्रण, प्रतिरोधी पौधों की किस्मों और अन्य सांस्कृतिक प्रथाओं के संयोजन में अच्छी तरह से काम करता है।

3. मृदा में रासायनिक परिवर्तन

मृदा सौर्यीकरण से मिट्टी में घुलनशील पोषक तत्वों की मात्रा एवं इनकी उपलब्धता बढ़ जाती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ, अमोनियम नत्रजन, नाइट्रेट नत्रजन, कैल्शियम, मैग्निशियम तथा मिट्टी की विद्युत् चालकता में प्रशंसनीय वृद्धि पाई जाती है। हांलाकि सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में सराहनीय वृद्धि नहीं दर्ज की गई है।

सुरक्षाः मिट्टी का सौर्यीकरण श्रमिकों और पर्यावरण के लिए सुरक्षित है। गैर-लक्ष्य जीवों को प्रभावित करने वाले रासायनिक जोखिम या अवशेषों का कोई जोखिम नहीं है।

लागत-प्रभावशीलताः प्रारंभिक सेटअप लागत (प्लास्टिक शीटिंग और श्रम) विचारणीय हैं, सौर्यीकरण की समग्र लागत बार-बार रासायनिक उपचारों की तुलना में कम हो जाती है, विशेष रूप से इसके दीर्घकालिक लाभों पर विचार करते हुए।

सुरक्षाः मिट्टी का सौर्यीकरण श्रमिकों और पर्यावरण के लिए सुरक्षित है। गैर-लक्ष्य जीवों को प्रभावित करने वाले रासायनिक जोखिम या अवशेषों का कोई जोखिम नहीं है।

लागत-प्रभावशीलताः प्रारंभिक सेटअप लागत (प्लास्टिक

सारिणी-1: मृदा सौर्यीकरण का खरपतवारों पर प्रभाव

प्रमुख खरपतवार	सूर्यीकृत रहित	सूर्यीकृत	नियंत्रण (प्रतिशत)
पथरचट्टा (ट्राइएन्थिमा पारचुलाकैस्ट्रम)	173	3	98
कनकौआ (कोमेलिना बेन्धालेन्सिस)	14	0	100
लहसुआ (डाइजेरा अरवेंसिस)	125	3	98
गुल्लीडंडा (फेलेरिस माइनर)	41	0	100
गाजरघास (पारथेंनियम हिस्टोफ़ोरस)	3	0	100
दुधि (यूफोरविया जेनीकुलाटा)	15	0	100
मकड़ा (डैकटीलोक्टेनियम इजिप्शियम)	140	22	85
बथुआ (चिनोपोडियम एल्बम)	30	0	100
जंगली जई (अवेना लुडोविसियाना)	9	0	100

शीटिंग और श्रम) विचारणीय हैं, सौर्यीकरण की समग्र लागत बार-बार रासायनिक उपचारों की तुलना में कम हो जाती है, विशेष रूप से इसके दीर्घकालिक लाभों पर विचार करते हुए।

4. जैविक परिवर्तन

मृदा में हानिकारक सूक्ष्म जीवों की संक्रामकता की शुद्धिकरण की अन्य विधियों की तुलना में मृदा सौर्यीकरण तकनीक काफी प्रभावशाली है। सौर्यीकरण का प्रभाव मुख्यतः परजीवी या परपोषी प्रकार के सूक्ष्म जीवों पर ही पाया गया है। हालांकि इसका प्रभाव लाभदायक जीवाणुओं जैसे–राइजोबियम पर भी होता है, परन्तु बुवाई के समय राइजोवियम कल्चर से बीज उपचारित किया जाए तो पौधे के बढ़वार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

कार्यान्वयन संबंधी विचार

जलवायु उपयुक्तताः सौर्यीकरण उच्च सौर विकिरण और तापमान वाले क्षेत्रों में सबसे प्रभावी है, आमतौर पर गर्मियों के महीनों के दौरान। लंबे समय तक धूप वाले क्षेत्रों में सबसे अच्छे परिणाम मिलते हैं।

मिट्टी की नमीः सौर्यीकरण से पहले और उसके दौरान पर्याप्त मिट्टी की नमी बनाए रखना प्रक्रिया को बढ़ाता है। नमी बेहतर ऊष्मा चालन की सुविधा प्रदान करती है और उत्पन्न भाप गहरी मिट्टी की परतों को निष्फल करने में सहायता कर सकती है।

प्लास्टिक का प्रकार और गुणवत्ताः सही प्रकार के प्लास्टिक का उपयोग करना महत्वपूर्ण है। स्पष्ट प्लास्टिक काले प्लास्टिक की तुलना में अधिक प्रभावी है क्योंकि यह अधिक सूर्य के प्रकाश को अंदर जाने देता है। मोटा प्लास्टिक अधिक टिकाऊ होता है, लेकिन पतला प्लास्टिक उच्च मिट्टी के तापमान को प्राप्त कर सकता है।

प्रभावशीलता की गहराईः सौर्यीकरण मुख्य रूप से मिट्टी के ऊपरी 20-30 सेमी को प्रभावित करता है, जहां अधिकांश मृदाजनित रोगजनक और खरपतवार के बीज रहते हैं। हालांकि, यह गहराई आमतौर पर कई फसलों के लिए रोगों का प्रबंधन करने के लिए पर्याप्त होती है।

सीमाएँ और चुनौतियाँ

मृदा सौर्यीकरण तकनीक किसानों के लिए अत्यंत उपयोगी एवं लाभकारी है। फिर भी इस तकनीक की निम्नलिखित सीमायें हैंः

1. पॉलीथीन सीट की लागत अधिक होने से यह तकनीक खर्चीली है। फिर भी इस तकनीक का प्रयोग नगदी फसलों या ऊँची कीमत वाली फसलों, पुष्पोत्पादन और विभिन्न नर्सरियों में करने पर आर्थिक दृष्टि से काफी लाभदायक होगा। पतली पालीथीन (50 माइक्रोमीटर या कम) जो ज्यादा प्रभावशाली है, और दुबारा दूसरे खेत में प्रयोग करने से भी आर्थिक लागत में कमी आएगी। इस तकनीक की आर्थिक लागत यदि भूमि की तैयारी पर की गई खर्च की बचत, प्रतिवर्ष शाकनाशी, सूत्रकृमिनाशक एवं कवकनाशी रसायनों पर आने वाला खर्च में बचत, फसलों को हानि पहुंचाने वाले विभिन्न कारकों का नियंत्रण, भूमि में पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि, 2-3 फसलों तक प्रभावी असर एवं उत्पादन में वृद्धि इत्यादि को ध्यान में रखकर गणना की जाए तो यह तकनीक काफी सस्ती एवं लाभकारी होगी।
2. इस तकनीक का उपयोग केवल उन्हीं क्षेत्रों में संभव है, जहाँ पर कम से कम 6-8 हफ्तों तक आसमान साफ़ एवं वातावरण का तापमान 40 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक रहता है।
3. जलवायु निर्भरताः सौर्यीकरण की प्रभावशीलता जलवायु स्थितियों पर अत्यधिक निर्भर है, जिससे यह ठंडे या कम धूप वाले क्षेत्रों में कम व्यवहार्य हो जाता है।निचली भूमि जहां पर वर्षा ऋतु में भराव होता हो वहां पर यह तकनीक कारगार सिद्ध नहीं होगी।

श्रम और सामग्रीः इस प्रक्रिया में मिट्टी की तैयारी और प्लास्टिक बिछाने के लिए श्रम की आवश्यकता होती है और बड़े क्षेत्रों के लिए सामग्री की लागत महत्वपूर्ण हो सकती है।

भविष्य की दिशाएँ

नवाचारः सौर्यीकरण की दक्षता और प्रभावशीलता में सुधार करने के लिए अनुसंधान जारी है। बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक फिल्मों का उपयोग और सौर्यीकरण को मृदा संशोधनों (जैसे, खाद, जैविक उर्वरक) के साथ संयोजित करने जैसे नवाचार आशाजनक हैं।

विस्तार सेवाएँः कृषि विस्तार सेवाएँ मृदा सौर्यीकरण के लाभों और उचित तकनीकों के बारे में किसानों को शिक्षित

चित्र 1 : पौध लगाने से पूर्व पौधशाला का सौर्यीकरण।

चित्र 2 व 3 : मुख्य फसल में सौर्यीकरण द्वारा पलवार का प्रयोग

करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। प्रदर्शन परियोजनाएँ और प्रशिक्षण कार्यक्रम अपनाने की दरों को बढ़ा सकते हैं।

एकीकृत हानिकारक कीट प्रबंधन के साथ एकीकरणः सौर्यीकरण को अन्य एकीकृत हानिकारक कीट प्रबंधन के साथ एकीकृत करने पर आगे के अध्ययन अधिक मजबूत और व्यापक कीट प्रबंधन प्रणाली विकसित करने में मदद करेंगे।

मृदा सौर्यीकरण : मृदा जनित रोगों और कीटों के प्रबंधन के लिए एक अच्छी शक्तिशाली और पर्यावरण के अनुकूल तरीका है। इसके लाभों में पर्यावरणीय स्थिरता और मृदा स्वास्थ्य में वृद्धि शामिल है। कुछ सीमाओं के बावजूद, यह रासायनिक उपचारों के लिए एक व्यवहार्य विकल्प प्रदान करता है, जो जैविक और टिकाऊ कृषि प्रथाओं में अच्छी तरह से फिट बैठता है। सूर्य की प्राकृतिक शक्ति का लाभ उठाकर, मृदा सौर्यीकरण पौधों की बीमारियों के प्रबंधन, स्वस्थ फसलों को बढ़ावा देने और दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी उपकरण है।

एक ऐसा समय हर एक देश के जीवन में आता है की जब इतिहास के विपरीत खड़ा होता है और उसे कोई एक रास्ता चुनना पड़ता है। लेकिन हमारे लिए ये कोई हिचकिचाने और डरने की बात नहीं है की हम दाएँ-बाए देखते रहे। हमारा रास्ता सीधा और साफ़ है – हमें एक मजबूत लोकतंत्र का निर्माण करना है जरा पूरी आज़ादी हो और आपस में प्यार हो। हम भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए शांति और विकास चाहते है।

लाल बहादुर शास्त्री

सब्जियों में जलवायु परिवर्तन व पोषक तत्वों से उत्पन्न दैहिक विकृतियाँ एवं उनका प्रबंधन

डी.आर. भारद्वाज, केशव कान्त गौतम, राजीव कुमार, अनुराग चौरसिया एवं संदीप कुमार
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

इस प्रकार के रोग प्रतिकूल पर्यावरण परिस्थितियों एवं पोषण तत्वों की असमानताओं के द्वारा पौधे की कार्यिकी में कुछ विकृतियाँ आ जाने के कारण उत्पन्न होते हैं।

(अ) पर्यावरणीय विकृतियाँ कैसे प्रभावित करती हैं ?

1. प्रतिकूल तापमान

- निम्न तापमानः आलू में निम्न तापमान से हिमांक घात हो जाता है तथा शीत ऋतु में फसलों पर तुषार घात हो जाता है।
- उच्च तापमानः उच्च ताप से सब्जियों में आपतदाह हो जाता है।

2. प्रतिकूल प्रकाशः प्रकाश की अनुपस्थिति में पत्तियों में पीलापन हो जाता है।

3. प्रतिकूल मृदा आर्द्रताः खेतों में जल की स्थिरता अथवा अधिक आर्द्रता एवं नमी के कारण पौधों में सड़न अथवा उकठा हो जाता है। वास्तव में ऐसा जड़ों के चारों ओर एवं तने के आधार पर विषैले पदार्थों के एकत्र हो जाने से और पोषक तत्वों के अनुउपलब्धता के कारण होता है। कम मृदा आर्द्रता अथवा नमी की कमी में भी पौधे मुरझा या सूख जाते हैं।

4. प्रतिकूल आक्सीजन संबंधः जब निकट वातावरण में श्वसन क्रिया अधिक होती है तो पौधों को प्रचुर मात्रा में आँक्सीजन का मिलना बंद हो जाता है जिससे एन्जाइम क्रिया द्वारा कोशिकाओं का विच्छेदन हो जाता है।

5. वायुमण्डलीय अशुद्धताएँः वायुमण्डल में विषैली अथवा घातक गैसों की उपस्थिति में पौधों को अथवा पौधों के कुछ भागों की क्षति हो जाती है। इस प्रकार की गैसों का प्रभाव सड़क के किनारे उगाई जा रही सब्जियों या कल-कारखानों से निकली गैसों के कणों के सम्पर्क में आने से पौधों के फूल-फल आदि पर विशेष रूप से देखा जा सकता है।

6. मृदा में अपघटित कार्बनिक पदार्थों के विषैले प्रभावः मृदा में अपघटित फसल अवशेषों से कुछ विषैले

सारिणी-1: सब्जियों में प्रमुख दैहिक विकृतियाँ

सब्जी फसल	दैहिक विकृतियाँ
चुकन्दर	ब्राउन हर्ट, क्राउन हर्ट, हर्ट राट
ब्रोकली	इन्टरनल टीप बर्न, ब्रोकली हर्ट इन्जरी
गाजर	स्पीलिटींग, कैविटी स्पाट, बिटरनेस, फोर्किंग, पिथिनेस
फूलगोभी	रिसीनेस, फज्जीनेस, लिफीनेस, ब्राउनिंग, व्हीपटेल, क्लोरोसिस
फराशबीन	अण्डज गर्भपात, हाइपोकोटिल क्रेकींग
लहसुन	बल्ब स्प्राउटिग, स्पीलिटींग
मूली	ब्राउन हर्ट
टमाटर	क्रैकिंग, ब्लाची राइपेनिंग, पफीनेस, गोल्डेन फ्लेक
आलू	ब्लैक हर्ट, होलो हर्ट, ग्रीनींग
अरवी	डिलेड कुकींग
सूरन	डिलेड कुकींग
शकरकंद	ग्रोथ क्रैक
तरबूज	ब्लासम इन्डराट

पदार्थ जैसे-वसीय अम्ल उत्पन्न होते है जो पौधों में आर्द्र पतन, मूल विगलन, म्लानि और पोषण न्यूनताओं जैसे लक्षण उत्पन्न करते हैं।

सब्जियों में प्रतिकूल वातावरण के कारण उत्पन्न दैहिक विकृतियाँ एवं उनका प्रबंधन

- **आलू का कृषान्त रोगः** आलू का यह रोग मुख्यतः भण्डारण में प्रतिकूल आक्सीजन संबंध द्वारा पैदा होता है। जब आलू को असंतुलित वायु संचार कमरे में ढेर के रूप में रखा जाता है तब यह रोग तीव्र गति से उत्पन्न हो जाता है। खेतों में कंदों की वृद्धि एवं परिपक्वता के समय यदि मृदा का तापमान मानक से अधिक हो जाये तो उस अवस्था में भी कृषान्त रोग उत्पन्न हो जाता है। यह रोग परिवहन के समय भी आलू में लग जाता है। जब आलू को ले जाने वाले वाहन के अन्दर तापमान अधिक हो जाये तब इस रोग के 3 विभिन्न पर्यावरण अवस्थायें उत्पन्न होती हैं। (1) संग्रह के समय कंद वायु संचार (2) यातायात के समय उच्च तापमान (3) कंदों की वृद्धि एवं परिपक्वता के समय खेत में मृदा का तापमान। प्रभावित कंदों के मध्य के ऊतक सूखकर अलग हो जाते हैं ऊतकों की यह अपवर्णता या विवर्णन कंद की सतह तक फैल जाती है। यह छोटे कंदों की अपेक्षा बड़ी कंदों में तेजी से फैलता हैं। आलू के ढेर में इस रोग को रोकने के लिए कंदों का भण्डारण उचित वायु संचार वाले भण्डार गृहों में संग्रह करना चाहिए तथा भण्डार गृहों एवं भार वाहनों का तापमान अधिक नही होना चाहिए। सदैव शीतगृहों में आलू का भण्डारण करना चाहिए।
- **अधिक धूप से टमाटर फलों का सफेद होना (सन स्कैल्ड):** उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में अप्रैल-मई के महिनों में टमाटर के फल सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आने से सफेद पड़ने लगते हैं । इससे गुणवत्ता में कमी के कारण बाजार भाव कम हो जाता है। ग्रीष्मकालीन

फसल में ऐसी किस्मों का चयन करना चाहिए जिसमें पत्तियाँ अधिक हो। टमाटर की तीन-चार पंक्तियों के बीच मक्का, सनई या ढैचा लगाये ताकि छाया में फल सुरक्षित रहें। नियमित अन्तराल पर सिंचाई करें ताकि भूमि में नमी बराबर बनी रहें।

- **फूलगोभी की विकृतियाँ:** फूलगोभी में विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण कुव्यवस्थायी विकार जैसे-बटनाकार, कलात्मक और पत्तापन इत्यादि हो जाते हैं जिससे गोभी के शीर्ष का मूल्य बाजार में नही मिलता है।

(I) बटनाकार गोभी: इस अवस्था में गोभी के पौधों में शीर्ष अपेक्षाकृत जल्दी बनना प्रारम्भ हो जाते हैं। बटनाकार गोभी का मुख्य कारण नाइट्रोजन की कमी तथा एक वर्ग की गोभी (मौसम की) दूसरे वर्ग में बुआई करना है। जैसे अगेती फूलगोभी की किस्म का रोपण देर या देर वाली किस्म का रोपण जल्दी करना है। फूलगोभी के सही किस्म को सही समय पर लगायें तथा पौधों को कीड़े व बीमारियों से बचायें।

(II) फूलगोभी में कलात्मकता : इस बीमारी में बिना तैयार हुए शीर्ष (खाने वाला भाग) में हरे शीर्ष निकलने लगते हैं जिसके कारण बाजार मूल्य घट जाती है। गोभी में हरी शीर्ष निकलने का प्रारम्भ होना एवं फूल का फटना ज्यादातर बदली के मौसम या वर्षा का फुहारा पड़ने के कारण होता है। बदली का मौसम देखते ही यदि गोभी तैयार होने में थोड़ा भी कसर हो तो भी उन्हे काटकर बाजार में बेच देना चाहिए।

(III) पत्तापन: फूलगोभी में कभी-कभी शीर्ष के खाने योग्य भाग पर छोटी-छोटी पत्तियाँ निकल आती है, ऐसा मुख्य रूप से शीर्ष बनने के समय तापमान अधिक हो जाने के कारण होता है। उपयुक्त किस्मों का चयन करें तथा उचित समय पर पौधों का रोपण एवं खाद उर्वरक दें। कर्ड शीर्ष को पत्तियों से ढक दें।

(IV) राइसीनेस या हेयरीनेस: कर्ड शीर्ष बनने के समय लम्बे समय तक वातावरण का तापमान अधिक होने के कारण होता है। तापरोधी किस्मों का चयन करें तथा कर्ड शीर्ष को पत्तों से ढ़क दें।

(अ) फूलगोभी में ब्राउनिंग: फूलगोभी के कर्ड शीर्ष का गुलाबी या बैंगनी रंग होने का कारण भूमि में बोरान तत्व की कमी होता है। कभी-कभी असमान मौसम के कारण, फसल की बढ़वार के समय किसी भी तत्व की कमी, पौधों के जड़ों का क्षतिग्रस्त होना, कृषि क्रियाओं में किसी भी तरह की

असावधानी बरते जाने या कर्ड शीर्ष को तेज प्रकाश मिलने के कारण 'एथोसाइनिन' बनता है जिसके कारण कर्ड शीर्ष का रंग हल्का गुलाबी या बैंगनी हो जाता है। फूलगोभी में संतुलित उर्वरकों (मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों) का प्रयोग करें क्योंकि इन तत्वों से पौधों की वृद्धि एवं विकास के साथ-साथ कर्ड शीर्ष की गुणवत्ता बढ़ती है। फूलगोभी को सूर्य की कड़ी धूप से बचाने के लिए या तो ऐसी किस्मों का चुनाव करें जिसमें पत्तियाँ स्वयं कर्ड शीर्ष के ऊपर सुरक्षा कवच बना देती हो या फिर पत्तियों के गुच्छों को कर्ड शीर्ष के ऊपर धागे या रबर के छल्ले की सहायता से बांध दें।

- **आलू में हरापन:** जब आलू सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आते हैं तो उसमें पर्ण हरित बनता है और इसी के साथ हानिकारक एल्केलायड जैसे-सोलेनीन और चैकोनीन का संश्लेषण हो जाता है। ये एल्केलायड मनुष्य के लिए बहुत ही हानिकारक होते हैं ज्यादा हरा आलू का प्रयोग करने से कैंसर जैसी भयानक बीमारियाँ होने की सम्भावना बढ़ जाती है। खेत में यदि कोई आलू जमीन के ऊपर दिखाई देता है तो उसे तुरंत ही मिट्टी से ढक दें। आलू के भण्डारण में भी सूर्य की रोशनी नही पड़नी चाहिए। अतः प्रकाश रोधी भण्डार गृह का निर्माण करना चाहिए।

(ब) पोषक तत्वों से उत्पन्न दैहिक विकृतियाँ : कुछ पोषक तत्वों जैसे-नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, मैगनीज, मैग्नीशियम, बोरॉन, जिंक, कॉपर, लोहा आदि की कमी के फलस्वरूप पौधे के उपापचय में अवरोध उत्पन्न हो जाती हैं और फसल पर विशेष लक्षण प्रकट होते हैं। समुचित पोषक तत्वों की उपलब्धता पौधें में अच्छे उपापचय के लिए सहायक होते हैं। आवश्यक पोषक तत्वों के असंतुलित प्रयोग से पौधों के जीवन चक्र पूरा करने में बाधा होती है। इस प्रकार पोषक तत्वों की न्यूनता और अधिकता दोनों अवस्था ही पौधों को संवेदनशील व रोग बना देते हैं।

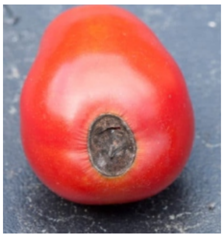

ब्लासम इन्डराट आफ टोमैटो

ब्लैक हर्ट आफ पोटैटो

सब्जियों में विभिन्न पोषक तत्वों की कमी से विकार प्रबन्धन

नाइट्रोजन: पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण सबसे पहले नीचे की पत्तियों अथवा पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते हैं- इस श्रेणी में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, मैग्नीशियम एवं जस्ता सम्मिलित हैं। नाइट्रोजन की कमी से पत्तियों का रंग पीला अथवा लाल-हरा हो जाता है परन्तु अत्यधिक कमी में पत्तियाँ सफेद हो जाती है और कभी-कभी झुलस भी जाती है। पौधों की वृद्धि रूक जाती है और फसल पैदावार कम हो जाती है। फसल योजना बनाते समय नत्रजन की आवश्यक मात्रा का निर्धारण करना चाहिए। यदि फसल की प्रारम्भिक अवस्था में नत्रजन की कमी पड़ रही हो तो अतिरिक्त नत्रजन देने से काफी अच्छे परिणाम मिलते हैं। शीघ्र परिणाम के लिए पौधों पर नत्रजन का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। यदि पौधे में

सारिणी-2: पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न होने वाली दैहिक विकृतियाँ

क्र.सं.	कारण	प्रभावित फसलों में होने वाली विकृति
1.	कैल्शियम की कमी	कैविटी स्पाट इन कैरट, ब्लैक हर्ट आफ सेलरी, फराशबीन हाइपोकोटिल, नैकरोसिस, टीप बर्न आफ लेट्यूस, ब्लासम इन्डराट आफ टोमैटो
2.	बोरान की कमी	ब्राउन हर्ट आफ बीट, ब्राउन हर्ट आफ रैडिस, फूलगोभी की ब्राउनिंग
3.	पोटैशियम की कमी	ब्लाची राइपेनिंग इन टोमैटो
4.	नत्रजन की कमी	बटनींग
5.	मालीब्डेनम की कमी	व्हीपटेल
6.	अधिक नत्रजन प्रयोग	स्प्लीटींग ऑफ कैरट, बल्ब स्प्राउटिंग ऑफ गार्लिक, होलो हर्ट ऑफ पोटैटो

नत्रजन की कमी से बहुत नुकसान पहुँच गया हो तो अतिरिक्त नत्रजन देने से कोई लाभ नही होता है। यदि नत्रजन की कमी पौधे के अंतिम अवस्था में दिखाई पड़े तो उस समय अतिरिक्त नत्रजन नहीं देना चाहिए।

फास्फोरसः फास्फोरस की कमी से पत्तियों में नाइट्रोजन अधिक मात्रा में सिंचित के कारण सर्वप्रथम लक्षण पहले नीचे की पत्तियों पर व फिर ऊपर की पत्तियों की ओर बढ़ते हैं। पत्तियों के सिरे से यह रंग प्रारम्भ होकर किनारे की ओर बढ़ती है। पत्तियों के मुख्य नसें हरी रहती हैं। फास्फोरस की कमी से फसलों की परिपक्वता देर में होती है क्योंकि फूल-फल बहुत देर में बनते हैं। इतना ही नही फलों व बीजों का आकार बहुत छोटा हो जाता है। फास्फोरस की कमी से आलू की पत्तियाँ जाले का आकार ग्रहण कर लेती है तथा विकसित कंद पर जंग जैसा घाव उत्पन्न होता है। खड़ी फसलों फास्फोरस की कमी के लक्षण दिखाई पड़ने पर उपचार या प्रबन्धन मुश्किल होता है। अतः फसल को बचाने के लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि फास्फेट की संतुलित मात्रा का निर्धारण कर उपयोग फसलों के अनुसार बुआई या रोपाई के समय अवश्य कर लेना चाहिए।

पोटैशियमः पोटैशियम की कमी से पौधों की पत्तियों के सिरे व किनारे झुलसने व मुड़ने लगते हैं। पत्तियाँ समय से पूर्व ही गिर जाती हैं। फल कम व विलम्ब से लगते हैं। कभी-कभी पुरानी पत्तियाँ भूरी व धब्बेदार हो जाती हैं। आलू में पोटाश की कमी से पत्तियों का रंग गहरा हरा हो जाता है जो बाद में पीला, भूरा एवं काँस रंग में परिवर्तन हो जाता है। पौधों में जड़ों का विकास कम होता है जिससे कंद छोटे पड़ जाते हैं।

कैल्शियमः पत्तियों की सामान्य वृद्धि नही होती हैं। पत्तियाँ बादामी रंग की हो जाती हैं। उनके किनारे कटे-फटे होते है। ऊपरी पत्तियों के किनारे झुक या मुड़ जाते हैं। अंत में पत्तियों का अगला सिरा व किनारा सूख कर नष्ट हो जाता है। कैल्शियम की कमी से टमाटर में पुष्पों के अग्र भाग सुखकर नष्ट हो जाते हैं। जिससे उपज में भारी गिरावट आती है।

गंधकः गंधक की कमी से पत्तियों का रंग हल्का हरा हो जाता है और पौधे की वृद्धि धीमी हो जाती है। पत्तियों पर क्लोरोसिस रोग दिखाई देने लगता है। प्याज एवं लहसुन की ऊपरी शिरायें व शिराओं के मध्य भाग हल्के हरे रंग के हो जाते हैं और गन्धक के अभाव में पौधों की बढ़वार कम हो जाती है।

जस्ताः जस्ता की कमी से पौधों की पत्तियाँ छोटी, नुकीली व मोटी हो जाती हैं। पत्तियों का रंग धुंधला पीला या भूरा हो जाता है। पत्तियों का किनारे मुड़ जाते हैं। समय के पूर्व ही पत्तियाँ गिर जाती है। फलों का आकार छोटा हो जाने के कारण बीजों का उत्पादन घट जाता है।

मैगनीजः मैगनीज की कमी से पौधों की बढ़वार रूक जाती हैं। सेम एवं टमाटर के पौधे बौने हो जाते हैं। पत्तियों में पीलिया रोग लग जाता है जिनसे इन पर पीली चित्तियाँ दिखाई देने लगती हैं। नई पत्तियों की नसें बीच-बीच में रंगहीन होने के कारण कुछ समय बाद मर जाती हैं। उदाहरण के लिए जलीय बिन्दु रोग मैगनीज की कमी से होता है। मटर के प्रभावित पौधों की पत्तियों में पीलापन उत्पन्न हो जाता है। पत्ती की छोटी-छोटी नसें हरी बनी रहती है। इसके कमी का लक्षण सबसे पहले पौधों की पुरानी पत्तियों पर दिखाई पड़ता है।

मैग्नीशियमः मैग्नीशियम की कमी से पौधों के हरे रंग पर प्रभाव पड़ता है जो प्रकाश संलश्लेषण के लिए आवश्यक है। पौधों की पुरानी पत्तियों से हरा रंग किनारे एवं तनों के बीच से नष्ट हो जाता है। पत्तियाँ आकार में छोटी रह जाती हैं । पत्तियों ऊपर की ओर मुड़ जाती है। इस तत्व की अधिक कमी होने पर पुरानी पत्तियाँ सूख जाती है। परन्तु नसों का रंग हरा बना रहता है। पत्तियों की नसों के बीच-बीच में पीली या भूरी चकतियाँ बन जाती है।

मालीब्डेनमः मालीब्डेनम की कमी के लक्षण नाइट्रोजन की कमी के लक्षण के समान समान होते हैं जिनमें पौधे छोटे एवं पीले रंग के हो जाते हैं। कमी के लक्षण पौधों की नई पत्तियों में स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। पत्तियाँ मुड़ने लगती हैं और किनारा टुटने लगता है। फूलगोभी में मालीब्डेनम तत्व की कमी से पत्तियों में हरे रंग का विकास कम होता है। पत्तियाँ किनारे से सफेद हो जाती हैं और केवल नाम मात्र के लिए हरी रहती हैं । बाद में ये पत्तियों भी मुरझा कर गिर जाती है। विकसित हो रही नयी पत्तियाँ भी विकृत हो जाती हैं और फूलगोभी में व्हिपटेल रचना बन जाती है। प्रबन्धन के लिए1.5 किग्रा. सोडियम मालीब्डेड एसिड प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर गोभी के आकार, गुणवत्ता व विटामिन्स 'सी' में वृद्धि होती है। गोभी लगाने से पूर्व खेत में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्वों की जाँच अवश्य करना चाहिए। जाँच के आधार पर संस्तुत मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। मालीब्डेनम की कमी से पुरानी पत्तियों का रंग बदामी हो जाता है जिससे पत्तियाँ अपरिपक्व अवस्था में ही सूखकर गिरने लगती है। परिणामतः फसलों की वृद्धि एवं विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मालीब्डेनम की कमी से पौधों की नीचली पत्तियों में मोल्टिंग, नेक्रोसीस जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं व पत्तियाँ किनारे से मुड़ जाती हैं ।

बोरानः बोरान की कमी से फूलगोभी के शीर्ष छोटे रह जाते हैं। इसकी कमी से शीर्ष विकास के प्रारम्भ में ही छोटे-छोटे भूरे धब्बे दिखाई देते हैं तथा बाद में पूरे शीर्ष हल्के गुलाबी या भूरे रंग के हो जाते हैं जो खाने में बहुत कड़वी लगती है। इस

विकृति के कारण फूलगोभी की पैदावार और बाजार माँग दोनों में गिरावट आ जाती है। उचित प्रबन्धन हेतु बोरेक्स या बोरान 20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से अन्य उर्वरकों के साथ खेत में प्रयोग करना चाहिए। खड़ी फसल पर बोरेक्स के 2-4 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से अधिक उपज और गुणवत्ता शीर्ष प्राप्त होते हैं।

क्लोरीन: पत्तागोभी में क्लोरीन की कमी से पत्तियाँ मुड़ जाती हैं। क्लोरीन के अभाव में टमाटर की नई पत्तियों पर क्लोरोसिस, नक्रोसिस जैसे लक्षण दिखाई पड़ते हैं जो बाद में पौधों पर असाधारण प्रकार के भूरे रंग की रचनायें विकसित करने में सहयोग देती हैं।

ताँबा: इस सूक्ष्म तत्व की कमी से पौधों की नई पत्तियों के किनारे व अग्रभाग में क्लोरोसिस हो जाता है। कमी से पत्तियाँ पहले सफेद दिखाई पड़ती है और बाद में उनकी मृत्यु हो जाती है।

लोहा: लौह तत्व की कमी से पौधों की पत्तियों का रंग पीला हो जाता है। तना छोटे और पतले रह जाते हैं तथा नई कलिकाओं की विपरित दशा में मृत्यु हो जाती हैं।

सब्जियों में पोषक तत्वों की अधिकता से उत्पन्न दैहिक विकृतियाँ

1. **फूलगोभी में तना का खोखला होना:** फूलगोभी को उपजाऊ भूमि में उगाने से नाइट्रोजन की मात्रा अधिक हो जाती है जिसके कारण पौधों की वृद्धि जल्दी हो जाती है। लेकिल नाइट्रोजन की अधिक मात्रा में हो जाने के कारण तने में खोखलेपन की समस्या आ जाती है।
2. **पौधों में हरितमा और कोमलता बढ़त:** पौधों में नत्रजन की अधिक मात्रा का प्रयोग करने से पौधों में सिलिकान तत्व की कमी हो जाती है जिससे पौधों में हरितमा के साथ-साथ कोमलता भी बढ़ जाती हैं। पौधों में कोमलता एवं कोशिका भित्ति पतली होने के कारण पाला व सूखा सहन करने की क्षमता कम हो जाती है जिसके कारण पौधे मुरझाकर गिर जाते हैं।
3. **कीटों व बीमारियों का प्रकोप:** अधिक नत्रजनीय उर्वरकों के उपयोग से हरितमा एवं कोमलता बढ़ जाती है। जिसके कारण कीड़े एवं बीमारियों का आक्रमण अधिक होता है।
4. **फसलों की गुणवत्ता पर प्रभाव:** अधिक मात्रा में नत्रजन उर्वरकों के प्रयोग से सब्जियों की गुणवत्ता जैसे-आकार-प्रकार, स्वाद, सुगन्ध, रंग आदि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गुणवत्ता में कमी के कारण इनकी बाजार माँग व मूल्य भी घट जाती है।

गतांक से आगे.........

कृत्रिम मेधा के युग में भारत का प्राचीन परम्परागत मौसम पूर्वानुमान

आत्मानंद त्रिपाठी

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

मौसम पूर्वानुमान एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें भविष्य के मौसम की जानकारी प्रदान की जाती है। मौसम पूर्वानुमान का उल्लेख भारत के वैदिक कालीन ग्रंथों में अति विस्तार से किया गया है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, पंचांग तथा भारतीय ज्योतिष शास्त्र में भी मौसम के पूर्वानुमान एवं इसकी वैज्ञानिकता का वर्णन मिलता है। वराहमिहिर रचित 'वृहत संहिता', कौटिल्य रचित 'अर्थशास्त्र', कालिदास रचित 'मेघदूत' एवं घाघ व भड्डुरी की कृषि कहावतों में मौसम पूर्वानुमान की भविष्यवाणी कृत्रिम मेधा एवं संगणक युग में भी अति लोकप्रिय व प्रासंगिक हैं। प्राचीन काल में समाज में लोकोक्तियों, कहावतों, सुक्तियों एवं सुभाषितों के माध्यम से कृषि कार्यों से संबंधित ज्ञान को अपनाने का पाठ पढ़ाया जाता था। भारत कृषि एवं कृषक प्रधान देश है। हमारे देश में कृषि 50 प्रतिशत से भी अधिक जनमानस के लिये रोजगार, आय एवं जीविका का मुख्य साधन है। धन अर्जन के तीन तरीके है- पहला व्यापार; दूसरा लूटपाट और तीसरा कृषि। इसीलिये घाघ एवं भड्डुरी ने कृषि को श्रेष्ठ बताते हुए कहा था 'उत्तम खेती, मध्यम बान, निकृष्ट चाकरी भीख निदान'। कृषि के मुख्य स्तम्भों में भूमि, जल, जलवायु, बीज, औजार एवं किसान आते हैं । 'सब कुछ प्रतीक्षा कर सकता है लेकिन कृषि नही' क्योंकि कृषि मौसम और जलवायु पर आधारित होती है। अतः मौसम पूर्वानुमान की भविष्यवाणी कृषि का मूल आधार है। महान कृषि कवि एवं मौसम पूर्वानुमानी घाघ-भड्डुरी की कृषि कहावतें देखने में छोटी लगती हैं, परन्तु मौसम पूर्वानुमान को सटीक तरीके से व्यक्त करती है। संगणक एवं कृत्रिम मेधा पर आधारित मौसम पूर्वानुमान कई बार खरे नहीं उतरते, परन्तु वैदिक कालीन एवं प्राचीन भारत की देशज मौसम पूर्वानुमान की परंपरा आज भी सत्य साबित होती है और किसानों का मार्गदर्शन भी करती है। हमारी वर्तमान पीढ़ी पुराने समय में कृषि कवियों द्वारा दी गई जानकारियों से अनभिज्ञ है। इस परिप्रेक्ष्य में मौसम पूर्वानुमान में भारत के अतीत की क्षमता एवं सुदीर्घ योगदान की विरासत को जानना अति आवश्यक है।

वराहमिहिर रचित 'वृहत संहिता' ज्योतिष शास्त्र का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें 106 अध्याय है जिसमें ज्योतिष के अलावा मौसम विज्ञान, प्राकृतिक आपदाओं, जल विज्ञान तंत्र, मौसम का पूर्वानुमान एवं कृषि से संबंधित विभिन्न विषयों की जानकारी समाहित है। कौटिल्य रचित 'अर्थशास्त्र' में वर्षा के 'वैज्ञानिक मापन' के लिये 'वर्षामापी' का उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ में वर्षा मापने की इकाई को 'अधक' (1 अधक = लगभग 12 मिमी.) के रूप में वर्णित किया गया है। इसमें वर्षा आधारित फसलों के लिये 16 द्रोण (1 द्रोण= 40-50 मिमी. अर्थात् 16 द्रोण= 600-800 मिमी.) और चावल की खेती लिये 40 द्रोण (1600-2000 मिमी.) वर्षा की आवश्यकता की गणना का अनुमान भी बताया गया है। विशिष्ट नक्षत्र रोहणी सबसे ज्यादा गर्मी वाला नक्षत्र होता है जिसे सामान्य लोक भाषा में 'नवतपा' के नाम से जाना जाता है। इसके एवं अन्य नक्षत्र जैसे- स्वाति, आर्द्रा, भरणी, कृत्तिका, अश्विनी, मृगशिरा, मघा, पूर्वा, रेवती, चित्रा, हस्त, विसाखा, अनुराधा के उदय और अस्त होने के आधार पर मौसम के पूर्वानुमान की भविष्यवाणी की जाती थी। इस सन्दर्भ में घाघ व भड्डुरी की कुछ सुक्तियाँ जिनमें वर्षा की भविष्यवाणी निहित है, नीचे वर्णित की जा रही हैं:

सर्व तपै जो रोहिणी, सर्व तपै जो मूर।
परिवा तपै जो जेठ की, उपजै सातो तूर।।

सावन पहिले पाख में, दशमी रोहणी होय।
महँगनाज अरूस्वल्प जल, विरला विलसै कोय।।

रोहनी बरसै मृग तपै, कुछ-कुछ अर्द्रा जाय।
कहै घाघ सुने घाघिनी, स्वान भात नहि खाय।।

सावन शुक्ला सप्तमी, जो गरजै अधिरात।
बरसै तो झूरा परै, नाही समौ सुकाल।।

घाघ व भड्डुरी दोनों लोकप्रिय मौसम पूर्वानुमानी किसान कवि रहे हैं। इनकी कहावतें 'आज के पूर्वानुमान से भी श्रेष्ठ प्रतीत होती हैं। कृत्रिम मेधा एवं संगणक के युग में भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, नई दिल्ली के अधीनस्थ, भारत मौसम विज्ञान (नई दिल्ली), भारतीय उष्णदिशीय मौसम विज्ञान संस्थान (पुणे) एवं राष्ट्रीय मध्यम अवधि मौसम पूर्वानुमान केन्द्र (नोएडा) आदि संस्थानों के माध्यम से भारत ने मौसम पूर्वानुमान के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। इन संस्थानों में सुपर कंप्यूटर 'मिहिर' एवं 'प्रत्यूष' का भी अधिष्ठापन किया गया है और विभिन्न मोबाइल एप्स जैसे- 'दामिनी', 'मेघदूत'

एवं 'मौसम' के माध्यम से किसानों के लिये मौसम संबंधी पूर्वानुमान की भविष्यवाणी की सुविधा भी विकसित की गयी है। वैज्ञानिक अपने कैरियर को सशक्त बनाने के उद्देश्य से अपनी शोध उपलब्धियों को अधिक इंपैक्ट फैक्टर वाले राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जर्नल्स में प्रकाशित करते हैं परन्तु वैज्ञानिक अपने शोध परिणामों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिये जनमानस की भाषा में स्वयं संप्रेषण नही करते हैं। यह कार्य विज्ञान संचारकों द्वारा किया जाता है जो किसी एक विषय पर महारत रखते हैं और विविध वैज्ञानिक विषयों पर संप्रेषण करते हैं जहाँ जाने-अनजाने त्रृटिपूर्ण संचार की संभावना बनी रहती है। अतः मौसम विज्ञान के पूर्वानुमान का संचार अपनी लोक भाषा में करना अति आवश्यक है। हमारे देश की मौसम पूर्वानुमान के क्षेत्र में अति विशिष्ट विशेषज्ञता रही है। यही विरासत हमारे देश को 'ग्लोबल नेटवर्क' का एक महत्वपूर्ण अंग बनाया है। भारत की प्राचीन मौसम पूर्वानुमान की पद्धतियाँ मौसम की भविष्यवाणी करने में विशिष्ट थी। अंतः इन देशज प्राचीन परम्परागत मौसम पूर्वानुमान के ज्ञान को भारतीय मौसम विज्ञान के संस्थानों द्वारा कृत्रिम मेधा के प्रभावी संचार प्रणाली के माध्यम से देश में मौसम पूर्वानुमान की सही भविष्यवाणी कर किसानों को खेती व अन्य कृषि कार्यों के सुगम प्रतिपादन में और अधिक प्रभावी योगदान देना चाहिये।

अपनी पहली जीत के बाद आराम मत करिए क्योंकि अगर आप दूसरी बार हार गए तो बहुत से होंठ ये कहने के लिए इंतज़ार कर रहे होंगे कि आपकी पहली जीत बस किस्मत थी।

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

उपयोगी शब्द कोष

Action plan	कार्य योजना
Activator	सक्रियक
Active absorption	सक्रिय अवशोषण
Active ingradient	सक्रिय तत्व, सक्रिय अवयव
Activity	सक्रियता
Activity coefficient	क्रियाशीलता गुणांक
Ad valorem	मूल्यानुसार
Adaptability	अनुकूलनशीलता, अनुकूलनीयता
Adaptation	अनुकूलन
Adapted variety	अनुकूलित किस्म
Adaptive	अनुकूली
Addition	योग, परिवर्धन, इसके अलावा
Additive effect	संयोजी प्रभाव
Additive gene	संयोगिक जीन
Additive gene interaction	संयोगिक जीन अन्योन्यक्रिया
Adhere	चिपकना
Adhering	आसंजन
Bio agent	जैव कारक
Bio available	जैव उपलब्ध
Bio bactericide	जैव जीवाणुनाशी
Bio chemical	जैव रसायनिक
Bio cide	जैव नाशक
Bio conversion	जैव रूपांतरण
Bio defalcation	जैव निम्नीकरण
Bio degradation	जैव अपघटन
Bio deprecation	जैव अपचयन
Biodiversity	जैव विविधता
Biodynamic	जैव गतिशील
Bioefficacy	जैव प्रभावकारिता
Bio energetics	जैव ऊर्जिकी
Bio farming	जैविक खेती
Bio fertilizer	जैव उर्वरक
Bio fortification	जैव पोषण
Bio fuel	जैव इंधन
Bio fungicide	जैव कवकनाशी
Bio gas	गोबर-गैस
Bio insecticide	जैव कीटनाशी
Bio intensive	जैव सघन
Bio logical	जैविक
Biological containment	जैव संगरोधन
Bilogical control	जैविक नियंत्रण
Biological information	जैव सूचना
Bio magnification	जैव आवर्धन
Bio marker	जैव चिन्हक
Bio pesticide	जैव पीड़कनाशी
Biosphere	जीव मण्डल
Bio stimulant	जैव उद्दीपक
Biotechnology	जैव प्रौद्योगिकी
Biotype	जैव प्रारूप
Biowar	जैविक युद्ध
Bio weapon	जैविक हथियार
Catalyse	उत्प्रेरित करना
Catastrophic	भयावह
Category	वर्ग, श्रेणी
Caterpillar	इल्ली
Caveat	चेतावनी, वैधानिक विराम-पत्र
Cavity spot	खोखले धब्बे
Cell	कोशिका
Cell culture	कोशिका संवर्ध
Cell cycle	कोशिका चक्र
Cell extract	कोशिका सत्
Cell fusion	कोशिका संलयन
Cell line	कोश वंश
Cell respiration	कोशिका श्वसन
Centrifugation	अपकेन्द्रण
Cereal	धान्य
Certification	प्रमाणीकरण
Denaturation	विकृतन
Denaturing	अप्राकृतिकरण
Dendrogram	द्रुमारेख
Denitrification	विनाइट्रीकरण
Denovo pathway	नवपथ
Densely	घना
Density	घनत्व
Denudation	अनाच्छादन, निरावरण
Department	विभाग
Depend	निर्भर, अधीन होना
Depletion	कमी, रिक्तिकरण
Deployment	तैनाती, परिनियोजन
Deposit	जमा, निक्षेप करना
Depression	अवनति
Derivable	व्युत्पत्ति-विषयक
Derivative	यौगिक
Derived	व्युत्पन्न
Derm	अंतरत्वचा
Descend	अवरोही, उतरना, नीचे उतरना
Descended	उतरा, अवतीर्ण
Descent	अवतरण, अवरोहण
Described	वर्णित, उल्लिखित
Descriptive	वर्णनप्रधान, वर्णनात्मक
Deserves	लायक होना, हकदार
Desiccant	अवशोषक, शोषक
Desiccate	सूखना
Desiccation	सुखाना
Designate	पदनाम
Desirable	वांछित, वांछनीय
Desired	इच्छित
Destruction	विनाश
Emphasis	बल देना, जोर देना
Emphasize	जोर देना

Empirical	प्रयोग सिद्ध
Empirical risk	आनुभाविक खतरा
Employ	काम देना
Emulate	अनुकरण
Enation leaf curl	शिराविन्यास पर्ण कुंचन
Encystation	पुटीभवन
Endeavour	प्रयास
Endemic	स्थानिक
Endogenous	अंतर्जात
Firmness	दृढ़ता
Fisheries	मत्स्यकी, मत्स्य पालन
Fishery	मत्स्य उद्योग, मत्स्य क्षेत्र
Fission	विखण्डन
Fixation	स्थिरीकरण, यौगिकीकरण
Flagellum	कशाभ
Flavour	सुगंध, स्वाद
Flea beetle	पिस्सू भृंग
Flecked	कण, चकत्ता
Flesh texture	मांस की बनावट, संगठन
Flexibility	लचीलापन

संकलनकर्ता : **रामेश्वर सिंह**

'छोटे स्वार्थ निश्चय ही मनुष्य को भिन्न-भिन्न दलों में टुकड़े-टुकड़े कर रहे हैं, परंतु यदि मनुष्य चाहे तो ऐसा महासेतु निर्माण कर सकता है जिससे समस्त विच्छिन्नता का अंतराल भर जाए।'

-हजारी प्रसाद द्विवेदी

संस्थान की गतिविधियाँ

तकनीकी अधिकारी प्रशिक्षण (15-19 जनवरी, 2024)

गणतंत्र दिवस (26 जनवरी, 2024)

प्रशिक्षु आइ.ए.एस. अधिकारियों का संस्थान भ्रमण (30 जनवरी, 2024)

अ.भा.स.अनु.परि. (सब्जी फसल) की
42वीं वार्षिक समूह बैठक (22-24 फरवरी, 2024)

डीडी किसान चौपाल (23 फरवरी, 2024)

आईएसवीएस, वाराणसी बैठक (24-26 फरवरी, 2024)

उद्यान महाविद्यालय, त. कृ. वि., कोयम्बटूर,
छात्र शैक्षिक भ्रमण (08 मार्च, 2024)

30वीं संस्थान प्रबंधन समिति की बैठक (22 मार्च, 2024)

संस्थान प्रौद्योगिकी समिति की बैठक (24 अप्रैल, 2024)

वेजफेड बिहार के साथ बैठक (3 मई, 2024)

अन्तर्राष्ट्रीय पादप स्वास्थ्य दिवस (12 मई, 2024)

विश्व मधुमक्खी दिवस (20 मई, 2024)

उप-महानिदेशक (उद्यान विज्ञान) का सम्बोधन (09 जून, 2024)

कीटनाशक अवशेष विश्लेषण प्रयोगशाला का लोकार्पण (09 जून, 2024)

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी एवं भारतीय बीज विज्ञान मऊ के मध्य प्रशासनिक समझौता

ओडिशा के उद्यान अधिकारी प्रशिक्षण (17 जून, 2024)

समाचार पत्रों से.....

बताई गईं रोजगार परक विधियां

चुनार। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी की ओर से गुरुवार को धानापुर गांव की महिलाओं को कृषि उद्यमिता विकास के लिए रोजगार परक विधियों से अवगत कराया गया। सस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. सुदर्शन मौर्य ने मशरुम स्पान के उत्पादन की तकनीक, पैकिंग एवं विपणन, फ्रेश फ्रूट उत्पाद और उसके सब्जियों के रूप में उपयोग आदि की जानकारी दी।

मशरूम प्रसंस्करण से महिलाएं बन रहीं स्वावलंबी

जक्खिनी/वाराणसी (एसएनबी)। महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण एवं उद्यमिता विकास में अग्रणी भूमिका निभाते हुए भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान द्वारा ग्रामीण अंचल के विभिन्न महिला समूहों को मशरुम उत्पादन एवं उसके प्रसंस्कृत उत्पादों पर प्रशिक्षण देकर उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाया जा रहा है।

संस्थान के निदेशक डॉ. तुषार कांति बेहेरा के दिशा-निर्देशन में धानापुर की महिलाओं को कृषि उद्यमिता विकास के लिए रोजगार परक विधियों से अवगत कराया गया। प्रधान वैज्ञानिक डॉ. सुदर्शन मौर्य ने मशरुम स्पान के उत्पादन की तकनीक, पैकिंग एवं विपणन, फ्रेश फ्रूट उत्पाद और उसके सब्जियों के रूप में उपयोग, मशरुम के विभिन्न पोषण एवं औषधीय गुणों की जानकारी तथा मशरुम के फलों के मूल्य संवर्धन द्वारा अचार, बिस्कुट, जेम, जेली, नमकीन आदि को बनाने और बाजार में वितरित करने के संबंध में जानकारी दी। सब्जी उत्पादन से लेकर सब्जी-फल मूल्य संवर्धन पर हेतु महिलाओं को सबल एवं सशक्त बनाना समय की मांग है। इसके लिए आराजीलाइन ब्लॉक के 'उजाला महिला समूह' के 12-12 महिलाओं के समूह को प्रशिक्षित किया जा रहा है। जिसके माध्यम से इन महिलाओं ने अपने द्वारा स्वयं के बनाये उत्पादों को स्टाल के माध्यम प्रदर्शित भी किया। उजाला महिला समूह, धानापुर की सदस्या रेनू ने बताया कि संस्थान से प्रशिक्षण प्राप्त कर मशरुम उत्पादन एवं उसके मूल्य संवर्धन तथा सब्जी-फल मूल्य संवर्धन आदि तकनीकियों से हमारी महिला समूह की महिलायें आत्मनिर्भर है और बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाने के साथ घर की आर्थिक प्रगति में भी योगदान दे रही हैं। इस अवसर पर संस्थान के मीडिया सेल अध्यक्ष डॉ. डीपी सिंह, सदस्य अनुराग चौरसिया, एग्रिमित्रा फार्मर प्रोड्यूसर कंपनी के प्रमुख गोविंद सिंह तथा किसान तक मीडिया चैनल के धर्मेंद्र सिंह समेत कई किसान प्रशिक्षु उपस्थित रहे।

epaper हिन्दुस्तान

पोषण और सब्जियों की महत्ता बताई

- भारतीय सब्जी अनुसंधान की पहल
- पांच दिवसीय प्रशिक्षण का आरंभ

चुनार, हिन्दुस्तान संवाद। अदलपुरा स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में 'बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों का संकर बीज उत्पादन' विषयक पाँच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का शुभारंभ सोमवार को हुआ। देश के दस राज्यों केरल, असम, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, नागालैंड, महाराष्ट्र, नई दिल्ली, झारखण्ड, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश के 18 तकनीकी अधिकारी एवं वैज्ञानिक, जो कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केंद्रों से भाग ले रहे हैं।

मुख्य अतिथि डॉ. एस. चिन्नपा, अतिरिक्त पुलिस आयुक्त, वाराणसी ने मानव जीवन में पोषण सुरक्षा एवं सब्जियों के महत्व पर प्रकाश डाला। संस्थान के निदेशक डॉ. टीके बेहेरा ने संस्थान की गतिविधियों के बारे में बताने के साथ-साथ बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों के संकर बीज उत्पादन के महत्व पर प्रकाश डाला।

संस्थान में सब्जियों के संकर बीज उत्पादन के क्षेत्र में किए जा रहे अनुसंधान कार्यों पर भी चर्चा की। कार्यक्रम का संचालन डॉ. शुभादीप राय एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. राजीव कुमार ने दिया।

प्रशिक्षु आई.ए.एस. अधिकारियों ने सब्जी अनुसंधान संस्थान का किया भ्रमण

रोहनिया (सिग्मा न्यूज ब्यूरो)। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान शाहंशाहपुर में मंगलवार को नव-प्रवेशी एवं प्रशिक्षु 18 आई.ए.एस. अधिकारियों के एक दल को

%भारत दर्शन कार्यक्रम% के अंतर्गत संस्थान की गतिविधियों से परिचित कराया गया। संस्थान के निदेशक डॉ. तुषार कान्ति बेहेरा ने देश में सब्जी फसलों के उत्पादन, किसानों की आय संवर्धन में इन फसलों की उपयोगिता और आम लोगों के जीवन में सब्जियों की पोषण संबंधी जरूरतों पर प्रकाश डालने के साथ ही संस्थान द्वारा किये जा रहे शोध कार्यक्रमों और सब्जियों में किये जा रहे नवाचारों के बारे में बताया। प्रशिक्षुओं ने सब्जी शोध प्रक्षेत्र का भ्रमण किया।

जिसमें विभिन्न सब्जियाँ जैसे मिर्च, गाजर, बैंगन, मटर, गोभी इत्यादि की नयी किस्मों एवं संकरों के विकास एवं गुणवत्ता के बारे में जानकारी दी गयी। साथ ही हाई-टेक नर्सरी व ग्राफ्टिंग इकाई का भी भ्रमण किया। प्रशिक्षुओं ने आण्विक प्रजनन प्रयोगशाला, उत्तक संवर्धन इकाई, जैव प्राद्यौगिकी प्रयोगशाला का भी भ्रमण किया जहा जीनोम एडिटिंग, जीन पिरामिडिंग इत्यादि के बारे में जानकारी हासिल की। कार्यक्रम का संचालन डॉ. नकुल गुप्ता ने किया। इस अवसर पर संस्थान के विभागों के विभागाध्यक्षों के साथ ही वैज्ञानिक भी उपस्थित थे।

सब्जियों के संकर बीज उत्पादन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

जक्खिनी/वाराणसी (एसएनबी)। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में 'बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों का संकर बीज उत्पादन' विषय पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का 15 जनवरी को शुभारंभ किया गया। सब्जियों में संकर बीज उत्पादन के महत्व को ध्यान में रखते हुए यह प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया जा रहा है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रतिभागियों के साथ निदेशक डॉ. टीके बेहेरा एवं डॉ. एस चिन्नपा।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में देश के दस राज्यों केरल, असम, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, नागालैंड, महाराष्ट्र, नई दिल्ली, झारखण्ड, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश के 18 तकनीकी अधिकारी एवं वैज्ञानिक जो कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों से भाग ले रहे हैं। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रुप में प्रतिभाग करते हुए डॉ. एस. चिन्नपा, अतिरिक्त पुलिस आयुक्त, वाराणसी ने मानव जीवन में पोषण सुरक्षा एवं सब्जियों के महत्व पर प्रकाश डाला। संस्थान के निदेशक डॉ. टीके बेहेरा ने संस्थान की गतिविधियों के बारे में बताने के साथ-साथ बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों के संकर बीज उत्पादन के महत्व पर प्रकाश डाला। संस्थान में सब्जियों के संकर बीज उत्पादन के क्षेत्र में किए जा रहे अनुसंधान कार्यों पर भी चर्चा की। कार्यक्रम का संचालन डॉ. शुभादीप राय एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. राजीव कुमार ने दिया। इस अवसर पर संस्थान के तीनों विभागाध्यक्ष, परियोजना समन्वयक, समस्त वैज्ञानिक, अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे।

epaper हिन्दुस्तान

Share Copy url Save Font Size D'load Image Image Text Listen

लाल केला, काला आलू रखेंगे सेहतमंद

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में चल रहे क्षेत्रीय किसान मेले के दूसरे दिन विशेषज्ञों ने दी जानकारी

कारगर तकनीकों को किसानों तक पहुंचाएं

तीन दिवसीय क्षेत्रीय कृषि मेला का शुभारंभ

सात राज्यों के किसान कर रहे हैं सहभागिता

वाराणसी (काशीवार्ता)। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में शनिवार को तीन दिवसीय विशाल क्षेत्रीय कृषि मेला का शुभारंभ हुआ। उत्तर प्रदेश के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री सूर्य प्रताप शाही उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। उद्घाटन सत्र को सम्बोधित करते हुए मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के मार्ग निर्देशन एवं मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश की सरकार किसानों के हित में कार्य करने हेतु कृतसंकल्प है। उन्होंने कहा कि आज न देश केवल खाद्य उत्पादन में आत्म निर्भर हो चला है बल्कि हम विदेशों में कृषि उत्पादों का निर्यात भी कर रहे हैं और उसके माध्यम से किसानों को आर्थिक मजबूती मिल रही है। मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सक्रियता से किये जा रहे कृषि एवं किसान उपयोगी कार्यों की विस्तृत जानकारी दी। समारोह के विशिष्ट अतिथि डॉ. मंगला राय, पूर्व सचिव एवं महानिदेशक, आइसीएआर ने सेकेंडरी एग्रीकल्चर यानि उद्यानों के अवशेषों के मूल्य संवर्धन के माध्यम से किसानों को लाभ पहुचाने का आवाहन किया। उन्होंने कहा कि बात तो जैविक फार्मिंग की होती है परन्तु अवशेषों के प्रसंसकरण के माध्यम से वेस्ट को वेल्थ में परिवर्तित करके किसानों को लाभ पहुँचाया जा सकता है। उन्होंने

सूक्ष्मजीवों के व्यापक प्रसार से मृदा स्वास्थ्य संवर्धन पर जोर दिया। आइसीएआर के उपमहानिदेशक डॉ. यू. एस. गौतम ने कृषि प्रसार एवं अभिवात्रिकी के विभिन्न उपायों द्वारा किसानों की आय उन्नयन हेतु उपयोग किये जाने पर जोर देते हुए कहा की आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस एवं ड्रोन टेक्नोलॉजी के माध्यम से खेती का भविष्य बेहतर किया जा सकता है। आइसीएआर के सहायक महानिदेशक डॉ. सुधाकर पाण्डेय ने कहा कि इस मेले में विभिन्न स्तरों पर किसानों के साथ सीधे संवाद किया जा रहा है, जिससे किसान वर्तमान की चुनौतियों से अवगत होने के

वैधानिक सूचना

सुविज्ञ पाठकों से अनुरोध है कि इस समाचार पत्र में प्रकाशित किसी भी विज्ञापन पर प्रतिक्रिया करने से पहले विज्ञापन में दिये गए तथ्यों, शर्तों, दावों और सेवा के बारे में पूरी तरह उपयुक्त जांच पड़ताल कर लें। यह समाचार पत्र किसी भी उत्पाद या सेवा की गुणवत्ता आदि के विवरण के बारे में विज्ञापनदाता

गाँव जंक्शन

होम > खबर जंक्शन खेती-किसानी पशुधन काम की ब

Home › Khabar Junction › More Than 1200 Women Farmers Reach

कृषि मेले में पहुंची 1200 से अधिक महिला किसान: देश भर से आए कृषि वैज्ञानिकों ने दिया आधुनिक कृषि का मंत्र

शैलेश अरोड़ा, वाराणसी Published by: Shailesh Arora Updated Sun, 04 Feb 2024 10:20 PM IST

सार

वाराणसी स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में चल रहे क्षेत्रीय कृषि मेले के दूसरे दिन यूपी, बिहार, झारखण्ड, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश समेत विभिन्न राज्यों के 2800 से अधिक किसानों ने भागीदारी की। इनमें 1200 से अधिक महिलाएं रहीं।

कृषि मेले में लगे स्टॉल पर प्याज और लहसुन की वैरायटी देखते हुए किसान

कृषि मेले में राष्ट्रीय आर्किड अनुसंधान केंद्र को मिला प्रथम पुरस्कार

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में आयोजित तीन दिवसीय कृषि मेला का समापन

संवाद न्यूज एजेंसी

सीखड़। अदलपुरा स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान परिसर में आयोजित तीन दिवसीय कृषि मेले का सोमवार को समापन हुआ।

कृषि मेले में सिक्किम के राष्ट्रीय आर्किड अनुसंधान केंद्र को मिला प्रथम, कोझीकोड के भारतीय मसाला अनुसंधान संस्थान को द्वितीय और भारतीय कदन्न अनुसंधान संस्थान हैदराबाद एवं भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान को संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

मेले में यूपी, बिहार, झारखंड, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, ओड़िसा एवं छत्तीसगढ़ सहित सात राज्यों से 9000 से ज्यादा किसानों ने भागीदारी की। इनमें काफी संख्या में महिला किसान भी शामिल रहीं। मेले में 80 स्टॉलों के माध्यम से कृषि की आधुनिकतम तकनीक, जैविक खेती आदि के बारे में वैज्ञानिकों को प्रगतिशील किसानों को जानकारी दी।

समापन समारोह में मुख्य अतिथि

कृषि मेले में स्टॉल का अवलोकन करते प्रो. पंजाब सिंह। स्रोत-विभाग

के रूप में डॉ. पंजाब सिंह, पूर्व सचिव, कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग (डेयर) एवं पूर्व महानिदेशक, आई.सी.ए.आर. रहे। संस्थान के निदेशक डॉ. तुषार कांति बेहेरा ने अतिथियों का स्वागत किया।

मुख्य अतिथि किसान मेले के आयोजन के लिए आयोजकों की प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि किसानों के माध्यम से ही मानवता को जिंदा रखा जा सकता है। मेले के अंतिम तकनीकी सत्र में कृषि मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, उद्यमिता विकास एवं निर्यात विषय पर चर्चा की गई।

एपीडा के आनंद कुमार ने कृषि निर्यात की संभावनाओं एवं इससे जुड़ी सरकार की नीतियों की चर्चा की। प्याज एवं लहसुन अनुसंधान निदेशालय के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. एजे गुप्ता ने प्याज एवं लहसुन की उन्नत उत्पादन की तकनीक बताई। प्रगतिशील किसान मोहिनी और मोहन मिश्र ने भी अपने अनुभव साझा किया। मेले में दस प्रगतिशील किसानों को सम्मानित गया गया।

हाइब्रिड सब्जी बीजों की उत्पादन टेक्नोलॉजी पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण सम्पन्न

जक्खिनी/वाराणसी (एसएनबी)। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में 'बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों का संकर बीज उत्पादन' विषय पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का समापन हो गया। सब्जियों में संकर बीज उत्पादन के महत्व को ध्यान में रखते हुए यह प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया था। प्रशिक्षण में देश के दस राज्यों तथा केरल, असम, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, नागालैंड, महाराष्ट्र, नई दिल्ली, झारखण्ड, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश के 18 तकनीकी अधिकारी एवं वैज्ञानिक भाग लिए। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि डॉ. संजय कुमार, निदेशक, भारतीय बीज विज्ञान संस्थान, मऊ ने इस प्रशिक्षण कार्यक्रम को आयोजित करने के लिए संस्थान को बधाई दी। उन्होंने कहा कि गुणवत्तायुक्त बीज से ही खाद्य सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है। विश्व में लगभग 68 बिलियन यूएस डालर का बीज व्यापार है। इसमें भारतीय बीज बाजार का भी महत्वपूर्ण योगदान हैं। संस्थान के निदेशक डॉ. टीके बेहेरा ने बदलते जलवायु परिदृश्य में सब्जियों के संकर बीज उत्पादन के महत्व पर प्रकाश डाला। प्रशिक्षण का समन्वय डॉ. गोविन्द पाल, डॉ. शुभादीप रॉय, डॉ. नकुल गुप्ता एवं डॉ. राजीव कुमार ने किया। इस अवसर पर संस्थान के तीनों विभागाध्यक्ष, समस्त वैज्ञानिक, अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे।

सब्जियों के निर्यात विपणन और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवसर आईआईवीआर में तीन दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन

वाराणसी,7 फरवरी 2024(गांडीव)। दिनांक 6 फरवरी, 2024 को शहंशाहपुर स्थित भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में सीसीएस- राष्ट्रीय कृषि विपणन संस्थान, जयपुर द्वारा प्रायोजित - सब्जी फसलों में निर्यात विपणन और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवसर- पर तीन दिवसीय किसान प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन किया गया। प्रशिक्षण के अन्तर्गत झारखंड राज्य के हजारीबाग जिले के 61 किसानों को प्रशिक्षित किया जाएगा। अपने उद्घाटन भाषण में संस्थान के निदेशक डॉ. टी.के.बेहरा ने बेहतर आय के लिए फसलों के विविधीकरण, निर्यातोन्मुख उत्पादन के बारे में वैज्ञानिक जानकारी तथा विशेषज्ञों के माध्यम से सब्जियों के प्रसंस्करण और पैकेजिंग के महत्व पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. अरुण कुमार दास, प्रोफेसर और अध्यक्ष (सेवानिवृत्त), ओ.कृ.प्रो.वी.वी., भुवनेश्वर ने निर्यात की संभावना वाली बारहमासी सब्जियों के बारे में जानकारी दी। डॉ. नागेंद्र राय, अध्यक्ष, सब्जी सुधार विभाग ने अंतरराष्ट्रीय बाजार की मांग को ध्यान में रखते हुए सब्जियों के निर्यातोन्मुख उत्पादन करने पर बल दिया। फसल सुरक्षा विभाग के अध्यक्ष डॉ.ए.एन.सिंह ने सब्जी निर्यात के लिए क्षेत्र में एपीडा, इसकी योजनाओं और पैकहाउसों पर ज्ञान की आवश्यकता पर जोर दिया। वरिष्ठ वैज्ञानिक और समन्वयकों में से एक डॉ. भुवनेश्वरी ने प्रशिक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा के बारे में जानकारी दी। इस अवसर पर प्रशिक्षण मैनुअल और तकनीकी फोल्डर भी विमोचित किया गया। कार्यक्रम में समन्वयक डॉ. मंजुनाथ टी. गौड़ा और भ.कृ.अनु.सं., झारखंड के वैज्ञानिक डॉ. साहेब पाल भी उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन प्रधान वैज्ञानिक डॉ. हरे कृष्ण ने किया।

परम्परागत खेती के साथ करें मधुमक्खी पालन

वाराणसी। भा. कृ. अनु. प.-भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान के वाराणसी परिसर में 4 मार्च, 2024 को राष्ट्रीय मधुमक्खी पालन एवं शहद मिशन द्वारा प्रायोजित मधुमक्खी पालन पर एक दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में वाराणसी एवं मिर्जापुर जिले के 30 पुरुष एवं महिला किसान उपस्थित थे। संस्थान के निदेशक डॉ तुषार कान्ति बेहेरा ने कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए प्रशिक्षणार्थियों को बतलाया कि परंपरागत खेती के साथ-साथ मधुमक्खी पालन एवं उससे जुड़े व्यवसाय को अपना कर किसान अधिक आय अर्जित कर सकते है। फसल सुरक्षा विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ अरविन्द नाथ सिंह ने मधुमक्खी पालन से जुड़े प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभों की चर्चा की। प्रशिक्षण में मधुमक्खी पालन के परियोजना समन्वयक डॉ कुलदीप श्रीवास्तव ने आधुनिक मधुमक्खी पालन पर विस्तार से चर्चा की। श्री जे. पी. गुप्ता, तकनीकी अधिकारी ने किसानों को मधुमक्खी पालन पर प्रायोगिक ज्ञान प्रदान किया।

वाराणसी। शनिवार • 3 फरवरी • 2024
सहारा | www.rashtriyasahara.com

सब्जी बीजों की हुई रिकॉर्ड बिक्री

सब्जियों के निर्यात विपणन और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवसर आईआईवीआर में तीन दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन

किसानों में वितरित किए पाइप व ड्रम

सीखड़। अदलपुरा स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान परिसर में अराजी लाइन ब्लॉक के चंदापुर, जयापुर, पचाई व सिंगही गांवों के अनुसूचित जाति के प्रगतिशील किसानों को बृहस्पतिवार को सिंचाई के लिए पाइप वितरित किया गया। संस्थान की ओर से किसानों को पिछले तीन वर्षों से सब्जियों के बीज, पौध, फलदार वृक्षों के कलम पौधे, उर्वरक एवं कृषि उपकरणों का वितरण कर उनको समृद्ध करने का कार्य किया जा रहा है। संस्थान के निदेशक डॉ. तुषार कांति बेहरा ने किसानों से उन्नतशील बीज, सुरक्षा के उपायों को अपनाने पर जोर दिया। विभागाध्यक्ष डॉ. अनंत बहादुर ने नवीनतम तकनीकों की जानकारी दी। संवाद

जनसंदेश टाइम्स

जैविक खेती को प्राथमिकता दें गंगातट के किसान

पूर्वांचल के सब्जी उत्पादकों-निर्यातकों के साथ आईआईवीआर में संपर्क गोष्ठी का आयोजन

हिन्दुस्तान

जैविक सब्जी उत्पादन से बढ़ेगी आय

खेती-बाड़ी

पूर्वांचल में सब्जी उत्पादन एवं निर्यात की अपार संभावनाएं

बौद्धिक संपदा संरक्षण पर मंथन करते कृषि वैज्ञानिक। छाया : आज

बौद्धिक संपदा संरक्षण से कृषि अनुसंधान को मिलेगी नयी दिशा

किसानों को मिलेगा लाभ

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान में गया अंतरराष्ट्रीय पादप स्वास्थ्य

लखनऊ | शनिवार | 04 मई 2024
जनमोर्चा 05

बिहार में सब्जी की खेती में क्रान्ति लाएगा वाराणसी का आईवीआरआई

वाराणसी, संवाददाता

वाराणसी स्थित भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान नई नई किश्म की सब्जियों के अनुसन्धान एवं विकास में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।संस्थान के प्रयास से हजारों किसानों की जिंदगी में खुशहाली आयी है और आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त हुआ है। यह संस्थान उत्तर प्रदेश ही नहीं बल्कि अन्य राज्यों के सब्जी उत्पादकों, राज्य सरकार की सम्बधित इकाइयों को भी नि:शुल्क प्रशिक्षण एवं परामर्श के साथ साथ निशुल्क बीज एवं तकनीकी सहयोग भी प्रदान करता है।

इसी कड़ी में संस्थान ने 3मई,2024 को बिहार सरकार द्वारा प्रायोजित सहकारी संस्था वेजफेड के प्रतिनिधियों के साथ समन्वय बैठक का आयोजन किया। इस बैठक का उद्देश्य बिहार में टमाटर की खेती एवं सब्जियों के प्रसंस्करण को बढ़ावा देने के साथ-साथ सब्जी बीज उत्पादन, मूल्य संवर्धन में क्षमता निर्माण करना है।

बिहार राज्य में सब्जी उत्पादकों के लिए सहकारी संस्थाओं का गठन किया गया है, जिसकी शीर्ष संस्था वेजफेड है। वेजफेड के माध्यम से बिहार सरकार राज्य के सब्जी उत्पादक किसानों को सब्जी उत्पादन एवं विपणन में सभी प्रकार के आवश्यक सहयोग प्रदान करती है तथा इससे राज्य के लगभग 40000 किसान जुड़े हुए है। संस्थान के प्रयास से बिहार में सब्जी की खेती में क्रांति की शुरुआत होगी।

बैठक में बिहार में वेजफेड से जुड़े किसानों को टमाटर एवं अन्य सब्जियों के गुणवत्ता पूर्ण बीज एवं पौध उपलब्ध कराने, प्रसंस्करण हेतु उपयुक्त किस्मों के चुनाव, सब्जी किसानों के प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण पर व्यापक चर्चा हुई। निदेशक डॉ बेहेरा ने हाई टेक नर्सरी के माध्यम से पौध उपलब्धता एवं प्रशिक्षण के

लिए संस्थान द्वारा पूर्ण सहयोग करने का आश्वासन दिया। प्रतिनिधियों द्वारा संस्थान द्वारा विकसित हरी मिर्च के पाउडर, मशरुम उत्पादन, जैव नियंत्रक उत्पादन को अपनाने हेतु विशेषकर रूचि प्रकट की गयी। इसके उपरांत वेजफेड के ... ने संस्थान के प्रायोगि... प्रयोगशालाओं का भी ...

समाचार सार

डा. राजेश कुमार को कृषि विज्ञान की फेलोशिप

नई दिल्ली में आइआइवीआर के विज्ञानी डा. राजेश कुमार राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी की फेलोशिप ग्रहण करते ● जागरण

वाराणसी : शहंशाहपुर स्थित भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान के अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना (सब्जी फसल) के समन्वयक डा. राजेश कुमार को नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी की वर्ष 2024 की प्रतिष्ठित फेलोशिप से सम्मानित किया गया। यह फेलोशिप उन्हें सब्जी अनुसंधान में उनके उत्कृष्ट कार्यों एवं महत्वपूर्ण योगदान के लिए दी गई है। वाराणसी में जन्मे डा. कुमार ने अपने करियर की शुरुआत 1999 में आइसीएआर-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में विज्ञानी पद से की थी। उन्होंने विशिष्ट गुणों वाली सब्जियों की 14 किस्मों, संकर किस्मों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। (जासं)

सब्जी उत्पादन में भविष्योन्मुखी प्रौद्योगिकियों की तलाश करें वैज्ञानिक

➤कीटनाशक विश्लेषण से गुणवत्तापूर्ण सब्जी फसल उत्पादन को बढ़ावा

➤विदेशी बाजार में एक्सपोर्ट गुणवत्ता हेतु फसलों में कीटनाशकों की निगरानी अतिआवश्यक

भारतीय सब्जी अनुसंधान केंद्र में पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम 'सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीकी एवं प्रसंस्करण' का हुआ शुभारम्भ

रोहनिया (वाराणसी)

4 वाराणसी
वाराणसी। बृहस्पतिवार • 20 जून
सहारा | www.rashtriyasa

आईआईवीआर में मिर्च के उत्पादन व प्रसंस्करण पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

तीखी हरी मिर्च देगी पूर्वांचल के किसानों को आर्थिक मिठास

बदलते पर्यावरणीय परिवेश में अल्पदोहित सब्जियों की खेती पर जोर

आईआईवीआर स्थित राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी के वाराणसी चैप्टर ने किसानों को किया जागरूक

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

आजादी का अमृत महोत्सव

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बैग नं. 01 जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)
फोन : 91-542-2635236, 2635237, 2635247 फैक्स : 91-5443-229007
ई–मेल : director.iivr@icar.gov.in वेबसाइट : https://iivr.icar.gov.in/

Graphic Arts : 9838106730